इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

MSK 001
संस्कृत साहित्यशास्त्र एवं साहित्य

खंड

5

मृच्छकटिक – शूद्रक

इकाई 21

शूद्रक एवं उनका मृच्छकटिक

इकाई 22

मृच्छकटिक – प्रथम एवं द्वितीय अंक

इकाई 23

मृच्छकटिक – तृतीय एवं चतुर्थ अंक

इकाई 24

मृच्छकटिक – पंचम एवं षष्ठ अंक

इकाई 25

मृच्छकटिक – सप्तम एवं अष्टम अंक

इकाई 26

मृच्छकटिक – नवम एवं दशम अंक

खण्ड 5 का परिचय

MSK-001 'संस्कृत साहित्यशास्त्र एवं साहित्य' पाठ्यक्रम का यह पंचम खण्ड है। इस खण्ड में आप शूद्रक कवि प्रणीत मृच्छकटिक प्रकरण का अध्ययन करेंगे। पाठ्यक्रम के इस खण्ड में छः इकाइयाँ हैं। इस प्रकरण रूपक में शूद्रक कवि ने तत्कालीन समाज के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक परिवेश का सजीव चित्रण किया है। एक ओर चारुदत्त, विदूषक, धूता जैसे पात्रों का चित्रण है तो दूसरी ओर शकार, विट, चेट जैसे पात्रों का भी वर्णन प्राप्त होता है।

मृच्छकटिक प्रकरण के इस खण्ड की 21वीं इकाई में आप शूद्रक एवं मृच्छकटिक प्रकरण का परिचय प्राप्त करेंगे। इस प्रकरण में 10 अंक हैं जिनके चयनित श्लोकों का आप इकाई सं. 22, 23, 24, 25 और 26 में अध्ययन करेंगे।

आशा है कि मृच्छकटिक प्रकरण का यह खण्ड आपके लिए उपयोगी होगा।

इकाई 21 शूद्रक एवं उनका मृच्छकटिक

इकाई की रूपरेखा

21.0 उद्देश्य

21.1 प्रस्तावना

21.2 महाकवि शूद्रक का परिचय

21.3 मृच्छकटिकम् प्रकरण का परिचय

- 21.3.1 नामकरण की सार्थकता
- 21.3.2 मृच्छकटिकम् प्रकरण की कथावस्तु
- 21.3.3 मृच्छकटिकम् में वर्णित देश की अवस्था
- 21.3.4 मृच्छकटिकम् का रस विवेचन तथा काव्य सौन्दर्य

21.4 मृच्छकटिकम् प्रकरण के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

- 21.4.1 चारुदत्त का चरित्र-चित्रण
- 21.4.2 वसन्तसेना का चरित्र-चित्रण
- 21.4.3 शकार का चरित्र-चित्रण
- 21.4.4 मदनिका का चरित्र-चित्रण
- 21.4.5 विदूषक का चरित्र-चित्रण

21.5 सारांश

21.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

21.7 अभ्यास प्रश्न

21.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- शूद्रक कवि का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- मृच्कटिक प्रकरण की कथावस्तु से परिचित होंगे।
- तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- मृच्छकटिक के प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

21.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! 'संस्कृत साहित्यशास्त्र एवं साहित्य' के पाठ्यक्रम के इस खण्ड में आप 'मृच्छकटिक' प्रकरण का अध्ययन करेंगे। प्रकरण के प्रणेता शूद्रक कवि के जीवन के विषय में कोई ठोंस जानकारी नहीं प्राप्त होती है। मृच्छकटिक प्रकरण की कथावस्तु कविकल्पित है तथा इसका प्रधान रस श्रृंगार है। श्रृंगार के अतिरिक्त वीर, अद्‌भुत, करुण आदि रसों का प्रयोग भी यत्र-तत्र किया गया है। इस प्रकरण के दस अंकों में मुख्य रूप से चारुदत्त और वसन्तसेना की प्रणय कथा निबद्ध की गई है। इसमें तत्कालीन समाज की सामाजिक, राजनतिक, धार्मिक आदि विविध अवस्थाओं का भी कवि ने यथार्थ चित्रण किया है।

भाषा-भाव एवं शैली की दृष्टि के यह सर्वोत्कृष्ट है। कवि ने प्राकृतों के प्रयोग में अपना कौशल दिखाया है। इस इकाई में आप मृच्छकटिक प्रकरण के प्रमुख पात्रों यथा चारुदत्त, विदूषक, वसन्तसेना आदि की चारित्रक विशेषताओं का भी अध्ययन करेंगे।

21.2 महाकवि शूद्रक का परिचय

यद्यपि 'मृच्छकटिक' के रचनाकार के विषय में विद्वानों का एकमत नहीं है तथापि इसकी प्रस्तावना में राजा शूद्रक को इस ग्रन्थरत्न का प्रणेता बताया गया है। कुछ विद्वान् ऐतिहासिक प्रस्तावना में जो कुछ कहा गया है उस पर विश्वास नहीं करते। वे राजा शूद्रक को कल्पित व्यक्ति के रूप में स्वीकार करते हैं। कुछ ऐसे भी विद्वान् हैं जो राजा शूद्रक को इतिहासप्रसिद्ध होने के साथ-साथ 'मृच्छकटिक' का रचयिता भी मानते है। विद्वानों की ये सभी कल्पनायें किसी निश्चित प्रमाण के अभाव के कारण ही दृष्टि पथ में आती हैं। कतिपय इतिहासकार महाकवि शूद्रक को इतिहासप्रसिद्ध स्वीकार करते हैं किन्तु 'मृच्छकटिक' का प्रणेता नहीं मानते। किसी राजा शूद्रक का उल्लेख 'स्कन्दपुराण' के कुमारिका खण्ड में प्राप्त होता है, कुछ विद्वान् इन्हें ही 'मृच्छकटिक' का कर्ता मानते हैं। प्रो. कोनो का मानना है कि आभीर वंश के राजा शिवदत्त का ही दूसरा नाम शूद्रक था।

डा. देवस्थली कहते हैं कि, हमारा इतिहास ज्ञानपूर्ण न होने के कारण शूद्रक के विषय में कुछ कहने में असमर्थ है। श्री पिशेल महोदय ने तो 'मृच्छकटिक' का प्रणेता महाकवि दण्डी को माना है, इनका कहना है कि दण्डी की तीन रचनायें हैं, उनमें से 'काव्यादर्श' एवं 'दशकुमारचरित' ये ग्रन्थ प्राप्त हैं तृतीय ग्रन्थ प्राप्त नहीं है अतः दण्डी की तृतीय रचना 'मृच्छकटिक' है। इस प्रकार विभिन्न मतमतान्तर 'मृच्छकटिक' के रचयिता के विषय में प्राप्त होते हैं किन्तु 'मृच्छकटिक' के प्रणेता के जीवन सम्बन्धी बहुत सारी बातें इस ग्रन्थ के अलोडनोपरान्त प्राप्त होती हैं। रचनाकार निश्चयेन दाक्षिणात्य प्रतीत होता है, कवि मृच्छकटिक के दूसरे अंक में 'खुण्टमोडक' शब्द का प्रयोग करता है। कर्णपूरक मुखात् बसन्तसेना से कही गयी पंक्ति द्रष्टव्य है– **'श्रृणोत्वार्या। यः स आर्यायाः खुण्टमोडको नाम दुष्टहस्ती।'** षष्ठ अंक में कवि ने वीरक और चन्दनक की लड़ाई के अवसर पर 'दाक्षिणात्य' एवं 'कर्नाटकलहादि' शब्दों का प्रयोग किया है ''वयं दाक्षिणात्या अव्यक्तभाषिणः'' आगे का कथन है– 'तत्कोऽत्रोपायः (विचिन्त्य) कर्नाटकलहप्रयोगं करोमि।' इन प्रमाणों के आधार पर 'मृच्छकटिक' का दाक्षिणात्य होना सिद्ध होता है। संस्कृत साहित्य में मध्यम वर्ग के पात्रों को लेकर लिखे जाने वाले

रूपक मृच्छकटिक के रचयिता शूद्रक के विषय में ग्रन्थ के आरम्भ में ही कतिपय श्लोक प्राप्त होते हैं, जिससे ज्ञात होता है कि कवि विविध वेदों तथा विद्याओं और कलाओं में निष्णात हैं –

ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षाम्,

ज्ञात्वा शर्वप्रसादात् व्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य।

राजानं वीक्ष्यपुत्रं परमसमुदयेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा,

लब्ध्वा चायुः शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रोकोऽग्निं प्रविष्टः।।1/4।।

प्रकृत श्लोक में 'बभूव' तथा 'प्रविष्टः' दो भूतकालिक क्रियायें देखकर यह जिज्ञासा होती है कि अग्नि में प्रविष्ट हो जाने के बाद और परोक्षभूत में होने वाले राजा ने इस ग्रन्थ का प्रणयन कैसे किया? इस जिज्ञासा के समाधान में कीथ का मत है कि किसी अज्ञात कवि रौमिल अथवा सौमिल्ल या दोनों ने महाकवि भास के नाटक 'चारुदत्त' को परिष्कृत एवं संवर्धित कर इस ग्रन्थ का नाम 'मृच्छकटिक' रख दिया तथा वहाँ के राजा शूद्रक के नाम से प्रसारित कर दिया, जिसे कालान्तर में शूद्रक की रचना के रूप में विद्वत् समाज ने स्वीकार कर लिया। विक्रमादित्य की भाँति राजा शूद्रक की भी चर्चा बहुधा प्राप्त होती है– 'कादम्बरी' में विदिशाधिपति, कथासरित्सागर में तथा 'बेतालपञ्चविंशति' में वर्धमान नामक नगर में शूद्रक के शासन का उल्लेख प्राप्त है, वहीं 'हर्षचरित' में चकोर के राजा चन्द्रकेतु का शत्रु शूद्रक था। इस प्रकार अनेक स्थानों पर शूद्रक की चर्चा होने के कारण विद्वानों में मतैक्य नहीं है।

कालनिर्णय– यह सर्वविदित है कि संस्कृत साहित्य सर्वथा श्रेष्ठ एवं विपुल है किन्तु महती विडम्बना है कि अनेकानेक कवियों एवं नाटककारों के विषय में कोई ऐसा प्रामाणिक साक्ष्य प्राप्त नहीं होता जिसके आधार पर मुक्त कण्ठ से कहा जा सके कि इस कवि अथवा ग्रन्थ का यह निश्चित काल है। संस्कृत के अन्य कवियों एवं नाटककारों की भाँति महाकवि शूद्रक के काल के सन्दर्भ में मतवैभिन्न्य है। बिना किसी सन्देह के यह कहा जा सकता है कि 'मृच्छकटिक' की कथावस्तु का मूल आधार महाकवि भास प्रणीत नाटक 'चारुदत्त' है। अतः शूद्रक भास के बाद के ही कवि हैं। भास का काल दूसरी या तीसरी शती ई.पू. मान्य है, अतः इसके बाद का काल शूद्रक का होगा। दूसरी ओर वामनाचार्य (8वीं शताब्दी) तथा इनके पूर्ववर्ती आचार्यदण्डी (7वीं शताब्दी) के क्रमशः 'काव्यालंकारसूत्रवृत्तिः' और 'काव्यादर्श' में क्रमानुसार 'द्यूतं हि नाम पुरुषस्य सिंहासनं राज्यम्' साथ ही **'लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः'** इत्यादि पद्य मृच्छकटिक से ही उद्धृत हैं। इस प्रमाण के आधार पर 'मृच्छकटिक' का रचना-काल सप्तम शताब्दी से पहले का जान पड़ता है।

इस ग्रन्थ के कालनिर्धारण में 'मृच्छकटिक' के अन्तःसाक्ष्यों से भी सहायता मिलती है। नवम अंक में चारुदत्त को हत्या के अभियोग में दण्ड सुनाते हुए धर्माधिकारी मनु की दण्डव्यवस्था का निरूपण करता है–

अयं हि पातकी विप्रो न वध्यो मनुरब्रवीत्।

राष्ट्रादस्मात्तु निर्वास्यो विभवैरक्षतैः सह।। (मृच्छकटिक 9/39)

मनुस्मृति में प्राप्त श्लोक निम्नवत् है–

न जातु ब्राह्मणं हन्यात् सर्वपापेष्वपि स्थितम्।

राष्ट्रादेनं वहिः कुर्यात् समग्रधनमक्षतम्।। (मनुस्मृति 8/380)

इस दण्डाभिधान के कारण ही अपराधी होने पर भी चारुदत्त को फाँसी की सजा नहीं दी जाती क्योंकि वह ब्राह्मण है। किन्तु धन-सम्पत्ति के साथ देश से निकल जाने का दण्ड उसे दिया जाता है। अतः आचार्य मनु के पश्चात् मृच्छकटिक का काल है, यह सुनिश्चित है। मृच्छकटिक के नवम अंक में कवि ने बृहस्पति को अंगारक (मंगल) का विरोधी ग्रह बताया है। यथा–

अंगारकविरुद्धस्य प्रक्षीणस्य बृहस्पतेः।

ग्रहोऽयमपरः पार्श्वे धूमकेतुरिवोत्थितः।। (मृच्छकटिक 9/33)

आचार्य वराहमिहिर ने इन दोनों ग्रहों को मित्र माना है, वर्तमान समय में भी यही मान्यता है। वराहमिहिर की मृत्यु 589 ई. में हुई थी, इसके अनुसार मृच्छकटिक को 5वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध अथवा 6वीं शती के पूर्वार्द्ध की रचना मानना तर्कसंगत है।

21.3 मृच्छकटिकम् प्रकरण का परिचय

21.3.1 नामकरण की सार्थकता

संस्कृत साहित्य प्रणयन परम्परा में साहित्यिकों की दृष्टि ग्रन्थ के नामों में सार्थकता मानती है। आचार्य क्षेमेन्द्र ने अपनी रचना 'औचित्यविचारचर्चा' में नामौचित्य के सम्बन्ध में कहा है– "**नाम्ना कर्मानुरूपेण ज्ञायते गुणदोषयोः**" यह सर्वथा अनुभूत है कि प्रस्तुत अर्थ के अनुरूप नामकरण के श्रवण मात्र से ही सहृदय के हृदय में आनन्द उमड़ पड़ता है। साथ प्रकृत अर्थ के अनुकूल नाम चुनने में कवि की कुशाग्रबुद्धि एवं कला परिलक्षित होती है। नाटक का नामकरण गर्भित अर्थ का प्रकाशक होना चाहिए, इस विषय में महापात्र विश्वनाथ अपना मन्तव्य प्रस्तुत करते हैं– "**नामकार्यं नाटकस्य गर्भितार्थप्रकाशकम्।**"

मृच्छकटिक के छठवें अंक में रदनिका खेलने के लिए रोहसेन को मिट्टी की गाड़ी देती है। रोहसेन उस मिट्टी की गाड़ी से खेलने से मना करता है। पड़ोस के घर में सोने की गाड़ी देखा है वैसी ही चाहता है। स्वर्णमयी गाड़ी न मिलने पर वह रोने बिलखने लगता है। वसन्तसेना को जब रोहसेन के क्रन्दन का कारण मालूम होता है तो वह अपना स्वर्णाभूषण उतारकर गाड़ी बनाने के लिए उसे देती है। इस घटना में मिट्टी की गाड़ी का जो वृतान्त है, उस पर ही इस ग्रन्थ का नाम "मृच्छकटिक" रखा गया है।

21.3.2 मृच्छकटिकम् प्रकरण की कथावस्तु

महाकवि शूद्रक के द्वारा विरचित 'मृच्छकटिक' 10 अंकों का एक प्रकरण है। इस प्रकरण में नायक चारुदत्त तथा गणिका वसन्तसेना के प्रेम की कथा विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों के साथ वर्णित हुई है। तत्कालीन समाज के चित्रण में कवि की लेखनी प्रत्येक मर्मों का स्पर्श करती हुई सी दिखती है। भारतीय नाट्य परम्परा के अनुसार मृच्छकटिक नामक प्रकरण का आरम्भ नान्दीपाठ के माध्यम से होता है। कवि दो श्लोकों के माध्यम से सुधि सामाजिकों की मंगल कामना करता है। महाकवि शूद्रक ने अपनी विलक्षण प्रतिभा से इस ग्रन्थ की कथावस्तु का संक्षिप्त विवरण प्रस्तावना में ही सूत्रधार मुखात् प्रस्तुत कर दिया है।

अध्येताओं को मृच्छकटिक की कथावस्तु का ज्ञान सुगमतया प्राप्त हो इस निमित्त अंकों की संक्षिप्त कथावस्तु निम्नवत् है–

प्रथम अंक– कथावस्तु के अनुसार प्रत्येक अंक का नामकरण हुआ है। प्रथम अंक का नाम **'अलंकारन्यास'** के नाम से अभिहित है।

नान्दीपाठ एवं प्रस्तावना के पश्चात् सूत्रधार अपने घर में असाधारण तैयारी देख चकित हो जाता है। पूछने पर नटी उसे बताती है कि 'अभिरूपपति' नामक व्रत की समाप्ति के बाद ब्राह्मण को भोजन कराने की वह तैयारी कर रही है। पहले तो सूत्रधार दुःखी होता है, बाद में नटी के समझाने पर भोजन हेतु किसी ब्राह्मण को निमन्त्रण देने घर से बाहर निकलता है, अचानक उसे मैत्रेय दिखाई देता है, वह उसे निमन्त्रित करता है, किन्तु मैत्रेय (विदूषक) भोजन के लिए तैयार नहीं होता है। सूत्रधार उत्तम भोजन एवं प्रचुर दक्षिणा का प्रलोभन देता है, फिर भी मैत्रेय भोजन करने से इन्कार कर देता है। इसके बाद सूत्रधार दूसरा ब्राह्मण खोजने चला जाता है यहीं प्रस्तावना समाप्त हो जाती है।

प्रथम अंक के प्रथम दृश्य के आरम्भ में मैत्रेय मंच पर आता है। मैत्रेय के कथन से पता चलता है कि आर्य चारुदत्त के प्रिय मित्र जूर्णवृद्ध ने 'जातीकुसुमवासित' (चमेली के पुष्पों से सुगन्धित) उत्तरीय देकर चारुदत्त के घर ले जाने का उसे निर्देश दिया है। उसी समय चारुदत्त और रदनिका का मंच पर प्रवेश होता है। मैत्रेय दुपट्टा को लेकर चारुदत्त के घर जाता है, चारुदत्त उसका स्वागत करता है। चारुदत्त मातृबलि अर्पित करने के लिए मैत्रेय (विदूषक) को चौराहे पर जाने को कहता है, विदूषक रात में अकेले जाने से डरता है। चारुदत्त अपनी परिचारिका रदनिका को सूत्रधार के साथ भेजता है।

प्रथम अंक के द्वितीय दृश्य में शकार, विट और चेट वसन्तसेना का पीछा करते हुए मंच पर दिखाई देते है। शकार के कथन से वसन्तसेना को पता चल जाता है कि पास में ही आर्य चारुदत्त का घर है। शकार से बचने के लिए बड़े कौशल से वसन्तसेना चारुदत्त के घर में प्रवेश करती है। उधर बाहर निकलते ही शकार वसन्तसेना समझकर अंधेरे में रदनिका को पकड़ लेता है। वह विरोध करती है। इतने में विदूषक दीप लेकर वहाँ आ जाता है तथा रदनिका के साथ अभद्र व्यवहार देखकर शकार को डाँट डपट कर भगा देता है। विट विदूषक को पहचान लेता है और अनुरोध करता है कि इस घटना को आर्य चारुदत्त से न कहें।

प्रथम अंक के तृतीय दृश्य में चारुदत्त वसन्तसेना को रदनिका समझ कर अपने पुत्र रोहसेन को अन्दर ले जाने को कहता है। साथ ही अपना जाती कुसुमवासित दुपट्टा रोहसेन को ओढ़ाने के लिए वसन्तसेना के पास फेंकता है। वसन्तसेना चुपचाप खड़ी रहती है कोई प्रतिक्रिया नहीं करती है। प्रथम अंक के चतुर्थ दृश्य में बलिविसर्जन के पश्चात् विदूषक और रदनिका घर के अन्दर आते है तब चारुदत्त वसन्तसेना को पहचानता है। विदूषक रदनिका के साथ घटी घटना को छोड़कर सम्पूर्ण वृत्तान्त चारुदत्त को बताता है। वसन्तसेना अपने घर जाना चाहती है लेकिन इससे पूर्व अपना आभूषण वह चारुदत्त के यहाँ धरोहर के रूप में रखना चाहती है। चारुदत्त की स्वीकृति के पश्चात् अपना आभूषण उसी के घर में रख देती है। मैत्रेय वसन्तसेना को उसके घर छोड़ आता है तथा धरोहर के रूप में रखे आभूषणों की रक्षा का भार दिन में वर्धमानक को तथा रात में विदूषक को देता है।

द्वितीय अंक– द्वितीय अंक ''द्यूतकर-संवाहक'' अंक अर्थात् जुआरी संवाहक अंक है। इस अंक में एक नये प्रमुख पात्र संवाहक की अवतारणा कराई गई है।

इस अंक में तीन दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में वसन्तसेना और मदनिका का मंच पर प्रवेश दिखलाया गया है। वसन्तसेना चारुदत्त के विषय में चिन्तामग्न दिखाई गई है। मदनिका विस्वस्त दासी होने के नाते उससे उदासी व उद्विग्नता का कारण पूछती है। वसन्तसेना चारुदत्त के सम्बन्ध में अपना प्रेम व्यक्त करती है। मदनिका चारुदत्त की निर्धनता की ओर उसका ध्यान आकर्षित करती है परन्तु वसन्तसेना का कथन है कि 'वह यह जानते हुये कि वह अत्यन्त दरिद्र है, उसे प्यार करती है क्योंकि दरिद्र व्यक्ति से प्रेम करने वाली गणिका की दुनिया निन्दा नहीं करती।' द्वितीय दृश्य में हम रंगमंच पर संवाहक, द्यूताध्यक्ष, माथुर तथा एक जुआरी को एक साथ देखते हैं। उनके वार्तालाप से यह ज्ञात होता है कि संवाहक जुएं में माथुर से पराजित हो गया है और उसे माथुर को दस सुवर्ण देने हैं। द्यूतकार और माथुर उसे पकड़ने के लिए उसका पीछा करते हैं। पहले तो वह एक देवी के मन्दिर में छिप जाता है किन्तु अपने द्यूतप्रिय स्वभाव के कारण उन दोनों के वहीं खिलने पर स्वयं ही प्रकट हो जाता है। वे दोनों ही उसे मारते हैं। संवाहक त्रस्त होकर रक्षा की पुकार करता है। इसी बीच दर्दुरक वहाँ आता है। वह संवाहक को छुड़ाता है। माथुर और दर्दुरक में झगड़ा होता है। अवसर पाकर दर्दुरक माथुर की आँख में धूल झोंक देता है। माथुर आँखें मलने लगता है। दर्दुरक और संवाहक भाग जाते है।

संवाहक वहाँ से भागकर वसन्तसेना के घर में शरण लेता है। वसन्तसेना को अपना परिचय देता है, परिचय के अन्तर्गत चारुदत्त का प्रसङ्ग भी आता है जिसे सुनकर वसन्तसेना बड़ी प्रसन्न होती है। वह संवाहक से उसके भय का कारण पूछती है और रुपयों के बदले अपना कंकण चेटी द्वारा माथुर व द्यूतकार के पास पहुंचा देती है। वे दोनों सन्तुष्ट होकर चले जाते हैं।

अंक के अन्तिम भाग में कर्णपूरक वसन्तसेना को उसके मतवाले हाथी के उत्पात और परिव्राजक को बचाने के लिए अपने पराक्रम का वृत्तान्त सुनाता है। साथ ही वह यह भी

सूचना देता है कि उसके अद्भुत साहस से मुग्ध होकर किसी व्यक्ति ने पुरस्कार के रूप में अपना उत्तरीय दिया है। वसन्तसेना उस पर 'चारुदत्त' का नाम देखकर प्रसन्न होती है तथा उसे ओढ़ लेती है। वह कर्णपूरक को अपने एक आभूषण से पुरस्कृत करती है। इसके बाद वसन्तसेना तथा चेटी दोनों द्वार पर के आलिन्द से चढ़कर घर जाते हुए चारुदत्त को देखने लगती हैं। यहीं पर अंक की समाप्ति हो जाती है।

तृतीय अंक– तृतीय अंक के प्रथम दृश्य में (चारुदत्त का) चेट मंच पर जाता है। मध्यरात्रि का समय है। अभी तक चारुदत्त घर नहीं लौटा है। अतः चेट चिन्ता व्यक्त करता है।

तृतीय अंक के द्वितीय दृश्य में चारुदत्त और विदूषक मंच पर आते हैं। वे रेभिल के घर से गीत सुनकर लौटते हुए दिखाई देते हैं। चारुदत्त संगीत की तारीफ करते जाता है। घर पहुँचकर विदूषक चेट को पुकारता है। चेट दरवाजा खोलता है। चारुदत्त और विदूषक भीतर जाते हैं। दोनों पैर धोकर सोने की तैयारी करते हैं। रात को सुवर्णभाण्ड की रक्षा का भार विदूषक पर होने के कारण चेट विदूषक को सुवर्णभाण्ड देता है। चारुदत्त सो जाता है। विदूषक कभी सुवर्णभाण्ड हाथ में लिए हुए सो जाता है।

तृतीय अंक के तृतीय दृश्य में शर्विलक प्रवेश करता है। वह सेंध लगाकर चारुदत्त के घर में घुसता है। विदूषक निद्रा में बर्राता है। चोरी जाने के भय से वह स्वप्न में ही चारुदत्त को पुकार कर स्वर्णभाण्ड देता है। शर्विलक आगे बढ़कर उसके हाथ से ले लेता है। इतने में रदनिका जागती है। शर्विलक भाग जाता है। शर्विलक यह चोरी वसन्तसेना की दासीम दनिका के प्रेम में फंसकर उसे दास्य से मुक्त करने के लिये करता है।

तृतीय अंक के चतुर्थ दृश्य में रदनिका शोर मचाती है। चारुदत्त और विदूषक जागते हैं। चारुदत्त सेंध के आकार की तारीफ करता है। विदूषक उससे कहता है कि अच्छा हुआ मैंने पहिले ही सुवर्णभाण्ड तुम्हें दे दिया था। यह सुनकर चारुदत्त चकित होता है, परन्तु प्रतिवाद नहीं करता। उसे इस बात की खुशी होती है कि चोर उसके घर से निराश नहीं गया परन्तु उसे इस बात की चिन्ता भी होती है कि लोग चोरी के वृत्तान्त पर विश्वास न करके उसे ही बदनाम करेंगे। इस बीच चारुदत्त की भार्या धूता को यह वृत्तान्त मालूम होता है। वह अपने पति को कलंक से बचाने के लिए अपनी रत्नमाला देने के लिये विदूषक को वसन्तसेना के घर भेजती है। वह वर्धमानक को सेंध बन्द करने का आदेश देकर स्वयं सन्ध्योपासन करने चला जाता है।

चतुर्थ अंक– इस अंक का शीर्षक ''मदनिका-शर्विलक'' है। इसमें दोनों के प्रणय का चित्रण हुआ है। शर्विलक चुराये गये आभूषणों को मदनिका को देता है। मदनिका उन आभूषणों को चतुराई से वसन्तसेना को दिला देती है। परन्तु वसन्तसेना सम्पूर्ण रहस्य को समझ जाती है। वह अतीव उदारतापूर्ण भाव से शर्विलक से अनुरोध करती है कि वह मदनिका को पत्नी भाव से ग्रहण करे क्योंकि आर्य चारुदत्त का निर्देश है कि जो कोई उस आभूषण को लाकर दे उसे मदनिका समर्पित कर दी जाए। अन्ततः वह दोनों को अपनी गाड़ी में बैठाकर विदा करती है।

अंक के अन्तिम दृश्य में विदूषक मैत्रेय का वसन्तसेना के यहाँ पहुँचना व उसके भव्य प्रासाद को देखकर आश्चर्यान्वित होना प्रस्तुत किया गया है। तदुपरान्त वसन्तसेना विदूषक का स्वागत करती है। सामान्य कुशल प्रश्न के बाद विदूषक चारुदत्त द्वारा कहे गये सुवर्णभाण्ड को जुएं में हारने सम्बन्धित सन्देश सुनाता है तथा उसके बदले में भेजी गई रत्नावली उसे प्रदान करता है। वसन्तसेना उसे लेकर मैत्रेय को चारुदत्त से मिलने, सम्बन्धित सन्देश के साथ विदा करती है।

पञ्चम अंक– पञ्चम अंक का नाम दुर्दिन है। इस अंक के प्रथम दृश्य में विदूषक चारुदत्त के पास आकर उसे वसन्तसेना द्वारा सवर्णभाण्ड के बदले रत्नावली स्वीकार किये जाने तथा सायं काल उसके स्वयं चारुदत्त से मिलने आने का समाचार देता है।

पञ्चम अंक के द्वितीय दृश्य में वसन्तसेना का चेट आकर चारुदत्त को वसन्तसेना के आने की सूचना देता है।

पञ्चम अंक के तृतीय दृश्य में विट और वसन्तसेना चारुदत्त के घर जाते हुए दिखाई देते हैं। मार्ग में मेघ बरसता रहता है। विट और वसन्तसेना वर्षा ऋतु का वर्णन करते हुए जाते हैं। जब वे चारुदत्त की वाटिका के पास पहुँचते हैं, चारुदत्त आवाज सुनकर विदूषक को पता लगाने बाहर भेजता है। बाहर आने पर विदूषक की वसन्तसेना से भेंट होती है। वाटिका में प्रवेश करने के पहले वसन्तसेना विट को विदा कर देती है।

पञ्चम अंक के चतुर्थ दृश्य में विदूषक और वसन्तसेना वाटिका में प्रवेश करते हैं। चारुदत्त वसन्तसेना का स्वागत करता है। विदूषक वसन्तसेना से आगमन का कारण पूछता है। वसन्तसेना की चेटी कहती है कि हमारी मालकिन यह पूछने आई हैं कि आपकी रत्नावली का मूल्य क्या है। वह उसे अपनी समझ कर जुएं में हार गई हैं। उसके बदले यह सवर्णभाण्ड लीजिये। यह कह कर वह सवर्णभाण्ड देती है। चारुदत्त और विदूषक उसे देखकर आश्चर्य में पड़ जाते हैं। इसके बाद चेटी सुवर्णभाण्ड की प्राप्ति का सारा वृत्तान्त विदूषक के कान में कह देती है। विदूषक चारुदत्त को सब बता देता है। सब लोग आनन्द मग्न ही जाते हैं। अन्त में चारुदत्त और वसन्तसेना घर में चले जाते हैं। वसन्तसेना रात में चारुदत्त के ही घर रह जाती है।

षष्ठ अंक – षष्ठ अंक के प्रथम दृश्य में चारुदत्त पुष्करण्डक नामक बगीचे मे चला जाता है और जाते समय वहीं वसन्तसेना से मिलने को कहलवा कर जाता ह‍ै। वसन्तसेना प्रसन्न हो जाती है। वह चेटी के हाथ रत्नावली धूता के पास भेजती है। धूता लेने से इन्कार करती हुई उसे वसन्तसेना के पास लौटा देती है।

षष्ठ अंक के द्वितीय दृश्य में रदनिका रोते हुए चारुदत्त के पुत्र को गोद मे लिये हुए वसन्तसेना के पास आती है। वह उसे खेलने के लिये मिट्टी की गाड़ी देती है। वह सोने की गाड़ी के लिये रोता है। वसन्तसेना बच्चे को सोने की गाड़ी बनवाने के लिये अपने गहने उतार कर दे देती है।

षष्ठ अंक के तृतीय दृश्य में वसन्तसेना अपने लिए भेजी गयी गाड़ी में न बैठकर भूल से दूसरी गाड़ी में बैठ जाती है, जो शकार की है इसी दृश्य में गोपालदारक आर्यक कैदखाने से भागकर आता है वह चारुदत्त की खाली गाड़ी में बैठ जाता है गाड़ीवान उसे वसन्तसेना समझकर गाड़ी हांक देता है।

षष्ठ अंक के चतुर्थ दृश्य में रास्ते में चन्दनक और वीरक उस गाड़ी को देखना चाहते हैं। चन्दनक उसे देखने जाता है और पहचानकर अभय देता है इधर वीरक भी गाड़ी को देखना चाहता है तो चन्दनक उससे झगड़ा कर लेता है।

सप्तम अङ्क – इस अंक में चारुदत्त मैत्रेय के साथ वसन्तसेना के आगमन की प्रतीक्षा करता है। इतने में गाड़ी आती है। विदूषक पर्दा हटाकर देखता है। वह चिल्लाकर किसी पुरुष के होने की सूचना देता है। चारुदत्त स्वयं देखता है। आर्यक शरण माँगता है। चारूदत्त उसे अभयदान देता है और बन्धन कटवाकर उसे विदा कर देता है।

अष्टम अङ्क – इस अंक के प्रथम दृश्य में शकार चीवर लिये हुए भिक्षु को अकारण पीटता है। विट उसे बचाता है। संन्यासी अवसर पाकर वहाँ से निकल जाता है। शकार, विट, स्थावरक, चेट की प्रतीक्षा मे वहीं रहते हैं।

द्वितीय दृश्य में वसन्तसेना बैलगाड़ी से उद्यान मे पहुंचती है। वहाँ शकार को देखकर वह सहम जाती है। शकार बहाने बनाकर विट और चेट को वहाँ से हटाता है और स्वयं वसन्तसेना के प्रति प्रेम प्रदर्शित करता है। जब वसन्तसेना उसका प्रेम प्रस्ताव ठुकरा देती है तो वह क्रोधित होकर उसका गला दबाता है। वसन्तसेना मूर्च्छित होकर गिर पडती है।

तृतीय दृश्य में चेट के साथ विट शकार के पास पुनः उपस्थित होता है। विट ने जब शकार से वसन्तसेना के बारे मे पूछा तो उसने वसन्तसेना की मूर्च्छित देह की ओर इशारा करते हुए कहा मैंने इसे मार डाला। यह सुनकर विट को को आन्तरिक पीड़ा हुइ। वह वहाँ से शर्विलक की खोज मे निकल गया। इधर शकार ने चेट को घर भेज दिया और वसन्तसेना की देह को पत्तों से ढक दिया। चारुदत्त के विरुद्ध वसन्तसेना की हत्या का आरोप लगाकर न्यायालय में मुकदमा करने के लिये स्वयं चला गया।

चतुर्थ दृश्य में एक भिक्षु का प्रवेश होता है। यह भिक्षु वही संवाहक है जिसकी सहायता वसन्तसेना ने की थी वसन्तसेना को मृत जानकर वह उसके पास पहुँचता है और उसे होश में लाकर समीप के विहार में ले जाता है।

नवम अङ्क – इस अंक की सम्पूर्ण कथावस्तु का घटना स्थल न्यायालय ही है अङ्क के प्रारम्भ मे न्यायालय का कर्मचारी शोधनक न्यायमण्डप की सफाई करता दिखाई देता है। उसके बाद शकार चारुदत्त के विरुद्ध अभियोग लगाने वाली योजना का वर्णन करते हुए आता है तभी श्रेष्ठी व कायस्थ सहित न्यायाधीश न्यायमण्डप में प्रवेश करते हैं। मुख्य न्यायाधीश व अन्य उपस्थित कर्मचारी शकार के विपरीत हैं तथा चारुदत्त के प्रशंसक हैं।

शकार चारुदत्त पर वसन्तसेना को मारने का अभियोग लगाता है। अधिकरणिक द्वारा पूछे जाने पर वीरक के वक्तव्य से इसकी पुष्टि हो जाती है। विदूषक और शकार मे झड़प हो जाती है, आपस में मारपीट के दौरान विदूषक के बगल से वसन्तसेना के आभूषण पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। शकार उन्हे उठाकर सभी को दिखाता है और कहता है कि इन्हीं के लिये चारुदत्त ने वसन्तसेना को मार डाला है। अधिकरणिक अभियोग को सच मानकर चारुदत्त को मृत्युदण्ड का आदेश देते हैं। यहीं अङ्क समाप्त हो जाता है।

दशम अङ्क – इस अंक का नाम संहार है। इसमें विदूषक और रोहसेन चाण्डालों से चारुदत्त को छोड़ने की प्रार्थना करते हैं। वे कहते हैं कि चारुदत्त के स्थान पर उनका वध कर दें। उधर स्थावरक चाण्डालों से बार-बार कहता है कि वसन्तसेना की हत्या चारुदत्त ने नहीं की अपितु शकार ने की है। शकार जब यह सुनता है तो चाण्डालों को विश्वास दिलाने के लिये स्थावरक को अपना सुवर्णस्तेयी बताकर अपराधी ठहराता है और प्रतिकूल बोलने का यही कारण बताता है। चाण्डाल इसे सच मान लेते हैं इतने में भिक्षु और वसन्तसेना चारुदत्त के प्राणदण्ड की बात को सुन लेते हैं। वे दोनों बड़ी तेजी से वध-स्थान की ओर प्रस्थान करते हैं। उनके वहाँ पहुँचने से पूर्व ही एक चाण्डाल चारुदत्त पर तलवार से प्रहार करता है परन्तु वह सफल नहीं होता। पुनः जैसे ही चाण्डाल चारुदत्त को शूली पर चढ़ाना चाहते हैं भिक्षु और वसन्तसेना वहाँ पहुँच जाते हैं। यह देखकर सभी आश्चर्यचकित हो जाते हैं। चाण्डाल तुरन्त ही यह समाचार राजा को देता है। वसन्तसेना को देखकर शकार वहाँ से भाग जाता है वसन्तसेना और भिक्षु को देखकर चारुदत्त आनन्दित हो उठता है। उसी समय राज्य परिवर्तन भी हो जाता है। पालक के स्थान पर आर्यक राजा हो जाता है। वह चारुदत्त को मुक्ति और शकार को मृत्युदण्ड का आदेश देता है। उदार हृदय चारुदत्त शकार को क्षमा कर देता है।

इधर चन्दनक यह सूचना देता है की धूता सती होने जा रही है। चारुदत्त धूता को सती होने से बचा लेता है। धूता प्रसन्न होकर वसन्तसेना का आलिङ्गन करती है। चारुदत्त और वसन्तसेना का शुभ विवाह हो जाता है। भिक्षु को सभी बौद्धों का कुलपति बना दिया जाता है। स्थावरक को शकार की दासता से मुक्ति दिला दी जाती है। चन्दनक को पृथ्वी दण्डपालक बना दिया जाता है और वध के योग्य शकार को क्षमा करके उसका अधिकार स्थायी रूप से पूर्ववत् रहने दिया जाता है। इस प्रकार भरतवाक्य के साथ प्रकरण समाप्त हो जाता है।

21.3.3 मृच्छकटिकम् में वर्णित देश की अवस्था

मृच्छकटिक की कथावस्तु में जीवन के यथार्थ का चित्रण है। इसमें मध्यम वर्ग, निम्नवर्ग एवं द्यूतवर्ग का प्रसंगानुसार वर्णन प्राप्त होता है। इस प्रकरण में तत्कालीन समाज की सामाजिक एवं राजनीतिक अवस्था के वर्णन के साथ उस समय की प्रचलित धार्मिक मान्यताओं और कलाओं के विषय में भी जानकारी मिलती है।

सामाजिक अवस्था – 'मृच्छकटिक' के समय भारतीय समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन चार भागों में विभक्त था। सभवतः चाण्डालों को पञ्चम वर्ग माना जाता था। ब्राह्मणों का काम अध्ययन-अध्यापन करना था। ये अपने ज्ञान के कारण सर्वश्रेष्ठ माने जाते थे। द्वितीय अंक में मदनिका-वसन्तसेना से पूछती है– 'विद्याविशेषालङ्कृतः किं कोऽपि ब्राह्मणयुवाकाम्यते?' इस पर वसन्तसेना उत्तर देता है 'पूजनीयो मे ब्राह्मणजनः'। यह बात अवश्य है कि उस समय भी सभी ब्राह्मण विद्वान् नहीं होते थे। कुछ ब्राह्मण चोरी आदि दुष्कर्म भी करते थे। शर्विलक इसका प्रमाण है। पौरोहित्य करना और दान दक्षिणा लेना भी ब्राह्मणों का काम था। नटी सूत्रधार से किसी ब्राह्मण को भोजन के लिये निमन्त्रित करने को कहती है। तृतीय अंक में धूता विदूषक को रत्नावली दान देती है। दशम अंक में विदूषक धूता से कहता है– 'समहितसिद्धये ब्राह्मणः अग्रतः कर्तव्यः।' कुछ ब्राह्मण अपने वर्ण का काम छोड़कर व्यापार आदि भी करते थे। चारुदत्त स्वयं इसका निदर्शन है। वह सार्थवाह का पुत्र और स्वयं भी सार्थवाह है। वैश्य व्यापार के सिलसिले में परदेश जाते थे। फांसी देने का कार्य चाण्डालों का माना जाता था। प्राकृत पुरुषों को वेदार्थ कहने का अधिकार नहीं था। यहाँ 'प्राकृत पुरुष' शूद्र का वाचक है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों को तो वेदों का अधिकार अनादिकाल से प्राप्त है। सभ्य पुरुषों के नाम के आगे कोई आदर सूचक शब्द लगाये बिना उन्हें पुकारना अनुचित समझा जाता था।

सम्भवतः 'मृच्छकटिक' के समय नगरों में जाति-जाति के अथवा एक पेशा करने वालों के अलग-अलग मोहल्ले होते थे। द्वितीय अंक में चारुदत्त का परिचय देते हुए संवाहक कहता है– 'स खलु श्रेष्ठि चत्वरे प्रतिवसति।' नगरों में 'राजमार्ग' अर्थात् बड़ी-बड़ी सड़कें होती थीं। रात में सड़कों पर अन्धेरा रहता था। रात में पहरा देने के लिये पहरेदार रखे जाते थे। फिर भी सड़कों पर अन्धेरे में गणिका, विट, चेट आदि घूमते थे। दुर्बलों के लिये रात को सड़कों पर निकलना खतरनाक समझा जाता था। लोग सड़कों पर खुले आम मारपीट करते थे। सवारी के रूप में बैलगाड़ियों का अधिक चलन था। कभी-कभी घोड़ों का भी उपयोग किया जाता था। नवम अंक में अधिकरणिक वीरक को घोड़े पर जीर्णोद्यान जाने को कहते हैं। धनिक लोग सवारी के लिये हाथी भी रखते थे। वसन्तसेना के पास भी एक हाथी था। उसका नाम 'खुण्टमो़कहस्ती' था। बैलगाड़ियों में परदे लगे रहते थे परन्तु इसके आधार पर यह नहीं कहा जा सकताकि उस समय परदे की प्रथा थी।

विवाह मनुष्य-जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना है। 'मृच्छकटिक' से तत्कालीन विवाह-पद्धति पर भी प्रकाश पड़ता है। उस समय लोग प्रायः सवर्ण स्त्री से विवाह करते थे परन्तु असवर्ण स्त्री से विवाह करना निषिद्ध नहीं था। सम्भवतः मनु के कथनानुसार उस समय ब्राह्मण चारों वर्गों की स्त्रियों से विवाह कर सकते थे। चारुदत्त और शर्विलक ने क्रम से वसन्तसेना और मदनिका को अपनी वधू बनाया। गणिका भी अपना पेशा छोड़ने पर वधू हो सकती थी। सती की प्रथा प्रचलित थी। दशम अंक में धूता सती हो जाने का प्रयत्न करती है।

राजनैतिक अवस्था – मृच्छकटिक प्रकरण में जिस समय का चित्रण किया गया है उस समय की राजनैतिक अवस्था अच्छी नहीं थी। राजा स्वेच्छाचारी एवं विलासी प्रवृत्ति के होते थे तथा राजमहिषी के अतिरिक्त अन्य स्त्रियों से भी सम्बन्ध रखते थे। शकार जैसे लोग प्रजा पर मनमाना अत्याचार करते थे। राज्य में धूर्तों का बोलबाला था। अनेक प्रकार की अव्यस्थायें फैली हुई थीं। रात्रि के आरम्भ में भी स्त्रियाँ बाहर निकलने पर सुरक्षित नहीं थीं। अनेक प्रकार के धूर्त, विट, चेट आदि राजमार्ग पर घूमते रहते थे। राजा के पदाधिकारी एवं कर्मचारी अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन ईमानदारी से नहीं करते थे। वीरक और चन्दनक का विवाद इस तथ्य का साक्षी है।

राजा का अत्याचार बढ जाने के कारण जनता में क्षोभ की स्थिति हो जाती है। जनता उसके अत्याचारों का विरोध करती है। इसी विरोध की भावना का ही प्रतिफल था कि चन्दनक ने आर्यक को जाने दिया और राजा पालक के विरुद्ध युद्ध में शामिल हो गया। विद्रोह के ही परिणामस्वरूप विट ने शकार का साथ छोड़ दिया और स्थावरक वधस्थान पर पहुँचकर चारुदत्त के पक्ष में खड़ा हो गया। ऐसी ही भावनायें संगठित होकर पड्यन्त्र का रूप धारण कर लेती हैं और राजा सन्देह के आधार पर षड्यन्त्रकारियों को कारागार में डाल देता है। राजा पालक ने इसी सन्देह के परिणामस्वरूप ही आर्यक को कारागार में डाल दिया था।

इस समय शासनसत्ता राजा के हाथ में ही निहित थी। वही न्याय-निर्णय का अन्तिम निश्चय करता था – ''**निर्णये वयं प्रमाणम् शेषे तु राजा**'' (अंक 1)। उसकी सहायता के लिए मन्त्री, न्यायाधीश तथा दण्डाधिकारी और रक्षक होते थे। 'शुल्क' इकट्ठा करने के लिए राजपुरुषों की नियुक्ति की जाती भी। इस प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यों के लिए अलग-अलग विभाग बनाए गए थे। नवम अंक से उस समय की न्याय व्यवस्था के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। न्यायालय में किस प्रकार से न्यायिक कार्यवाही की जाती थी। उस समय मृत्युदण्ड पर भी तुरन्त निर्णय लिया जाता था। इस प्रकार संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि उस समय की राजनैतिक व्यस्था में निरंकुशता और धूर्तता को पग-पग पर देखा जा सकता था।

धार्मिक मान्यता तथा विश्वास– मृच्छकटिक प्रकरण की जिस समय रचना की गई उस समय देश में वैदिक धर्म उन्नतावस्था में था। उस रामय नाना प्रकार के यज्ञ विधान किए जाते थे –

मखशतपरिपूतं गोत्रमुद्भाासितं मे........ ।। (10 / 12)

पूजा-पाठ, बलि, तर्पण आदि क्रियाओं का विशेष महत्त्व था। चारुदत्त देवपूजा, बलि और तर्पण में अटूट विश्वास रखता है। निम्न वर्ग के लोग भी धर्म-भीरु थे जैसे स्थावरक, विट आदि। चाण्डालों की भी अपने देवताओं के प्रति श्रद्धा थी।

उस समय वैदिक धर्म के साथ-साथ बौद्ध धर्म का भी प्रचार-प्रसार था। सांसारिक जीवन में विरक्त व्यक्ति बौद्ध भिक्षु हो जाते थे। भिक्षु प्रायः इन्द्रियसंयमी और तपस्वी होते थे। उस समय में बौद्ध भिक्षु विहारों में रहते थे। विहारों में भिक्षुणियाँ भी रहती थीं। धार्मिक मान्यताओं

के साथ अनेक प्रकार के विश्वास भी प्रचलित थे। विभिन प्रकार के अपशकुनों पर भी विचार किया जाता था।

कलाएं – मृच्छकटिक प्रकरण के काल में कलायें अपनी उन्नत अवस्था में थीं। उस समय नाट्यकला का पर्याप्त विकास हो चुका था। कला भी उन्नत दशा में थी। चारुदत्त रेभिल का संगीत सुनकर उसकी प्रशंसा करता है। वाद्यों में वीणा, बाँसुरी, मृदंग, पणव आदि का भी उल्लेख प्राप्त होता है। चित्रकला का भी पर्याप्त प्रचलन था। चतुर्थ अंक में वसन्तसेना चारुदत्त का चित्र मदनिका को दिखाती है। चौरकर्म को भी एक प्रकार की कला माना जाता था जिसका वर्णन तृतीय अंक में प्राप्त होता है।

21.3.4 मृच्छकटिकम् का रस विवेचन तथा काव्य सौन्दर्य

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप शूद्रक कवि प्रणीत मृच्छकटिक प्रकरण के रस-विवेचन तथा काव्य सौन्दर्य का अध्ययन करेंगे।

रस विवेचन – 'रस' रूपक का मुख्य तत्त्व होता है। विभाव, अनुभाव और संचारी भावों के संयोग से सहृदय सामाजिक को जिस अलौकिक आनन्द की प्राप्ति होती है, वही रस है। इस रस की प्रतीति कराना ही रूपकों का प्रयोजन है। रूपक के दशविध भेदों में प्रकरण नामक भेद का अंगीरस श्रृंगार माना गया है। इसमें श्रृंगार के दोनों भेदों संयोग एवं वियोग का वर्णन होता है। मृच्छकटिक प्रकरण का अंगीरस भी श्रृंगार है। इसमें श्रृंगार के सम्भोग श्रृंगार को कवि ने अंगीरस के रूप में वर्णित किया है। इस प्रकरण रूपक में विप्रलम्भ करुण, हास्य, वीरादि रसों का प्रयोग भी यत्र-तत्र दिखाई पड़ता है। मृच्छकटिक प्रकरण में प्रयुक्त रसों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

सम्भोग श्रृंगार – मृच्छकटिक प्रकरण चारुदत्त और वसन्तसेना के पारस्परिक प्रेम पर आधारित है। वसन्तसेना गणिका है, जो कि सामान्य नायिका के अन्तर्गत परिगणित है। ऐसा माना जाता है कि सामान्य गायिका का प्रेम रस की कोटि तक नहीं पहुँचता है वह 'रसाभास' ही रहता है तथापि प्रस्तुत प्रकरण में गणिका वसन्तसेना का प्रेम कुलनारी के समान अनन्य है। वह प्रकरण के अन्त में वधू पद को प्राप्त करती है। अतः यह प्रेम रस की कोटि तक पहुँच जाता है। कामदेवायतन उद्यान में चारुदत्त को देखकर उसके हृदय में अनुराग उत्पन्न हो जाता है। प्रथम अंक में चारुदत्त और वसन्तसेना परस्पर मिलते हैं। चारुदत्त उसके सौन्दर्य की प्रशंसा करता है और उस पर अनुरक्त हो जाता है। द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ अंक में चारुदत्त और वसन्तसेना परस्पर नहीं मिल पाते हैं किन्तु पंचम अंक में बसन्तसेना चारुदत्त से मिलने जाती है। यहाँ मेघों के गर्जन और दुर्दिन का अन्धकार तथा विद्युत् की चमक दोनों के मिलन के उद्दीपन के रूप में सहायक होती है। मेघों ने चारुदत्त के प्रेम को उद्दीप्त कर दिया है –

भो मेघ, गम्भीरतरं नद त्वं तव प्रसादात् स्मरपीडितं मे।
संस्पर्शरोमाञ्चितजातरागं कादम्बपुष्पत्वमुपैति गात्रम्।। मृच्छ 5/47

वसन्तसेना चारुदत्त के घर पहुँचती है जहाँ चारुदत्त वसन्तसेना का आलिंगन करके अपने भावों को इस प्रकार अभिव्यक्त करती है–

धन्यानि तेषां खलु जीवितानि ये कामिनीनां गृहमागतानाम्।

आर्द्राणि मेघोदकशीतलानि गात्राणि गात्रेषु परिष्वजन्ति।। मृच्छ 5/49

षष्ठ अंक के प्रारम्भ में चारुदत्त से पुनः मिलने के लिए वसन्तसेना की उत्सुकता दिखाई देती है। सप्तम अंक में चारुदत्त भी वसन्तसेना से मिलने के लिए उत्कण्ठित होता है किन्तु अष्टम, नवम एवं दशम अंक के प्रारम्भ की घटनायें विप्रलम्भ करुण रस को अपनी चरमावस्था में पहुँचा देती हैं तदनन्तर चारुदत्त और वसन्तसेना का पुनः मिलन होता है और सम्भोग शृंगार का उदय होता है।

विप्रलम्भ शृंगार – मृच्छकटिक प्रकरण में अनेक स्थानों पर विप्रलम्भ शृंगार का वर्णन प्राप्त होता है। प्रकरण के द्वितीय अंक में वसन्तसेना उत्कण्ठा से युक्त है। वह अपने हृदय में कुछ विचार कर रही है तथा स्नानादि नित्य कार्य में भी उसकी रुचि नहीं है। वह शून्यहृदया होकर चारुदत्त के चिन्तन में लीन है। प्रस्तुत प्रकरण के षष्ठ और सप्तम अंक में विरह की तीव्र उत्कण्ठा का सहज ही दर्शन हो जाता है। इस प्रकार शूद्रक कवि ने विप्रलम्भ शृंगार का सुन्दर निदर्शन किया है।

करुण रस – इष्ट की हानि से शोक का जो उद्रेक होता है वह करुण रस कहलाता है। प्रथम अंक में शूद्रक कवि ने चारुदत्त के वैभवनाश तथा दरिद्रावस्था का करुण चित्रण पाठकों के समक्ष उपस्थित किया है। दारिद्रय के परिणामस्वरूप आभूषणों के चोरी की घटना से धूता मूर्च्छित हो जाती है। नवम अंक में मृत्युदण्ड की घोषणा के पश्चात् रोहसेन और मैत्रेय के रुदन में करुण रस का संचार स्वभावतः दिखाई देता है। धूता के अग्नि प्रवेश की बात सुनकर चारुदत्त के मूर्च्छित होने के वर्णन में करुण रस की अभिव्यंजना की गई है।

हास्य रस – हास्य और व्यङ्ग्य की दृटि से मृच्छकटिक एक सकल प्रकरण रूपक है। शूद्रक कवि ने इस प्रकरण में नाना प्रकार के हास्य रस का प्रयोग किया है। विदूषक और शकार जैसे पात्रों के संवादों में हास्य रस का बड़ा ही सुन्दर प्रयोग दिखाई देता है। प्रकरण के द्वितीय अंक में द्यूतकारों के पारस्परिक झगड़े में हास्य रस की झलक दिखाई देती है। इसके अतिरिक्त वसन्तसेना की माता विषयक वर्णन में, व्यङ्ग्य उक्तियों में, अद्भुत प्रश्नोत्तरों में भी कवि ने हास्य रस की अभिव्यंजना की है।

अन्य रस – शृंगार, करुण एवं हास्य रस के अतिरिक्त मृच्छकटिक प्रकरण में भयानक, शान्त और वीर रस की झलक भी दिखाई देती है। द्वितीय अंक में खुण्टमोडक हाथी द्वारा मचायी गयी भगदड़ में भयानक रस का प्रयोग मिलता है तो वहीं अष्टम अंक में बौद्ध भिक्षु के संवादों में शान्त रस। शार्विलक के संवादों में युद्धवीर नामक वीर रस का प्रभेद अभिव्यंजित होता है तो चारुदत्त के वर्णन में दानवीर। इस प्रकार इस प्रकरण रूपक में कवि ने सभी रसों का समुचित प्रयोग किया है।

काव्य सौन्दर्य

काव्य सौन्दर्य के अन्तर्गत हम भाव-चित्रण, वर्णन सौष्ठव, प्रकृति चित्रण आदि विषयों का अध्ययन करेंगे।

भाव-चित्रण – मृच्छकटिक में कवि ने मानवीय भावों का स्वाभाविक चित्रण किया है। चारुदत्त अपनी निर्धनता के विषय में सोचकर कहता है कि मुझे धन के नष्ट हो जाने की चिन्ता नहीं है अपितु धन के नष्ट हो जाने से मित्रों की मित्रता शिथिल हो जाती है इसका कष्ट है –

सत्यं न मे विभवनाशकृतास्ति चिन्ता
भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति।
एतत्तु मां दहति, नष्टधनाश्रयस्य
यत्सौहृदादपि जना शिथिलीभवन्ति।।1/13।।

शर्विलक चौर्य कर्म के प्रति अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हुए कहता है कि यह कार्य निन्दीय होने पर भी श्रेष्ठ है क्योंकि किसी की सेवा में हाथ जोड़ना अच्छा नहीं –

कामं नीचमिदं वदन्तु पुरुषाः स्वप्ने च यद्वर्धते.......।।3/11।।

नारी के भावों की अभिव्यक्ति में यह प्रकरण पूर्णतया सफल हुआ है। कवि ने वसन्तसेना के भावों का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है। वह दुर्दिन में भी अपने प्रियतम चारुदत्त से मिलने जाती है। इस प्रकार शूद्रक कवि मानवीय भावों का चित्रण करने में पूर्णतया सफल सिद्ध हुए है।

वर्णन-सौष्ठव – मृच्छकटिक में जीवन की विविध अवस्थाओं का चित्रण प्राप्त होता है। कवि ने कहीं दारिद्रय का वर्णन किया है तो कहीं धन-वैभव और ऐश्वर्य से युक्त वसन्तसेना का वर्णन प्राप्त होता है। कवि ने चौरकर्म और द्यूतकर्म जैसे निन्दनीय विषयों को भी बड़े रोचक ढंग से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। इस प्रकार मृच्छकटिक वर्णन सौष्ठव की दृष्टि से उत्कृष्ट प्रकरण है।

प्रकृति-चित्रण – मृच्छकटिक में शूद्रक कवि ने प्रकृति को उद्दीपक के रूप में वर्णित किया है। पंचम अंक में वर्षा वर्णन के प्रसंग में कवि का प्रकृति चित्रण स्पष्ट दिखाई देता है। घने अन्धकार में मेघों से रजतत्तव जैसी श्वेत जलधारा गिरती है जो विद्युत की चमक से क्षणभर में दिखलाई देती है और फिर दृष्टि से ओझल हो जाती है कवि ने इसका बड़ा ही स्वाभाविक वर्णन किया है –

एता निषिक्तरजतद्रवसन्निकाशा
धारा जवेन पतिता जलदोदरेभ्यः।
विद्युत्प्रदीपशिखया क्षणदृष्टनष्टा–
श्छिन्ना इवाम्बरपटस्य दशाः पतन्ति।।5/4।।

इस प्रकार मृच्छकटिक प्रकरण में आपको स्थान-स्थान पर प्रकृति वर्णन का सुन्दर चित्रण प्राप्त होता है।

मृच्छकटिक में प्रयुक्त वृत्ति – वृत्तियाँ चार हैं – कैशिकी, सात्त्वती, आरभटी और भारती। श्रृंगार रस में कैशिकी, वीर रस में सात्त्वती, रौद्र तथा वीभत्स रस में आरभटी वृत्ति का प्रयोग होता है। भारती वृत्ति सभी रसों के साथ प्रयुक्त होती है।

मृच्छकटिक प्रकरण का अंगीरस श्रृंगार है। अतः इस प्रकरण में मुख्यतया कैशिकी वृत्ति का प्रयोग है। यह वृत्ति कोमल वृत्ति है। इसमें नृत्य, गीत, विलासादि श्रृंगारिक चेष्टायें हुआ करती

हैं। चारुदत्त और वसन्तसेना की विलास चेष्टाओं का इस प्रकरण में वर्णन है। अतः कैशिकी वृत्ति की प्रधानता है। इसके अतिरिक्त शार्विलक के चौरकर्म में वीर रस की प्रधानता है अतः सात्त्वती वृत्ति और शकार द्वारा 'वसन्तसेनामोटन' के प्रकरण में आरभटी वृत्ति का दर्शन होता है।

मृच्छकटिक में प्रयुक्त भाषा – मृच्छकटिक की भाषा में सरलता और स्वाभाविकता के दर्शन होते हैं। उसमें सर्वत्र प्रसाद और लालित्य विद्यमान है। कहीं-कहीं भाषा में कृत्रिमता और अलंकृत शैली के दर्शन होते हैं। पात्रों और परिस्थिति के अनुसार भाषा का प्रयोग सर्वत्र परिलक्षित होता है। भाषा में अभीष्ट गति और प्रवाह भी दिखाई देता है। कवि का भाषा पर पूर्ण अधिकार था। उन्होंने संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओं का समुचित प्रयोग किया है।

मृच्छकटिक में प्रयुक्त प्राकृत भाषायें – शूद्रक कवि ने मृच्छकटिक प्रकरण में सात भाषाओं का प्रयोग किया है – (1) शौरसेनी (2) अवन्तिजा (3) प्राच्या (4) मागधी (5) शकारी (6) चाण्डाली (7) ढक्की। सूत्रधार, नटी, रदनिका, मदनिका, वसन्तसेना और उसकी माता, चेटी, कर्णपूरक, धूता, शोधनक और श्रेष्ठी ये ग्यारह पात्र शौरसेनी प्राकृत बोलते हैं।

विदूषक प्राच्य भाषा बोलता है। संवाहक, शकार वसन्तसेना और चारुदत्त इन (तीनों) के चेट, भिक्षु, चारुदत्त का पुत्र रोहसेन ये छः पात्र मागधी बोलते हैं। शकार शकारी प्राकृत बोलता है। दोनों चाण्डाल चाण्डाली भाषा बोलते हैं तथा द्यूतकर और माथुर ढक्की भाषा का प्रयोग करते हैं।

मृच्छकटिक में अलंकार तथा छन्द योजना – मृच्छकटिक में कवि ने अनेक अलंकारों का प्रयोग किया है। अलंकार श्रमसाध्य न होकर स्वाभाविक हैं। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, विशेषोक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग मृच्छकटिक में बहुलता से किया गया है।

छन्दों में कवि अनुष्टुप्, आर्या, इन्दवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, पुष्पिताग्रा, वंशस्थ, मालिनी आदि छन्दों का प्रयोग किया है।

21.4 मृच्छकटिकम् प्रकरण के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।

21.4.1 चारुदत्त का चरित्र-चित्रण

मृच्छकटिक प्रकरण का नायक चारुदत्त है। भारतीय काव्यशास्त्र के अनुसार नायक के चार प्रकार माने जाते हैं– धीरोदात्त, धीरललित, धीरप्रशान्त और धीरोद्धत। इन चारों प्रकार के नायकों में से चारुदत्त को धीरप्रशान्त नायक कहा जा सकता है। दशरूपक के अनुसार धीर प्रशान्त का लक्षण है "**सामान्य गुण युक्तस्तुधीर प्रशान्तो द्विजादिक।**" चारुदत्त में सामान्य नायक के प्रायः समस्त गुण विद्यमान हैं।

व्यक्तित्व– चारुदत्त जन्मना ब्राह्मण होते हुए भी कर्मणा (वणिक्) है। उज्जयिनी नगरी के अति सम्पन्न वंश में चारुदत्त ने जन्म लिया है। उसके पूर्वजों ने ब्राह्मण होते हुए भी व्यापार

के माध्यम से अपार धन सम्पत्ति अर्जित की थी किन्तु चारुदत्त अपनी अतिशय उदारता और दानशीलता के कारण सारी सम्पत्ति निर्धनों को दे देता है और स्वयं दरिद्र हो जाता है। उसका व्यक्तित्व आकर्षक है, उदात्त है और सुन्दर है। द्वितीय अंक में संवाहक वसन्तसेना को चारुदत्त का परिचय देता हुआ कहता है **'यस्तादृशः प्रियदर्शनः ....।'**

इसी तरह सप्तम अंक में आर्यक चारुदत्त की प्रशंसा में कहता है– 'न केवलं श्रुतिरमणीयो दृष्टिरमणीयोऽपि।' अर्थात् न केवल सुनने में ही अच्छे है अपितु देखने में भी अच्छे हैं। वसन्तसेना की हत्या का आरोप चारुदत्त पर लगता है। न्यायालय के न्यायाधिकारी भी उसके सौन्दर्य को देखकर कहता है– **'घोणोन्नतं मुखमपाङ्गविशालनेत्रम्।' (9/16)** अर्थात् ऊँची नाक वाला, किनारों तक लम्बे नेत्रों वाला यह मुख। वसन्तसेना की माता भी चारुदत्त को देखकर कहती है– **''अयं स चारुदत्तः। सुनिक्षिप्तं खलु दारिकया यौवनम्।''**

उदार एवं दयालू – चारुदत्त अत्यन्त उदार एवं दयालू है। वह किसी को निराश नहीं करना चाहता। जब कोई श्लाघनीय कार्य करता है या उसे कोई शुभ समाचार सुनाता है तो चारुदत्त उसे पुरस्कार के रूप में कुछ न कुछ देना चाहता है। अतिशय उदारता के कारण ही चोर के द्वारा आभूषण चुराने पर वह दुःखी नहीं होता है। अपितु प्रसन्न होकर कहता है– **''यदसौ कृतार्थो गतः।''**

कर्णपूरक जब मत्त हाथी को मार देता है तो उसके पराक्रम से प्रसन्न होकर उसे अंगूठी देना चाहता है किन्तु अंगुली में अंगूठी न होने से वह अपना दुपट्टा ही दे देता है। **''एकेन शून्यान्याभारणस्थानानि परामृश्य उर्ध्वं निःश्वस्यायं ममोपरि निक्षिप्तः।''** इसी तरह चेट जब वसन्तसेना के आगमन का समाचार देता है तो वह हर्षित होकर अपना दुपट्टा दे देता है– **''भद्र! मे कदाचित् प्रियवचनं निष्फलीकृतम्, तद्गृह्यतां पारितोषिकम्।''**

चारुदत्त की यही उदारता, वसन्तसेना के आकर्षण का कारण बनती है। चारुदत्त के मन में प्राणिमात्र के लिए दया है। न तो वह किसी को कभी कष्ट देना चाहता है और न किसी को दुःखी देखना चाहता है। चारुदत्त के लिए चेट कहता है– **'सुजनः खलु भृत्यानुकम्पकः'** (3/2) चारुदत्त सेवकों के प्रति भी दयालू है। वह सोई हुई रदनिका को जगाना नहीं चाहता– **'अलं सुप्तजनं प्रबोधयितुम्'** इतना ही नहीं पशु-पक्षियों के प्रति भी उसकी करुणा इस वाक्य से प्रकट होती है– **'वयस्य! उपविश्य किमनेन, तिष्ठतु दयितासहितस्तपस्वी।'**

शरणागत रक्षक– शरणागत की रक्षा जो एक भारतीय संस्कृति की अनुपम धरोहर है, चारुदत्त के चरित्र में विद्यमान है। वह शरणागत की रक्षा के निमित्त अपने प्राणों तक की परवाह नहीं करता। आर्यक जब उसकी शरण में आता है तब वह स्पष्ट कहता है– **'अपि प्राणानहं जह्यां न तु त्वां शरणागतम्।'** (7/6) (अर्थात् प्राणों को भले ही त्याग दूँगा, किन्तु शरण में आये हुये तुम्हें नहीं त्यागूँगा।)

शरणागत रक्षक की पराकाष्ठा तब होती है जब षड्यन्त्र रचाकर हत्या के अभियोग में चारुदत्त को दण्ड दिलाने वाला शकार भी उसकी शरण में आकर प्राणरक्षा की भीख माँगता है। तब चारुदत्त शकार के अपराध को भुलाकर कहता है– **'अहह! अभयमभयं शरणागतस्य।'**

धर्मपरायण तथा भाग्यवादी– चारुदत्त धार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति है। मृच्छकटिकम् के प्रारम्भ से ही चारुदत्त एक धर्म-कर्म निरत व्यक्ति के रूप में दिखाई देता है। वह सन्ध्यावन्दनादि नित्य कर्मों का नियमपूर्वक अनुष्ठान करता है। जब मैत्रेय देवताओं के प्रति अश्रद्धा व्यक्त करता है तब वह कहता है– **'वयस्य! मा मैवम् गृहस्थस्य नित्योऽयं विधिः।'** आगे भी कहता है–**'तपसा मनसा वाग्भिः पूजिता बलिकर्मभिः।'** (1/16)

धार्मिक प्रवृत्ति से युक्त होने के कारण वह भाग्यवादी भी है। उसकी भाग्यवादिता इस वाक्य से परिलक्षित होती है– **'भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति।'** (1/13) इसी प्रकार चारुदत्त आर्यक से कहता है– **'स्वैर्भाग्यैः परिरक्षितोऽसि।'** (717)

भाग्यवादी होने के कारण उसका विश्वास है कि धन का आना और जाना भाग्य के अनुसार ही होता है। भाग्यवादिता एवं धर्मनिष्ठा का ज्वलन्त प्रमाण हम उसके निम्न कथन के रूप में देख सकते हैं, जब वह यह आह्वान करता है–

प्रभवति यदि धर्मो दूषितस्याऽपि मेऽद्य, प्रबलपुरुषवाक्यैर्भाग्यदोषात्कथञ्चित्।

सुरपतिभवनस्था यत्र तत्र स्थिता वा, व्यपनयतु कलङ्क स्वस्वभावेन सैव।।

(10/34)

इसी सन्दर्भ में शकुन और अपशकुन पर उसका दृढ़ विश्वास है। न्यायालय में जाते समय मार्ग में होने वाले अपशकुनों को देखकर वह घबड़ा जाता है और अपनी भावी मृत्यु सोचने लगता है। भाग्यवाद में विश्वास की पराकाष्ठा उसके निम्न वक्तव्य से परिलक्षित होती है–

कांश्चितुच्छयति प्रपूरयति व कांश्चिन्नयत्पुन्नति।

कांश्चित् पातविधौ करोति च पुनः कांश्चिन्नयत्याकुलान्

अन्योन्यं प्रतिपक्षसंहतिमिमां लोकस्थितिं बोधय–

न्नेष क्रीडति कूपयन्त्रघटिका-न्यायप्रसक्तो विधिः।। (10/60)

आदर्श प्रेमी– मृच्छकटिक में चारुदत्त को एक उच्चकोटि का आदर्श प्रेमी चित्रित किया गया है। एक प्रेमी के रूप में उसका चरित्र चारित्रिक दृढ़ता से युक्त है। वसन्तसेना के प्रति उसका प्रेम अत्यन्त गहरा एवं सुकुमार है। जब तक वसन्तसेना उससे आकर नहीं मिलती है, तब तक वह उसके वियोग में तड़पता रहता है। अभियोग प्रकरण में भी वह इन शब्दों में वसन्तसेना का स्मरण करता है– **'न च मे वसन्तसेनाविरहितस्य जीवनेन कृत्यम्'** अन्त में जब वह वध स्थान पर अचानक वसन्तसेना को देखता है तब वह हृदय से गद्गद् हो उठता है तथा उसे संजीवनी बूटी के तुल्य बतलाता है।

यद्यपि वह एक गणिका से प्रेम करता है किन्तु अपनी पत्नी धूता से प्रेम में लेशमात्र भी कमी नहीं है वह उसे पवित्र मानता हुआ उसका आदर करता है। वेश्या के आभूषणों को भी अभ्यन्तर प्रवेश के योग्य नहीं समझता है। वह पर नारी पर दृष्टि भी नहीं डालना चाहता–**'न युक्तं परकलत्रदर्शनम्।'** जब अनजाने में अन्य स्त्री से उसके वस्त्रों का स्पर्श हो जाता है तो

वह खिन्न होकर कहता है— **'इयमपरा का अविज्ञातावसक्तेन दूषिता मम वाससा।'** अपनी पतिव्रता स्त्री पर गर्व करता है और गार्हस्थ्य धर्म का पूर्णतया पालन करता है।

प्रतिष्ठा प्रेमी— चारुदत्त को अपनी प्रतिष्ठा और चरित्र की उज्ज्वलता का ध्यान है। वह ऐसा कोई आचरण नहीं करना चाहता है जिससे उसकी अथवा उसके वंश की मान प्रतिष्ठा को धक्का लगता हो। वसन्तसेना के गहनों की चोरी के सम्बन्ध में विदूषक द्वारा झूठ बुलवाये जाने के उत्तर में कहता है **'अनृतं नाभिधास्यामि चारित्रभ्रंशकारकम्।'** (3/26)

अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए ही वह वसन्तसेना की धरोहर को लौटाना आवश्यक समझता है और असत्य बात कहकर बहुमूल्य रत्नमाला बदले में भेजता है। यद्यपि वह जानता है कि सत्य बात जानने पर वसन्तसेना रत्ना वली नहीं लेगी और समाज के लोग उसकी गरीबी के कारण सच घटना पर विश्वास नहीं करेंगे। इससे चारों ओर बदनामी होगी। वह विदूषक से कहता है— **'कः ज्ञद्धास्यतिभूतार्थ, सर्वो मां तुलयिष्यति'** (3/24) वसन्तसेना की हत्या अपराध सिद्ध होने पर उसे मृत्युदण्ड पाने का भय नहीं है, केवल दुःख है तो प्रतिष्ठा चले जाने का— **'न भीतो मरणादस्मि केवलं दूषितं यशः।'** (10/27)

कलाप्रेमी— चारुदत्त कला-प्रिय व्यक्ति है। वह हर अच्छी कला का सम्मान करता है। उसमें कवि हृदय भी विद्यमान है। वह संगीत का पारखी है। रेभिल के संगीत की ताल-लय तथा मूर्च्छना इत्यादि का विश्लेषण करते हुए सराहना करता है। शर्विलक के द्वारा मकान में सेंध लगाई जाती है तब चोरी की अधिक चिन्ता न करके, सर्वप्रथम सेंध लगाने की कला की प्रशंसा करता है— **'अहो, दर्शनीयोऽयं सन्धिः। कथमस्मिन्नपि कर्मणि कुशलता?'**

21.4.2 वसन्तसेना का चरित्र-चित्रण

वसन्तसेना उज्जयिनी की एक गणिका है। वह बहुत धनी है। चतुर्थ अंक में वसन्तसेना का वैभव देखकर विदूषक उसकी चेटी से कहता है— **'एवं वसन्तसेनाया बहुवृत्तान्तमष्टप्रकोष्ठं भवनं प्रेक्ष्य यत्सत्यं जानामि, एकस्थमिव त्रिविष्टपं दृष्टम्। प्रशंसितुं नास्ति मे वाग्विभवः। किं तावद्गणिकागृहम् अथवा कुबेरभवनपरिच्छेदइति।'** उसे विश्वास है कि धन से टाले जाने वाली आपत्तियों को टालने के लिए जितना भी धन आवश्यक हो उसे वह खर्च कर सकती है। जब द्वितीय अंक में संवाहक उसके घर शरण लेता है तब पहले तो वह अपने महल का फाटक बन्द करवा देती है परन्तु बाद में यह मालूम होने पर कि संवाहक धनिक के डर से शरण लेने आया है तो वह फाटक खुलवा देती है। वह तरुण वय की एक सुशिक्षित चतुरस्त्री है। वह यद्यपि प्राकृत भाषा में बोलती है तथापि वह संस्कृत भी जानती है। वह चतुर्थ अंक में विदूषक से संस्कृत में बोलती है। वह यह जानती है कि अपने प्रियतम के विनय भरे व्यवहार का कैसे उत्तर देना चाहिये। प्रथम अंक में जब चारुदत्त उससे उसके साथ भूल से परिजन का सा व्यवहार करने के अपराध की क्षमा चाहता है तो वह भी अपने अपराध की क्षमा याचना करती हुई कहती है **'एतेनानुचितभूमिकारोहणेनापराद्धार्यं शीर्षेणप्रणम्य प्रसादयामि।'** वह चारुदत्त की गूढ़ व्यङ्ग्य भरी प्रणय-प्रार्थना का आशय झट समझा जाती है। वह वस्त्र और आभूषणों से सुसज्जित रहती है। वह अपने बालों को फूलों से प्रसाधित रखती है। वह चित्रकला और

कविता बनाना भी जानती है। चतुर्थ अंक में सम्भवतः वह अपना बनाया हुआ ही चारुदत्त का चित्र मदनिका को दिखाती है। पञ्चम अंक में वह स्वनिर्मित पद्यों से वर्षा का वर्णन करती है। सम्भवतः वसन्तसेना जाति की बंगालिन है। शकार उसे मछली चबाने वाली (मत्स्याशिका) कहता है। वेश्या होने पर भी वह धार्मिक है। वह देवपूजन करती है। उसकी तर्क शक्ति भी प्रबल है। द्वितीय अंक में कर्णपूरक को हँसता हुआ देखकर वह समझ जाती है कि कुछ बात है। चतुर्थ अंक में शर्विलक को पश्चाताप करता देख वह समझ जाती है कि उसने सब बातें न जानने के कारण भूल से चारुदत्त के घर चोरी की। उसी अंक में विदूषक भी उसकी तर्क शक्ति की सराहना करता है। वह कहता है– **'सुष्ठूपलक्षितं दुष्टविलासिन्या'**।

वसन्तसेना चारुदत्त पर आसक्त है। यह बात प्रथम अंक में शकार की उक्ति से ही स्पष्ट हो जाती है। जब विदूषक वसन्तसेना की उपस्थिति में ही चारुदत्त को बतलाता है कि वसन्तसेना कामदेवायतनोद्यान के दिन से उसे प्रेम करती है तो वह प्रतिवाद नहीं करती। संवाहक के चारुदत्त का नाम लेने पर वह उसका विशेष आदर करती है। चतुर्थ अंक में वह विदूषक का खड़ी होकर स्वागत करती है। ये दोनों बातें भी उसका चारुदत्त के प्रति अनुराग व्यक्त करती है। वह चारुदत्त के गुणों पर मुग्ध है। जाती कुसुम-वासित प्रावारक की सुगन्ध से झलकने वाला चारुदत्त का अनुदासीन यौवन उसकी आसक्ति को दृढ़ कर देता है। चारुदत्त के प्रति उसका प्रेम इतना बढ़ा हुआ है कि पञ्चम अंक में चारुदत्त के घर पहुँचने पर वह स्वयं उसे पहले आलिंगन करती है। उसे धन का लोभ नहीं है। वह सुवर्णदशसाहस्रिक अलंकार के साथ आये हुए शकार के आमन्त्रण को अस्वीकार कर देती है। वह जानती है कि चारुदत्त दरिद्र है। फिर भी वह उससे प्रेम करती है क्योंकि उसका अन्य वेश्याओं की तरह धन के लिये बनावटी प्रेम नहीं है। वह तो उसके गुण और यौवन पर मुग्ध है। वह जानती है कि दरिद्र को प्रेम करने से लोक में उसकी बदनामी न होगी। उसकी इच्छा चारुदत्त से केवल एकबार मिलने की नहीं है। द्वितीय अंक में मदनिका वसन्तसेना से पूछती है कि यदि तुम चारुदत्त को चाहती हो तो उसे अपने घर क्यों नहीं बुलवा लेती? इस पर वह उत्तर देती है कि ऐसा करने से दरिद्रता के कारण अपने को प्रत्युपकार करने में असमर्थ पाकर कहीं वह फिर मिलना छोड़ न दे। इससे यह स्पष्ट है कि वह उससे स्थायी सम्बन्ध जोड़ना चाहती है। वेश्या होने के कारण समाज में वसन्तसेना का स्थान बहुत नीचा है। वह भी स्वयं इस बात को जानती है इसीलिये चारुदत्त के कहने पर भी वह रोहसेन को लेकर महल के अन्दर नहीं जाती। उसी अंक में वह आगे कहती है– **'एतेनानुचितभूमिकारोहणेन'** इत्यादि। फिर भी एक ब्राह्मण से स्थायी सम्बन्ध जोड़ने की आकांक्षा रखती है। उसे यह आशा होती जाती है कि मेरा स्वप्न पूरा होगा।

वसन्तसेना स्वभाव से उदार है। उसमें कृपणता का लेश भी नहीं है। संवाहक उससे सर्वथा अपरिचित है। तथापि वह शरण में जाता है तो वह उसे तुरन्त अभय वचन दे देती है। वह संवाहक का कर्ज चुकाने के लिए अपना सोने का कड़ा भेजती है। वह भी यह कहकर कि यह संवाहक ने ही भेजा है। वह अपने कार्य का इतना भी श्रेय नहीं चाहती कि लोग उसका नाम जानें। वह उपकार के बदले में कुछ नहीं चाहती। संवाहक कहता है कि मैं मालिश

कला जानता हूँ। इसे तुम अपने किसी नौकर को सिखवालो। इस पर वसन्तसेना कहती है— नहीं, जिसकी सेवा करने के लिये तुमने यह कला सीखी है, इससे उसीकी सेवा करो। जब उसे यह पता चलता है कि शर्विलक सचमुच मदनिका को प्रेम करता है तो वह उसे गुलामी से मुक्त करके शर्विलक को सौंप देती है। वह सुवर्णभाण्ड धरोहर रखकर पन्द्रहियों चारुदत्त के घर नहीं जाती। सम्भव है वह समझती है कि ऐसा करना कृपणता व्यक्त करेगा। जब भाण्ड के बदले चारुदत्त के घर से रत्नावली आ जाती है तब वह उससे मिलने जाती है। चारुदत्त का आदर करने के लिए उसकी भेजी रत्नावली वह रख लेती है परन्तु यह बात उसे खटकती है। वह समझती है कि चारुदत्त उसे कृपण समझता होगा इसीलिए पञ्चम अंक में जब वह उससे मिलती है तो रत्नावली भेजने के लिए उलाहना देती है। वह चारुदत्त के पुत्र की गाड़ी बनवाने के लिए अपने आभूषण देने में नहीं हिचकती। वह उसकी माता बनने के लिये सब कुछ करने को तैयार है। वह धूता के साथ बहन का नाता जोड़ती है। यह भी उसकी उदारता का द्योतक है।

21.4.3 शकार का चरित्र-चित्रण

शकार मृच्छकटिककार की विविध कल्पना है। समूचे संस्कृत साहित्य में ऐसे चरित्र का मिलना प्रायः असम्भव है। वह इस प्रकरण का प्रतिनायक है। दश रूपककार के अनुसार प्रतिनायक लोभी, धीरोद्धत, जड़ प्रकृति वाला, पापी और व्यसनी होता है। शकार भी मूर्खता, प्रवंचना, पाप, क्रूरता और कायरता आदि दुर्गुणों से पूर्ण है।

संस्थानक अथवा शकार— शकार राजा पालक की रखैल स्त्री का भाई है। राजश्यालक और संस्थानक भी है। वह शकारी प्राकृत बोलता है। जिसमें सकार के स्थान पर शकार बोला जाता है। जैसे वसन्तसेना को वशन्तसेना कहता है। सम्भवतः इसी हेतु इसका उपनाम शकार पड़ा। प्रथम अंक में विट एवं 'काणेलीमातः' कहकर बुलाता है। विदूषक भी 'काणेलीपुत्र' 'कुट्टनीसुत' इत्यादि गर्हित शब्दों से ही बुलाता है जिसका तात्पर्य भी (रखेली) अविवाहित स्त्री का पुत्र होना है।

अभिमानी तथा जड़प्रकृति वाला— शकार बहुत अभिमानी है। उसे राजा का साला होने का अभिमान है। इसीसे वह मनमानी करता है। अपने आपको देव पुरुष या वासुदेव समझता है। वह न्यायधीशों को निकलवाने की धमकी देकर उनसे मनमाना न्याय कराना चाहता है। उसके कथन अज्ञान तथा मूर्खता से भरे पड़े हैं। जैसे— **'द्रोणपुत्रोजटायुः। न मृता रज्जब'** इत्यादि। वह मूर्खतापूर्ण भाषणों में रामायण, महाभारत आदिमहाकाव्यों तथा कथा पुराणों के पात्रों की नियोजना करता है किन्तु उसकी पात्र-नियोजना का पारस्परिक सम्बन्ध नहीं है। जैसे— **'किं द्रौपदीव पलायसे रामभीता।'** (1/25) अथवा **'मम वशमनुयाता रावणस्येव कुन्ती।'** (1/21) इस तरह के अन्य उदाहरण भी इस प्रकरण में देखने को मिलते है। वसन्तसेना के लिए उसने दस उपनाम रखे हैं। ऐसा लगता है जैसे वह इन नामों में इन्द्रजाली प्रभाव का अधिष्ठान मानता है। साथ ही वह शब्द सम्बन्धी अपनी विद्वत्ता भी प्रदर्शित करना चाहता है।

कायर तथा दुराग्रही– शकार अस्थिर स्वभाव वाला है। उसके विचार क्षण-क्षण में बदलते रहते है। जीर्णोद्यान में जब स्थावरक गाड़ी लेकर पहुँचता है तब वह उसमें वसन्तसेना को देखकर भयभीत होकर कहता है– '**मृतोऽसि मृतोऽसि। प्रवहणाधिरूढा राक्षसी चौरो वा प्रतिवसति।**' नाटक के अन्त में जब वह वसन्तसेना को जीवित देखता है तो मृत्यु के भय से आर्य चारुदत्त की शरण में आने में भी नहीं झिझकता तथा कहता है– ''**भो अशरणशरण! परित्रायस्व।**'' इसी तरह बड़े कातरभाव से वसन्तसेना से प्रार्थना करता है– ''**गर्भदासीपुत्रि! प्रसीद! प्रसीद! न पुनर्मारिष्यामि। तत् परित्रायस्व।**'' वस्तुतः वह कायर ही है। शूरता और वीरता का तो उसने आवरण पहन रखा है।

शकार के दुराग्रही होने के कारण उसके साथी विट और चेट को हमेशा शंका रहती है कि न जाने वह क्षण भर में क्या कर बैठे? अष्टम अंक में पहले तो वह विट को गाड़ी में बैठने को कह देता है फिर उसका अपमान करने लगता है। इसी प्रकार स्थावरक (चेट) को दीवार पर से गाड़ी लाने का आदेश दे देता है। प्रथम अंक में विट से कहता है कि मैं वसन्तसेना को लिए बिना नहीं चलूँगा। ये सभी उदाहरण उसके दुराग्रही स्वभाव को प्रमाणित करते हैं।

क्रूर एवं निर्दयी– 'शकार क्रूर और निर्दयी होने के साथ पापी है तथा पाप पूर्ण योजना बनाने में निपुण है। विट और चेट को कपटपूर्वक हटाकर वसन्तसेना का गला दबा देता है और जब विट इस कुकृत्य की भर्त्सना करता है तो उस पर ही हत्या का आरोप लगा देता है। चेट को बांधकर एक स्थान पर डाल देता है तथा स्वयं चारुदत्त पर वसन्तसेना की हत्या का अभियोग चलाता है। जब चेट उसके पापों का खुलासा करता है तो उस पर चोरी का आरोप बड़ी चतुरता से लगा देता है। चाण्डालों को पुत्र सहित चारुदत्त को मारने का आदेश दे देता है– ''**सपुत्रमेवैतं मारय।**'' अपने षड्यन्त्र को सफल होते देख वह अति हर्षित होता है और अपने सामने चारुदत्त का वध देखना चाहता है, ''**तत् प्रेक्षिष्य, शत्रुविनाशो नाम मम महान् हृदयस्य परितोषो भवति।**''

कामुक– शकार क्रूर होने के साथ-–साथ कामवासना से युक्त है। जिस वसन्तसेना को वेश्या समझ एक तुच्छ, प्राणी समझता है, यद्यपि उस वसन्तसेना के मन में उसके लिए कोई स्थान नहीं है किन्तु शकार येन-केन प्रकारेण उसे अपना बनाना चाहता है। वह किसी भी कीमत पर कामाग्नि को शान्त करना चाहता है।

प्रथम अंक से प्रारम्भ होकर अन्तिम अंक तक उसकी काम वासना ही प्रकट होती है। वह साम, दाम, दण्ड, भेद इन चारों नीतियों से वसन्तसेना को वश में करना चाहता है और जब वह अपने प्रयासों में असफल हो जाता है तो उसे मारने से भी नहीं चूकता है।

शकार के चरित्र पर विल्सन महोदय की टिप्पणी भी द्रष्टव्य है– तथापि नाटक की सर्वश्रेष्ठ सृष्टि राजा का साला संस्थानक है। इतना पूर्णतया घृणास्पद चरित्र शायद साहित्य में कभी अंकित नहीं किया गया है। उसके दुर्गुण भयंकर हैं, वह नितान्त निर्मम एवं दुश्चेष्ट है, तो भी इतना हास्यास्पद है कि हमारा क्रोध बेकार बर्बाद होता है और जब उसके अपराधों के

उचित दण्ड की घड़ी आती है तब चारुदत्त के साथ हम भी यह कहने के लिए प्रवृत्त हो जाते हैं इसे मुक्त करो और छोड़ दो।' (विल्सन– दी थियेटर ऑफ दी हिन्दूज, पृ. 57)

डॉ. भाट ने भी शकार को शैक्सपियर के दानव से तुलना की है जिस पर नियन्त्रण रखने वाला मालिक मौजूद नहीं है अथवा 'पंचतन्त्र' के पृष्ठों में से शायद एक धूर्त लोमड़ी शकार के स्वरूप में जीवित प्रकट हो गयी है।

शकार के चरित्र में प्रायः सभी दुर्गुणों का पुंज दृष्टिगोचर होता है। केवल स्त्री लम्पट, मूर्ख और धूर्त ही नहीं अपितु घमण्डी, कायरता, भीरुता, निर्लज्जता, स्वादलोलुपता, कुटिलता आदि अवगुणों की प्रतिमूर्ति है। प्रस्तुत प्रकरण में वह मानव के रूप में दानव विद्यमान है। ग्रन्थ में प्रतिनायक के रूप में उसका यथार्थ चित्रण किया गया है।

21.4.4 मदनिका का चरित्र-चित्रण

मदनिका वसन्तसेना की दासी है। मदनिका और वसन्तसेना एक दूसरे को बहुत प्रेम करती हैं। मदनिका वसन्तसेना की विश्वासपात्र दासी है। वसन्तसेना चारुदत्त के साथ अपने प्रणय का रहस्य मदनिका को बतलाती है। मदनिका का शर्विलक से गुप्तप्रेम है। चतुर्थ अंक में मदनिका और शर्विलक की बातों से पता चलता है कि वह उनकी पहली भेंट नहीं है। मदनिका वेश्या की दासी होने पर भी सत् स्वभाव की है। जब शर्विलक चोरी के आभूषणों के साथ उससे मिलता है तो वह सत्परामर्श देती है। वह उसे आभूषण लौटा देने को कहती है। मदनिका को अवसर के अनुसार कार्य करने की सूझ है। वह शर्विलक से कहती है कि चारुदत्त का आत्मीय बनकर वसन्तसेना को आभूषण लौटा दो। मदनिका शूर और कर्मठ पुरुष की भार्या होने योग्य स्त्री है। वह शर्विलक के कार्यों में बाधा नहीं डालती। वह जानती है कि शूर पुरुष घर में तो बैठे रहेंगे नहीं। पाणिग्रहण करके वसन्तसेना के घर के बाहर निकलते ही शर्विलक आर्यक को कैद से छुड़ाने जाना चाहता है। मदनिका उसे रोकती नहीं। वह केवल इतना ही कहती है कि पहले मुझे गुरुजनों के पास सुरक्षित पहुँचा दो। वह उसे अपने कार्य में अप्रमत्त होने के लिये भी कहती है।

21.4.5 विदूषक का चरित्र-चित्रण

विदूषक का नाम मैत्रेय है। वह जाति का ब्राह्मण है। हाथ में एक टेढ़ी लकड़ी लिये रहता है। वह चारुदत्त का घनिष्ठ मित्र है। उसका प्रधान सहायक भी है। जब चारुदत्त धनी था उस समय वह उसके घर खूब खाता-पीता था। जब से चारुदत्त निर्धन हो गया तब से वह इधर-उधर भोजन करके केवल निवास के लिए उसके घर जाता है। वह उसका साथ नहीं छोड़ता। चारुदत्त भी उससे प्रेम करता है। प्रथम अंक में वह कहता है– 'अये! सर्वकालमित्रं मैत्रेयः प्राप्तः' इत्यादि। विदूषक सदा चारुदत्त को ऋद्धि की कामना करता है। वह किसी प्रकार भी चारुदत्त को दुःखी नहीं करना चाहता। वह रदनिका के अपमान का समाचार उसको नहीं बतलाता। वह समझता है कि ऐसा करने से उसे मानसिक कष्ट होगा। वह चारुदत्त की बदनामी नहीं चाहता। प्रथम अंक में दीपक जलाने के तेल के अभाव की बात

वह चारुदत्त के कान में कहता है। वह नहीं चाहता कि वसन्तसेना यह जाने कि चारुदत्त दरिद्र है। वह चारुदत्त को इतना प्रेम करता है कि उसके मरने पर स्वयं भी जीवित रहना नहीं चाहता।

विदुषक कट्टर धार्मिक नहीं है। उसका देवी-देवताओं में विश्वास नहीं है। क्योंकि वे पूजा करने पर भी फल नहीं देते। वह झूठ बोलने में भी नहीं हिचकिचाता आभूषणों के चोरी जाने पर वह कहता है कि घबड़ाने की कोई बात नहीं मैं कह दूँगा कि वसन्तसेना ने आभूषण हमारे घर नहीं रखे थे। यदि रखे थे तो कौन साक्षी है? वह आभूषणों के बदले रत्नावली देने से मना करता है।

विदूषक बड़ा डरपोक है। वह अंधेरे में चतुष्पथ पर जाने से इन्कार कर देता है। जब रदनिका जाती है तब कहीं स्वयं भी जाना स्वीकार करता है। प्रथम अंक के अन्त में चारुदत्त उसे वसन्तसेना को पहुँचाने के लिये जाने को कहता है। उस अवसर पर भी वह जाने से इनकार कर देता है। जब चारुदत्त स्वयं जाता है तब कहीं वह भी तैयार होता है। वह पेटू भी है। जब वह आभूषणों के बदले रत्नावली देने जाता है तब वसन्तसेना उसको मौखिक सत्कार करके विदा कर देती है। इस पर वह कुढ़ जाता है। वह कहता है– **'एतावत्या ऋद्ध्या न तया अहं भणितः –आर्य मैत्रेय! विश्रम्यताम् मल्लेकेन पानीयमपि पीत्वा गम्यताम्'** इत्यादि। वह मजाकिया भी है। कभी-कभी ऐसी बातें कहता है कि हंसी आजाती है। प्रथम अंक में जब चारुदत्त और वसन्तसेना अपने-अपने अपराधों के लिये एक दूसरे से क्षमा प्रार्थना करते हैं उस समय वह कहता है– **'भोः! द्वावपियुवां सुखं प्रणम्य कलमकेदारौ'** इत्यादि। पञ्चम अंक में जब वसन्तसेना अपनी चेटी के साथ चारुदत्त के घर पहुँचती है तो वह पूछता है कि इस अंधेरी रात में जब वृष्टि हो रही है, आप किस लिये आई हैं?

विदूषक क्रोधी भी है परन्तु उसे जितनी जल्दी क्रोध आता है उतनी ही जल्दी शान्त भी हो जाता है। कभी-कभी उसके शीघ्र क्रुद्ध होने के स्वभाव का बुरा परिणाम होता है। प्रथम अंक में रदनिका के अपमान से क्रुद्ध होकर वह शकार और विट को मारने दौड़ता है परन्तु जब विट उसके पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगता है तो उसका क्रोध एकदम शान्त हो जाता है। नवम अंक में न्यायालय के दृश्य में वह शकार पर क्रुद्ध हो जाता है। दोनों में मार-पीट हो जाती है। यहाँ उसके क्रोध का परिणाम बुरा होता है। मारपीट में उसके बगल में वसन्तसेना के आभूषण गिर पड़ते है और चारुदत्त पर अभियोग सिद्ध हो जाता है। विदूषक को गणिका प्रसंग अच्छा नहीं लगता। वह जानता है कि वेश्याओं का हृदय कुटिल होता है। वह वसन्तसेना को भी उसी श्रेणी की गणिका समझता है। उसके विचार में वह 'दृष्टविलासिनी' है। वह उसे भी अविश्वास की दृष्टि से देखता है। जब वसन्तसेना कहती है कि मैं प्रदोष समय चारुदत्त से मिलने आऊंगी तो वह समझता है कि वह रत्नावली से सन्तुष्ट नहीं है। चारुदत्त से कुछ और लेना चाहती है। विदूषक कुछ बुद्धू भी है। पञ्चम अंक में वह चेट के सामान्य प्रश्नों का भी उत्तर नहीं दे पाता। हर बार चारुदत्त से पूछने जाता है।

21.5 सारांश

प्रिय विद्यार्थियों! इस इकाई में आपने शूद्रक एवं उनके मृच्छकटिक के विषय में विस्तृत अध्ययन किया। आप जानते है कि शूद्रक कवि के विषय में हमारे पास प्रामाणिक तथ्यों का अभाव है किन्तु मृच्छकटिक की प्रस्तावना में उद्धृत श्लोकों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शूद्रक कवि सभी विद्याओं और कलाओं में निष्णात् थे तथा सौ वर्ष दस दिन की आयु को पूर्ण करके अग्नि में प्रविष्ट हुये थे। उनके द्वारा रचित एकमात्र कृति मृच्छकटिक है जो कवि की मौलिक कल्पना से उद्भूत है। इस कृति में 10 अंक हैं जिसमें चारुदत्त और वसन्तसेना की प्रणय कथा वर्णित है। इस प्रकरण में कवि ने धूर्तों के चरित का भी वर्णन किया है। शकार, विट, चेट आदि कुछ ऐसे ही पात्र हैं। इस प्रकरण रूपक के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और कला सम्बन्धी तथ्यों की जानकारी भी प्राप्त होती है। उस समय समाज में अनाचार व्याप्त था। राजा निरंकुश होता था। वैदिक धर्म उन्नत अवस्था में था। लोगों की कला के प्रति रुचि थी। मृच्छकटिक के अध्ययन से हमें इन सभी विषयों की विस्तृत जानकारी मिली है। इस इकाई में आपने चारुदत्त, वसन्तसेना, विदूषक, शकार आदि पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का भी परिचय प्राप्त किया।

21.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1 मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1969

2 शूद्रक का मृच्छकटिकः एक आलोचनात्मक अध्ययन – डॉ. विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 1999

3 मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर राय, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, 1997

4 संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास – प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, 2018

21.7 अभ्यास प्रश्न

1 भास कवि का संक्षिप्त परिचय लिखिए।

2 मृच्छकटिक प्रकरण की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।

3 चारुदत्त का चरित्र-चित्रण कीजिए।

4 वसन्तसेना का चरित्र-चित्रण कीजिए।

इकाई 22 मृच्छकटिक – प्रथम एवं द्वितीय अंक

इकाई की रूपरेखा

22.0 उद्देश्य

22.1 प्रस्तावना

22.2 प्रथम अंक

22.2.1 प्रथम अंक की कथावस्तु

22.2.2 प्रथम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 1,2,3,4,5,6,7,8,10,11,12,13,14,15,22,,27,29,31,32,34,36,37,48,49,53,57,58

22.3 द्वितीय अंक

22.3.1 द्वितीय अंक की कथावस्तु

22.3.2 द्वितीय अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या–

5,6,7,8,11,13,14,15

22.4 सारांश

22.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

22.6 अभ्यास प्रश्न

22.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- मृच्छकटिक प्रकरण की प्रथम अंक की कथावस्तु का परिचय प्राप्त करेंगे।
- प्रथम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।
- मृच्छकटिक के द्वितीय अंक की कथावस्तु का परिचय प्राप्त करेंगे।
- द्वितीय अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

22.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! पिछली इकाई में आपने शूद्रक कवि और मृच्छकटिक प्रकरण का परिचय प्राप्त किया। इसके अन्तर्गत आपने शूद्रक कवि का समय, रचनायें, मृच्छकटिक की कथावस्तु, पात्रों का चरित्र-चित्रण आदि का अध्ययन किया। अब आप मृच्छकटिक प्रथम और द्वितीय अंक का अध्ययन करेंगे।

मृच्छकटिक प्रकरण में तत्कालीन सामाजिक और राजनैतिक दशाओं का वर्णन प्राप्त होता है। मंगलाचरण में शिव की स्तुति के पश्चात् इस प्रकरण का प्रारम्भ होता है। प्रस्तावना में सूत्रधार कथावस्तु की ओर संकेत करता है और यह बताता है कि इस प्रकरण में चारुदत्त और वसन्तसेना की प्रणय कथा का वर्णन किया गया है। प्रस्तावना के पश्चात् विट, शकार और चेट द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना का प्रवेश होता है। वह चारुदत्त के घर में प्रवेश कर अपनी रक्षा करती है तथा अपने आभूषण को न्यास के रूप में रख देती है।

द्वितीय अंक में वसन्तसेना और मदनिका के पारस्परिक वार्तालाप से यह सूचना प्राप्त होती है कि वसन्तसेना चारुदत्त से प्रेम करती है। इसी समय माथुरऔर जुआरी द्वारा संवाहक को पकड़ने और उससे दस सुवर्ण मुद्रायें लेने का वर्णन है। वसन्तसेना अपना कंगन देकर संवाहक को छुड़ाती है। इस प्रकार इस इकाई में आप प्रथम और द्वितीय अंक की कथावस्तु और चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

22.2 प्रथम अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के प्रथम अंक की कथावस्तु एवं प्रथम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

22.2.1 प्रथम अंक की कथावस्तु

'मृच्छकटिक' एक प्रकरण रूपक है। इसमें चारुदत्त एवं वसन्तसेना की प्रणय कथा का वर्णन किया गया है। मृच्छकटिक के प्रथम अंक का प्रारम्भ नान्दी पाठ के अनन्तर प्रस्तावना से होता है। इस प्रकरण की प्रस्तावना के माध्यम से सूत्रधार शूद्रक कवि का परिचय देता है। संगीत अभ्यास के अनन्तर वह अपनी क्षुधा शान्त करने के लिए अपने घर जाता है जहाँ उसे यह ज्ञात होता है कि उसकी पत्नी ने 'अभिरूपपति' नामक व्रत किया है। नटी सूत्रधार से किसी ब्राह्मण को भोजन के लिए बुलाने का आग्रह करती है वह चारुदत्त के अभिन्न मित्र मैत्रेय को जो इस प्रकरण का विदूषक हैं, भोजन के लिए आमन्त्रित करता है किन्तु मैत्रेय उसको मना कर देता है। परिणामतः वह किसी अन्य ब्राह्मण की खोज करने लगता है, यहाँ प्रस्तावना समाप्त हो जाती है।

प्रस्तावना समाप्त होने के पश्चात् मैत्रेय रंगमंच पर उपस्थित होता है और अपने मित्र चारुदत्त को जूर्णवृद्ध द्वारा दिया गया चमेली की सुगन्ध से युक्त उत्तरीय देता है। चारुदत्त उत्तरीय ग्रहण करने के पश्चात् अपनी निर्धनता के विषय में सोचता है और मैत्रेय से कहता है कि मृत्यु और निर्धनता में से मृत्यु अच्छी हैं क्योंकि मृत्यु में अल्प-कष्ट है निर्धनता कभी न समाप्त होने वाला दुःख है – **"अल्पक्लेशं मरणं, दारिद्रयमनन्तकं दुःखम्।"** क्षमाशील चारुदत्त अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर निर्धनता का वर्णन करता है तदनन्तर वह मैत्रेय को चौराहे पर मातृ देवियों को बलि भेंट करने के लिए कहता है। तब मैत्रेय के मना करने पर चारुदत्त उसे बलिकर्म के महत्त्व को समझाता है।

इसी समय विट, शकार और चेट के द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना का प्रवेश होता है। ये तीनों भागती हुई वसन्तसेना को रोकने का प्रयास करते हैं। शकार वसन्तसेना को नाणक, नर्तकी, अप्रतिष्ठित आदि संज्ञाओं से सम्बोधित करता है। विट वसन्तसेना से कहता है कि तुम वेश्या हो इसलिए प्रिय और अप्रिय दोनों का समान रूप से सेवन करो। तब वसन्तसेना कहती है कि प्रेम का वास्तविक कारण गुण है बलात्कार नहीं–**'गुणः खल्वनुरागस्य कारणम्, न पुनर्बलात्कारः।'** इसी समय शकार यह बताता है कि यह वसन्तसेना दरिद्र चारुदत्त से प्रेम करती है, मुझसे नहीं तब विट कहता **'रत्नं रत्नेन संगच्छते'** अर्थात् रत्न, रत्न के साथ संयुक्त होता है तथा चारुदत्त का घर बाईं ओर है यह संकेत करता है। तब वसन्तसेना अपने आभूषणों और मालाओं को उतार लेती है और चारुदत्त के घर के दरवाजे पर पहुँच जाती है।

चारुदत्त और विदूषक पुनः रंगमंच पर आते हैं। चारुदत्त के कहने पर विदूषक रदनिका के साथ मातृ देवियों को बलि चढ़ाने निकलता है उसी समय वसन्तसेना प्रज्जवलित दीपक को बुझाकर चारुदत्त के घर में प्रवेश करती है। रदनिका उसी दरवाजे पर खड़ी रहती है और विदूषक दीपक जलाने के लिए अन्दर जाता है तभी वसन्तसेना का पीछा करता हुआ शकार दरवाजे पर खड़ी रदनिका को वसन्तसेना समझकर पकड़ लेता है उसी समय वहाँ दीपक लेकर मैत्रेय आ जाता है और अपना क्रोध प्रकट करने लगता है तब विट मैत्रेय से क्षमा माँगता है और बताता है कि यह रदनिका गलती से पकड़ ली गई है। मैत्रेय रदनिका से कहता है कि अपने साथ हुए इस अनादर को चारुदत्त से मत कहना अन्यथा उनकी पीड़ा दुगुनी हो जाएगी।

चारुदत्त वसन्तसेना को रदनिका समझकर रोहसेन को भीतर लाने के लिए कहता है और उसको जाती पुष्प की सुगन्ध से सुवासित उत्तरीय देता है। विदूषक चारूदत्त से कहता है कि रदनिका यह है तो चारुदत्त कहता है कि यह दूसरी कौन है जो अनजाने में स्पर्श किए हुए मेरे वस्त्र से दूषित हो गई अथवा पराई स्त्री का दर्शन करना उचित नहीं **'न युक्तं परकलत्रदर्शनम्'**। विदूषक चारुदत्त से बताता है कि वसन्तसेना आप पर अनुरक्त है ऐसा शकार का कहना है तथा अपने और शकार के मध्य हुए वार्तालाप को चारुदत्त से निवेदित करता है। वसन्तसेना चारुदत्त के घर में अपने आभूषणों को न्यास के रूप में रखती है। चारुदत्त उसके आभूषणों की रक्षा का कार्य दिन में वर्धमानक को और रात्रि में मैत्रेय को सौंपता है। इसी घटना के साथ 'अलंकारन्यास' नामक प्रथम अंक की समाप्ति होती है।

22.2.2 प्रथम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 1,2,3,4,5,6,7,8,10,11,12,13,14,15,22,,27,29,31,32,34,36,37,48,49,53,57,58

इकाई के इस अंश में आप प्रथम अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, शब्दार्थ, उनके अर्थों एवं उनसे सम्बन्धित टिप्पणियों का अध्ययन करेंगे।

पर्यङ्कग्रन्थिबन्धद्विगुणितभुजगाश्लेषसंवीतजानो–

रन्तः प्राणावरोधव्युपरतसकतलज्ञानरुद्धेन्द्रियस्य।

आत्मन्यात्मानमेव व्यपगतकरणं पश्यतस्तत्त्वदृष्ट्या

शम्भोर्वः पातु शून्येक्षणघटितलयब्रह्मलग्नः समाधिः।।1।।

अन्वयः – पर्यङ्कग्रन्थिबन्धद्विगुणितभुजगाश्लेषजानोः, अन्तः प्राणावरोधव्युपतरसकलज्ञानरुद्धेन्द्रिस्य, तत्त्वदृष्ट्या व्यपगतकरणम् आत्मनि आत्मानम् एव पश्यतः शम्भोः शून्येक्षणघटितलयब्रह्मलग्नः समाधिः वः पातु।

शब्दार्थ – पर्यङ्क = योगाभ्यास का विशेष प्रकार का आसन, ग्रन्थि = गाँठ, रुद्ध = संयत, आत्मानम् = विशुद्ध चैतन्य या ब्रह्मचैतन्य, तत्त्वदृष्ट्या = यथार्थ ज्ञान सदृश आँखों से, शम्भोः = शंकर भगवान् की, वः = आप लोगों की, पातुः = रक्षा करें।

अर्थ – पर्यङ्क नामक योगासन की मुद्रा में द्विगुणित साँप को लपेटने से जिस भगवान् शिव के घुटने बंधे हुए हैं। प्राण आदि वायु को शरीर के अन्दर ही रोक देने से जिसकी समस्त इन्द्रियाँ बाह्य ज्ञान से विरत तथा संयमित हो गयी हैं, जिन्होंने सत्य ज्ञान के द्वारा इन्द्रिय व्यापार-निरोधपूर्वक अपने भीतर आत्मा का दर्शन किया है, उस भगवान् शिव की समाधि जो निराकार ब्रह्म के दर्शन में होने वाली तल्लीनता के कारण ब्रह्म में लगी हुई है – वह समाधि आप सभी की रक्षा करे।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में स्रग्धरा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'म्रो भ्नौ मो नो गुरुश्चेद् हयर्तुरसैरक्ता सुमधुरा।'** अर्थात् स्रग्धरा छन्द के प्रत्येक चरण में मगण, रगण, भगण, नगण, मगण, नगण, और गुरु वर्ण होता है। इसके प्रत्येक चरण में 19 वर्ण होते हैं जिनमें सातवें तथा तेरहवें अक्षर पर यति होती है।

पातु वो नीलकण्ठस्य कण्ठः श्यामाम्बुदोपमः।

गौरीभुजलता यत्र विद्युल्लेखेव राजते।।2।।

अन्वयः – यत्र गौरी भुजलता विद्युल्लेखा इव राजते (सः) श्यामाम्बुदोपमः नीकण्ठस्य कण्ठः वः पातु।

शब्दार्थ – यत्र = जिसमें अर्थात् जिस कण्ठ में, गौरीभुजलता = पार्वती की हाथ रूपी लता, विद्युल्लेखा = बिजली की पंक्ति, श्यामाम्बुदोपमः = नीले मेघों की तरह, नीलकण्ठस्य = शिव का।

अर्थ – जिसमें (कण्ठ में) माँ पार्वती के (गौर वर्ण) लता जैसे हाथ बिजली की पंक्ति के समान सुशोभित होते हैं, वह काले मेघ के समान भगवान् शिव की ग्रीवा, आप सब की रक्षा करे।

टिप्पणी – इस श्लोक के माध्यम से शूद्रक कवि ने प्रकरण की कथावस्तु की ओर संकेत किया हैं। यहाँ 'शिव के कण्ठ में गौरी की भुजा' द्वारा चारुदत्त और वसन्तसेना के प्रेम को दर्शाया गया है। नीलाम्बुद का वर्णन मेघ से ढँके हुए दिन में वसन्तसेना के अभिसरण का सूचक है। श्वेत तथा श्याम वर्ण का एक साथ वर्णन करके शूद्रक कवि ने एक ओर शकरादि के धूर्ततापूर्ण व्यवहार को इंगित किया है तो दूसरी ओर वसन्तसेना के प्रेम को प्रकट किया गया है। इस प्रकार प्रस्तुत श्लोक में पत्रावली नामक नान्दी है।

- प्रस्तुत श्लोक में 'नीलकण्ठस्य कण्ठः' में लाटानुप्रास, 'भुज एव लता' में रूपक अलंकार तथा 'विद्युल्लेखेव' में उपमा अलंकार है। अतः यहाँ संसृष्टि अलंकार का प्रयोग है।
- प्रस्तुत श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'युजोश्चतुर्थतो जेन, पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्'** अर्थात् इस छन्द में चतुर्थ वर्ण के अनन्तर जगण होने से पथ्यावक्त्र नामक छन्द होता है।

द्विरदेन्द्रगतिश्चकोरनेत्रः परिपूर्णेन्दुमुखः सुविग्रहश्च।

द्विजमुख्यतमः कविर्बभूव प्रथितः शूद्रक इत्यगाधसत्त्वः।।3।।

अन्वयः – द्विरदेन्द्रगतिः चकोरनेत्रः परिपूर्णेन्दुमुखः सुविग्रहश्च द्विजमुख्यतमः अगाधसत्त्वः शूद्रकः प्रथितः कविः बभूव।

शब्दार्थ – द्विरदेन्द्रगतिः = गजराज की तरह गति वाले, चकोरनेत्रः = चकोर की तरह नेत्र वाले, परिपूर्णेन्दुमुखः = पूर्णिमा तिथि के चन्द्र के समान सुन्दर मुख वाले, सुविग्रहः = सुन्दर शरीर वाले, अगाधसत्त्वः = अधिक बलशाली, प्रथितः = प्रसिद्ध।

अर्थ – गजराज के समान गति वाला, चकोर के समान नेत्र वाला, पूर्णिमा तिथि के चन्द्र के समान सुन्दर मुख वाला, सुन्दर शरीर वाला, क्षत्रियों में श्रेष्ठतम, अत्यधिक बलशाली शूद्रक नामक प्रसिद्ध कवि हुआ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक से मृच्छकटिक प्रकरण की प्ररोचना आरम्भ होती है। कवि तथा काव्य की प्रशंसा द्वारा सामाजिकों को काव्य की ओर आकर्षित करना प्ररोचना कहलाता है। चकोरनेत्रः = चकोर सदृश नेत्रों से शूद्रक कवि की वीरता प्रकट की गयी है। द्विज = ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य तीनों वर्ण द्विज कहलाते हैं। यहाँ द्विज शब्द का प्रयोग क्षत्रिय के लिए किया गया है।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार है। यहाँ मालभारिणी छन्द का प्रयोग किया गया है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'विषमे ससजा गुरु समे चेत्, सभरा येन तु मालभारिणीयम्।'** अर्थात् जिसके विषम चरणों में सगण, सगण, जगण तथ दो गुरु हों तथा समचरणों में सगण, भगण, रगण और यगण हों वहाँ मालभारिणी छन्द होता है।

ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां,

ज्ञात्वा शर्वप्रसादाद् व्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य।

राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदयेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा,

लब्ध्वा चायुः शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्निं प्रविष्टः।।4।।

अन्वयः – ऋग्वेदं सामवेदं गणितम् अथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां ज्ञात्वा शर्वप्रसादात् अपगततिमिरे चक्षुषी च उपलभ्यः पुत्रं राजानं वीक्ष्य परमसमुदयेन अश्वमेधेन च दृष्ट्वा दशदिनसहितं शताब्दं आयुः च लब्ध्वा शूद्रकः अग्निं प्रविष्टः।

शब्दार्थ – ऋग्वेदम् = ऋग्वेद को, सामवेदम् = सामवेद को, वैशिकीम् = नाट्यशास्त्र को, ज्ञात्वा = जानकर, शर्वप्रसादात् = भगवान् शिव की कृपा से, व्यपगततिमिर = अन्धकार से

मुक्त, उपलभ्य = प्राप्त करके, वीक्ष्य = देखकर, परमसमुदयेन = अत्यधिक उन्नति करने वाले।

अर्थ – ऋग्वेद, सामवेद, गणित, नृत्य गीत आदि चौंसठ कलाओं, नाट्यशास्त्र और हस्तिचालन की शिक्षा प्राप्त कर, भगवान् शिव के आशीर्वाद से अन्धकार से रहित ज्ञान चक्षुओं को प्राप्त कर, अपने पुत्र को राजा के रूप में देखकर तथा अश्वमेघ यज्ञ करके सौ वर्ष दस दिन की आयु पाकर शूद्रक ने अग्नि में प्रवेश किया।

टिप्पणी – वैशिकीम् = वेश + ठक्। इष्ट्वा = यज् + क्त्वा। प्रस्तुत श्लोक में स्रग्धरा छन्द है।

समरव्यसनी प्रमादशून्यः ककुद वेदविदां तपोधनश्च।

परवारणबाहुयुद्धलुब्धः क्षितिपालः किल शूद्रको बभूव।।5।।

अन्वयः – समरव्यसनी, प्रमादशून्यः, वेदविदां ककुदः, तपोधनः च परवारणबाहुयुद्धलुब्धः शूद्रकः क्षितिपालः बभूव किल।

शब्दार्थ – समरव्यसनी = युद्ध-प्रेमी, वेदविदाम् = वेद का ज्ञाता, ककुदः = श्रेष्ठ, तपोधनः = तपस्या करने वाला, परवारणबाहुयुद्धलुब्धः = शत्रु के हाथियों के साथ बाहुयुद्ध का इच्छुक, किल = निश्चय ही प्रसिद्ध है।

अर्थ – युद्ध-प्रेमी, प्रमाद से रहति, वेद का ज्ञान रखने वालों में श्रेष्ठ, तपस्या करने वाला, शत्रुओं के हाथियों के साथ बाहुयुद्ध का इच्छुक तथा प्रजा का पालन करने वाला शूद्रक (नाम का) राजा हुआ, ऐसा निश्चय ही प्रसिद्ध है।

टिप्पणी – समरव्यसनी = समरव्यसन + इन्, समरस्य व्यसनं समरव्यसनं तदस्यास्तीति समरव्यसनी अथवा समरस्य व्यसनी इति, ष.त.। तपोधनः = तप एव धनं यस्य सः, बहुब्रीही समास। त्यसनी = वि + अस् + ल्युट् + इनि।

प्रस्तुत श्लोक में मालभारिणी छन्द है।

अवन्तिपुर्यां द्विजासार्थवाहो युवा दरिद्रः किल चारुदत्तः।

गुणानुरक्ता गणिका च यस्य वसन्तशोभेव वसन्तसेना।।6।।

अन्वयः – अवन्तिपुर्याम् द्विजसार्थवाहः, दरिद्रः युवा चारुदत्तः किल यस्य गुणानुरक्ता वसन्तशोभा इव वसन्तसेना गणिका च (आसीत्)।

शब्दार्थ – द्विजसार्थवाहः = ब्राह्मण व्यापारी, दरिद्रः = निर्धन, यस्य = जिसके, गुणानुरक्ताः = गुणों से प्रेम करने वाली, वसन्तशोभेव = वसन्त ऋतु की सुन्दरता के समान, गणिका = वेश्या।

अर्थ – उज्जयिनी नगरी में (पहले) ब्राह्मण व्यापारी किन्तु (कालान्तर) में दरिद्र युवक चारुदत्त (निवास करता था) और निश्चय ही उसके गुणों से प्रेम करने वाली, वसन्त ऋतु की सुन्दरता के समान वसन्तसेना नाम की गणिका थी।

टिप्पणी – सार्थवाहः = सार्थम् वणिक् समूहम् वहति नयति इति सार्थवाहः। 'वसन्तशोभेव वसन्तसेना' पद में उपमा अलंकार का प्रयोग है। प्रस्तुत श्लोक में उपेन्द्रवज्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ।'** अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण तथा दो गुरु वर्ण होते हैं वहाँ उपेन्द्रवज्रा छन्द होता है।

तयोरिदं सत्सुरतोत्सवाश्रयं नयप्रचारं व्यवहारदुष्टताम्।

खलस्वभावं भवितव्यतां तथा चकार सर्वं किल शूद्रको नृपः।।7।।

अन्वयः – शूद्रको नृपः इदं तयोः सत्सुरतोत्सवाश्रयम्, नयप्रचारं, व्यवहारदुष्टतां खलस्वभावं तथा भवितव्यतां सर्वं चकार किल।

शब्दार्थ – तयोः = उन दोनों (चारुदत्त तथा वसन्तसेना) का, सत्सुरतोत्सवाश्रयम् = श्रेष्ठ आनन्दोत्सव पर आश्रित, नयप्रचारम् = नीति के व्यवहार को, व्यवहारदुष्टताम् = न्याय की दोषपूर्णता को, व्यवहार = विवाद निर्णय सम्बन्धी विचार, भवितव्यताम् = विधि-विधान।

अर्थ – (मृच्छकटिक नामक इस प्रकरण ग्रन्थ में) शूद्रक नाम के राजा ने उन दोनों (चारुदत्त और वसन्तसेना) के श्रेष्ठ आनन्दोत्सव पर आश्रित, नीति के व्यवहार को, न्याय की दोषपूर्णता को, दुर्जनों के चरित्र को तथा विधि के विधान को वर्णित किया है।

टिप्पणी – सत्सुरतोत्सवाश्रयम् = सत्सुरतोत्सवः आश्रयं यस्य तं नयप्रचारम्, बहुब्रीहि समास। प्रस्तुत श्लोक में वंशस्थ छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'जतौ तु वंशस्थमुदीरतं जरौ।'** अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण और रगण हों, वहाँ वंशस्थ छन्द होता है।

शून्यमपुत्रस्य गृहं चिरशून्यं नास्ति यस्य सन्मित्रम्।

मूर्खस्य दिशः शून्याः सर्वं शून्यं द्ररिद्रस्य।।8।।

अन्वयः – अपुत्रस्य गृहं शून्यं, यस्य सन्मित्रं न अस्ति (तस्य गृहम्) चिरशून्यं (अस्ति), मूर्खस्य दिशाः शून्यः (अस्ति), दरिद्रस्य सर्वं शून्यम् (भवति)।

शब्दार्थ – शून्यम् = सूना, अपुत्रस्य = पुत्रहीन, चिरशून्यम् = दीर्घकाल तक सूना, दिशः शून्याः = दिशायें सूनी हैं।

अर्थ – पुत्रहीन व्यक्ति का घर सूना है, जिस व्यक्ति के अच्छे मित्र नहीं हैं उसका भी घर दीर्घकाल तक सूना है, मूर्ख के लिए (सभी) दिशायें सूनी हैं, निर्धन के लिए सब कुछ सूना है।

टिप्पणी – अपुत्रस्य = नास्ति पुत्रः यस्य सः अपुत्रः तस्य, बहुब्रीहि समास।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है।यहाँ आर्या छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि।

अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या।।

अर्थात् जिस छन्द के चरणों में क्रमशः 12, 18, 12, और 15 मात्राएं होती हैं वहाँ आर्या छन्द होता है।

सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते घनान्धकारेष्विव दीपदर्शनम्।

सुखात्तु यो याति नरो दरिद्रतां धृतः शरीरेण मृतः स जीवति।।10।।

अन्वयः – घनान्धकारेषु दीपदर्शनम् इव दुःखानि अनुभूय सुखम् हि शोभते यः नरः सुखात्तु दरिद्रतां याति सः शरीरेण धृतः अपि मृत (इव) जीवति।

शब्दार्थ – घनान्धकारेषु = गहन अन्धकार में, सुखात् = सुख के पश्चात्, दीपदर्शनम् = दीपक का दर्शन, शोभते = सुशोभित होता है, शरीरेणधृतः = शरीर धारण किए हुए, मृतः स जीवति = मृतक के समान जीवन व्यतीत करता है।

अर्थ – गहन अन्धकार में दीपक के दर्शन के समान दुःखों का अनुभव करने के पश्चात् सुख सुशोभित होता है अर्थात् अच्छा लगता है। किन्तु जो मनुष्य सुख भोगने के पश्चात् निर्धनता को प्राप्त होता है, वह शरीर धारण किए हुए भी मृतक के समान जीवन व्यतीत करता है।

टिप्पणी – सुखात् = 'ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च' वार्तिक से कर्म में पंचमी विभक्ति का प्रयोग है।

प्रस्तुत श्लोक के पूर्वार्द्ध में उपमा अलंकार तथा उत्तरार्द्ध में विरोधाभास अलंकार है। यहाँ वंशस्थ छन्द है।

दारिद्रयान्मरणाद्वा मरणं मम रोचते न दारिद्रयम्।

अल्पक्लेशं मरणं, दारिद्रयमनन्तकं दुःखम् ।।11।।

अन्वयः – द्रारिद्रयात् मरणात् वा मम मरणं रोचते, मरणम् अल्पक्लेशं (अस्ति) दारिद्रयात् अनन्तकं दुःखम् (अस्ति)।

शब्दार्थ – मरणम् = मृत्यु, रोचते = अच्छी लगती है, अल्पक्लेशम् = कम कष्टकारी, अनन्तकम् = कभी न समाप्त होने वाला।

अर्थ – निर्धनता और मृत्यु में से मुझे मृत्यु अच्छी लगती है निर्धनता नहीं, मृत्यु कम कष्टकारी है किन्तु निर्धनता कभी न समाप्त होने वाला दुःख है।

टिप्पणी – दारिद्रयात् = 'दारिद्रयमाश्रित्य' इस प्रकार आश्रित्य पद का अध्याहार करके 'ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च' वार्तिक से कर्म में पंचमी विभक्ति का प्रयोग है।

प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिंग अलंकार है तथा आर्या छन्द है।

एतत्तु मां दहति यद्गृहमस्मदीयं,

क्षीणार्थमित्यतिथयः परिवर्जयन्ति।

संशुष्कसान्द्रमदलेखमिव भ्रमन्तः,

कालात्यये मधुकराः करिणः कपोलप्।।12।।

अन्वयः – भ्रमन्तः मधुकरः कालात्यये संशुष्कसान्द्रमदलेखं करिणः कपोलम् (परिवर्जयन्ति) इव अतिथयः अस्मदीयं गृहं क्षीणार्थम् अपि परिवर्जयन्ति एतत्तु मां दहति।

शब्दार्थ – मधुकरः = भ्रमर, कालात्यये = समय बीत जाने पर, करिणः = हाथी, कपोलम् = गण्डस्थल (गाल), परिवर्जयन्ति – त्याग देते हैं।

अर्थ – भ्रमर करते हुए भौंरे समय बीत जाने पर सूखी हुई गाढी मद की धारा वाले हाथी के गण्डस्थल (गाल) को त्याग देते हैं, उसी प्रकार अतिथि लोग हमारा घर धन से रहित है यह सोचकर त्याग देते हैं, मुझे यह बात व्यथित करती है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द हैं, जिसका लक्षण इस प्रकार है – **"उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।"** अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में तगण, भगण, दो जगण और दो गुरु वर्ण होते हैं वहाँ वसन्ततिलका छन्द होता है।

सत्यं न मे विभवनाशकृतास्ति चिन्ता,

भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति।

एतत्तु मां दहति नष्टधनाश्रयस्य,

यत्सौहृदादपि जनाः शिथिलीभवन्ति।।13।।

अन्वयः – सत्यम् विभवनाशकृता मे चिन्ता नास्ति हि भाग्यक्रमेण धनानि भवन्ति (तथा) यान्ति तु एतत् माम् दहति यत् नष्टधनाश्रयस्य सौहृदात् अपि जनाः शिथिलीभवन्ति।

शब्दार्थ – सत्यम् = सत्य है, विभवनाशकृता = धन के नष्ट हो जाने की, भाग्यक्रमेण = भाग्य के अनुसार, यान्ति = चला जाता है, नष्टधनाश्रयस्य = धनरूपी आश्रय के नष्ट हो जाने पर।

अर्थ – सत्य है धन के नष्ट हो जाने की मुझे चिन्ता नहीं है क्योंकि भाग्य के अनुसार धन (प्राप्त) होता है या चला जाता है किन्तु मुझे यह बात व्यथित करती है कि जिसका धन रूपी आश्रय नष्ट हो गया है उसकी मित्रता से भी मनुष्य शिथिल हो जाते हैं।

टिप्पणी – सुहृद् = शोभनं हृदयं यस्य सः (बहुब्रीहि समास), शिथिलीभवन्ति = शिथिल + च्वि + भवन्ति।

प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिङ्ग अलंकार और वसन्ततिलका छन्द है।

दारिद्रयाद्घ्रियमेति ह्रीपरिगतः प्रभ्रश्यते तेजसो

निस्तेजाः परिभूयते परिभवान्निर्वेदमापद्यते।

निर्विण्णः शुचमेति शोकपिहितो बुद्ध्या परित्यज्यते

निर्बुद्धिः क्षयमेत्यहो निर्धनता सर्वापदमास्पदम्।।14।।

अन्वयः – (मनुष्यः) दारिद्रयात् ह्रियम् एति, ह्रीपरिगतः तेजस्यः प्रभ्रश्यते, निस्तेजः परिभूयते, परिभवात् निर्वेदम् आपद्यते, निर्विण्णः शुचम् एति, शोकपिहितः बुद्ध्या परित्यज्यते, निर्बुद्धिः क्षयमेति, अहो! निर्धनता सर्वापदाम् आस्पदम्।

शब्दार्थ – ह्रियम् = लज्जा को, एति = प्राप्त होता है, तेजसः = यश, प्रभ्रश्यते = च्युत या भ्रष्ट हो जाता है, निस्तेजाः = कान्तिहीन, परिभूयते = अपमानित होता है, निर्वेदम् = खेद को, निर्विण्णः = ग्लानि से युक्त, शुचम् = शोक, आस्पदम् = निवास स्थान।

अर्थ – (मनुष्य) दरिद्रता से लज्जा को प्राप्त होता है, लज्जा को प्राप्त (व्यक्ति) तेजरहित हो जाता है, तेजरहित तिरस्कृत हो जाता है, तिरस्कार से ग्लानि को प्राप्त होता है, ग्लानियुक्त शोक को प्राप्त होता है, शोकाकुल (व्यक्ति) बुद्धि (विवेक) के द्वारा त्याग दिया जाता है, विवेकरहित (व्यक्ति) नाश को प्राप्त हो जाता है। अहो! निर्धनता सब आपदाओं का निवास स्थान है।

टिप्पणी – निर्धनता = निवृतं धनं यस्मात् सः निधनः तस्य भावः (बहुब्रीहित समास)।

प्रस्तुत श्लोक में कारणमाला अंलकार है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है जिसका लक्षण है – **"सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्।"** अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में मगण, सगण, जगण, सगण, दो तगण तथा एक गुरु वर्ण हों वहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द होता है। इसमें 19 अक्षर होते हैं तथा 12वें अक्षर पर यति होती है।

निवासश्चिन्तायाः परपरिभवो वैरमपरं

जुगप्सा मित्राणां स्वजनविद्वेषकरणम्।

वनं गन्तुं बुद्धिर्भवति च कलत्रात्परिभवो

हृदिस्थः शोकाग्निर्न च दहति सन्तापयति च।।15।।

अन्वयः – (दारिद्रयम् हि पुरुषस्य) चिन्तायाः निवासः, परपरिभवः, अपरं वैरम्, मित्राणां जुगुप्सा, स्वजनजनविद्वेषकरणम्, वनं गन्तुं बुद्धिः भवति, च कलत्रात् परिभवः, च हृदस्थि शोकाग्निः न दहति सन्तापयति।

शब्दार्थ – निवासः = घर, परपरिभवः = अत्यधिक तिरस्कार, अपरम् = अन्य, मित्राणाम् = मित्रों की, कलत्रात् = स्त्री से, दहति = भस्म, सन्तापयति = सन्तप्त करता है।

अर्थ – दरिद्रता ही मुनष्यों के चिन्ता का घर है, दूसरों के द्वारा किए जाने वाले अनादर का कारण है, दूसरी शत्रुता है, मित्रों की घृणा है, अन्य लोगों के द्वेष का कारण है, वन में चले जाने की इच्छा होती है और पत्नी के द्वारा भी उसका तिरस्कार होता है, और हृदय में स्थित शोकाग्नि एक बार ही जला नहीं डालती किन्तु सन्तप्त करती है।

टिप्पणी – परपरिभवः – परश्चासौ परिभवश्चेति (कर्मधारय समास), परेषां परिभवः इति (षष्ठी तत्पुरुष समास), अपरं – नास्ति परं यस्मात् (बहुब्रीही समास) प्रस्तुत श्लोक में आतिशयोक्ति, उल्लेख, रूपक, विशेषोक्ति आदि अलंकार हैं। यहाँ शिखरिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **"रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी।"** अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण एवं एक लघु एवं एक गुरु वर्ण हो वहाँ शिखरिणी छन्द होता है। इसके प्रत्येक चरण में 17 वर्ण होते हैं छठें वर्ण पर यति होती है।

किं त्वं पदैर्मम पदानि विशेषयन्ती

व्यालीव यासि पतगेन्द्रभयाभिभूता।

वेगादहं प्रविसृतः पवनं न रुन्ध्यां

तवन्निग्रहे तु वरगात्रिं न मे प्रयत्नः।।22।।

अन्वयः – पतगेन्द्रभयाभिभूता व्याली इव पदैः मम पदानि विशेषयन्ती त्वम् किं यासि? वेगात् प्रविसृतः अहं पवनं न रुन्ध्याम्। हे वरगात्रि! त्वन्निग्रहे मे प्रयत्नः न।

शब्दार्थ – पतगेन्द्र = पक्षिराज, व्याली = सर्पिणी, विशेषयन्ती = अतिक्रमण करती हुई, वेगात् = वेग से, प्रविसृतः = अत्यन्त तीव्रगामी, रुन्ध्याम् = रोकना, वरगात्रि = सुन्दर शरीर वाली।

अर्थ – पक्षिराज गरुड़ से भयभीत हुई सर्पिणी के समान अपने पगों से मेरे पगों का अतिक्रमण करती हुई तुम क्यों जा रही हो? वेग से दौड़ता हुआ मैं (अत्यन्त तीव्रगामी) वायु को भी नहीं रोक सकता (अर्थात् अवश्य रोक सकता हूँ।) हे सुन्दर शरीर वाली! मेरा प्रयत्न तुमको रोकने का नहीं है अर्थात् मैं तुम्हें बलात् नहीं रोकना चाहता।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

किं त्वं कटीतटनिवेशिमुद्वहन्ती

ताराविचित्ररुचिरं रशनाकलापम्।

वक्त्रेण निर्मथितचूर्णमनः शिलेन

त्रस्ताद्भुतं नगरदैवतवत्प्रयासि।।27।।

अन्वयः – कटीतटनिवेशितं तारविचित्ररुचिरं रशनाकलापम् उद्वहन्ती, निर्मथितचूर्णमनः शिलेन वक्त्रेण, त्रस्ताद्भुतं नगरदैवतवत् त्वं किं प्रयासि?

शब्दार्थ – कटीतटनिवेशितम् = कटि प्रदेश में बाँधे गए, ताराविचित्ररुचिरम् = चमकदार मोती अथवा तारे जैसी मोतियों से विचित्र और सुन्दर, निर्मथितचूर्णमनः शिलेन = तिरस्कृत किया है चूर्णित मनसिल को जिसने ऐसे मुख से उपलक्षित।

अर्थ – कटि प्रदेश में बाँधे गए चमकदार मोती अथवा तारों जैसी मोतियों से विचित्र और सुन्दर मेखला को धारण करती हुई, तिरस्कृत किया है चूर्णित मनसिल को जिसने ऐसे मुख से उपलक्षित, भयभीत हुई नगर-देवता की भाँति तुम क्यों भाग रही हो?

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में तद्धितोपमा एवं उत्प्रेक्षा अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है।

किं भीमसेनो जमदग्निपुत्रः कुन्तीसुतो वा दशकन्धरो वा।

एषोऽहं गृहीत्वा केशहस्ते दुःशासनस्यानुकृतिं करोमि।।29।।

अन्वयः – किं जमदग्निपुत्रः भीमसेनः वा, कुन्तीसुतः वा दशकन्धरः; एषः अहं केशहस्ते गृहीत्वा दुःशासनस्य अनुकृतिं करोमि।

शब्दार्थ – केशहस्ते = केशपाश में, दशकन्धरः = रावण, कुन्तीसुतः = कुन्ती का पुत्र, अनुकृतिम् = अनुकरण, करोमि = करूँगा।

अर्थ – क्या जमदग्नि का पुत्र भीमसेन, अथवा कुन्ती का पुत्र अथवा रावण, यह मैं तुम्हारे केशपाश को पकड़कर रावण का अनुकरण करता हूँ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में इन्द्रवज्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **"स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।"** अर्थात् इन्द्रवज्रा छन्द के प्रत्येक चरण में दो तगण, जगण और दो गुरु होता है इसमें 11 अक्षर होते हैं।

तरुणजनसहायश्चिन्त्यतां वेशवासो

विगणय गणिका त्वं मार्गजाता लतेव।

वहसि हि धनहार्यं पण्यभूतं शरीरं

सममुपचर भद्रे! सुप्रियं चाप्रियं च।।31।।

अन्वयः – वेशवासः तरुणजनसहायः चिन्त्यतां त्वं मार्गजाता लता इव गणिका विगणय, धनहार्यं पण्यभूतं शरीरं वहसि। भद्रे! सुप्रियं अप्रियं च समम् उपचर।

शब्दार्थ – तरुणजनसहायः = युवकजन हैं आश्रय जिसके ऐसा, वेशवासः = वेश्यालय का जीवन, विगणय = विशेष रूप से विचारो, धनहार्यम् = धन से ग्राह्य, पण्यभूतम् = विक्रेय योग्य, उपचर = सेवन करो।

अर्थ – वेश्यालय के जीवन को युवाओं की सहायता पर आश्रित समझो, सोचो तुम मार्ग में उत्पन्न हुई लता के तुल्य गणिका (वेश्या) हो, इस पर विशेष रूप से विचार करो, क्योंकि धन से ग्राहय विक्रेय योग्य शरीर को तुम धारण करती हो। इसलिए प्रिय और अप्रिय दोनों का समान रूप से सेवन करो।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा और काव्यलिङ्ग अलंकार है। यहाँ मालिनी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **"ननमययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः"** अर्थात् मालिनी छन्द के प्रत्येक चरण में दो नगण, मगण, तथा दो यगण होते हैं। इसमें 15 वर्ण होते हैं 8वें वर्ण पर यति होती है।

वाप्यां स्नाति विचक्षणो द्विजवरो मूर्खोऽपि वर्णाधमः

फुल्लां नाम्यति वायसोऽपि हि लतां या नामिता बर्हिणा।

ब्रह्मक्षत्रविशस्तरन्ति च यया नावा तयैवेतरे

त्वं वापीव लतेव नौरिव जनं वेश्यासि सर्वं भज।।32।।

अन्वयः – विचक्षणः द्विजवरः, वर्णाधमः मूर्खः अपि वाप्यां स्नाति, फुल्लां लतां बर्हिणा नामिता (ताम्) वायसः आपि नाम्यति, ब्रह्मक्षत्रविशः यथा नावा तरन्ति तया एव इतरे। त्वं वेश्या अस्ति (अतः) वापी इव, लता इव, नौः इव च सर्वं जनं भज।

शब्दार्थ – विचक्षणः = विद्वान्, फुल्लाम् = पुष्पित, वायसः = कौआ, बर्हिणा = मयूर, नाम्यति = झुकाई गई थी, वापी = बावली, नौः = नाव, भज = सेवन करो।

अर्थ – विद्वान् ब्राह्मण, नीच जाति वाला मूर्ख भी एक ही वापी में स्नान करता है, पुष्पित लता जो पहले मयूर के द्वारा झुकाई गई थी, उसी लता को कौआ भी झुका देता है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य जिस नाव से पार उतरते हैं उसी नाव से दूसरे लोग भी। तुम वेश्या हो (इसलिए) वापी के समान, लता के समान और नाव के समान सभी लोगों का सेवन करो।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में त्वं वापीव, लतेव, नौरिव में मालोपमा अलंकार है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः।

असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता।।34।।

अन्वयः – तमः अङ्गानि लिम्पति इव, नभः अंजनम् वर्षति इव, असत्पुरुषसेवा इव मे दृष्टिः विफलतां गता।

शब्दार्थ – तमः = अन्धकार, लिम्पति इव = मानो लिप्त सा कर रहा है, अंजनम् = काजल, वर्षति इव = मानो बरसा सा रहा है, दृष्टिः = आँखें, असत्पुरुषसेवा इव = मानो दुष्ट मनुष्यों की सेवा के समान।

अर्थ – अन्धकार अंगों को मानो लिप्त सा कर रहा है, आकाश मानो काजल बरसा रहा है, मानो दुष्ट मनुष्यों की सेवा के समान मेरी दृष्टि निष्फलता को प्राप्त हो गयी है।

टिप्पणी – विफलताम् = विगतं फलं यस्याः सा विफला (बहुब्रीहि समास) तस्य भावः।

प्रस्तुत श्लोक के पूर्वार्द्ध में उत्प्रेक्षा अलंकार एवं उत्तरार्द्ध में उपमा अलंकार है परिणामतः यहाँ अलंकारों की संसृष्टि है। यहाँ अनुष्टप् छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है–

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघुपंचमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।

अर्थात् अनुष्टुप् छन्द के प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं, जिसमें पंचम वर्ण लघु तथा षष्ठ वर्ण गुरु होता है। द्वितीय और चुतर्थ चरण में सप्तम वर्ण लघु होता है तथा अन्य अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण में सप्तम वर्ण दीर्घ हाता है।

दारिद्रयात्पुरुषस्य बान्धवजनो वाक्ये न संतिष्ठते
सुस्निग्धा विमुखीभवन्ति सुहृदः स्फारीभवन्त्यापदः।
सत्त्वं ह्रासमुपैति शीलशशिनः कान्तिः परिम्लायते
पापं कर्म च यत्परैरपि कृतं तत्तस्य संभाव्यते।।36।।

अन्वयः – बान्धवजनः दारिद्रयात् पुरुषस्य वाक्ये न संतिष्ठते, सुस्निग्धा सुहृदः विमुखीभवन्ति, आपदः स्फारीभवन्ति, सत्त्वं ह्रासम् उपैति, शीलशशिनः कान्तिः परिम्लायते, यत् परैः अपि कृतं पापं कर्म तत् तस्य संभाव्यते।

शब्दार्थ – बान्धवजनः = बन्धु लोग, सुस्निग्धा = अत्यन्त स्नेही, स्फारीभवन्ति = अधिक हो जाती हैं, सत्त्वम् = शक्ति, परिम्लायते = धुँधली हो जाती है, सुहृदः = मित्र, ह्रासमुपैति = क्षय को प्राप्त हो जाते हैं।

अर्थ – बन्धु लोग भी निर्धनता के कारण (निर्धन) व्यक्ति के कहने में नहीं रहते, नितान्त स्नेही मित्र भी विमुख हो जाते हैं, आपत्तियाँ अधिक हो जाती हैं, शक्ति क्षय को प्राप्त हो जाती है, चरित्र रूपी चन्द्रमा की कान्ति धुँधली हो जाती है, जो दूसरों के द्वारा भी किया गया पापकर्म है वह उसी के द्वारा किया हुआ समझा जाता है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में रूपक अलंकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग किया गया है।

सङ्गं नैव हि कश्चिदस्य कुरुते संभाषते नादरा–

त्संप्राप्तो गृहमुत्सवेषु धनिनां सावज्ञामालोक्यते।

दूरादेव महाजनस्य विरहत्यल्पच्छदो लज्जया

मन्ये निर्धनता प्रकाममपरं षष्ठं माहपातकम्।।37।।

अन्वयः – कश्चित् अस्य सङ्गं न कुरुते, न एव आदरात् संभाषते, धनिनां गृहम् उत्सवेषु सम्प्राप्तः सावज्ञाम् अवलोक्यते, अल्पच्छदः लज्जया महाजनस्य दूरात् एव विरहति। मन्ये निर्धनता अपरं षष्ठं महापातकम्।

शब्दार्थ – अवज्ञाम् = अनादरपूर्वक, महाजनस्य = बड़े लोगों से, अल्पच्छदः = अल्प वस्त्र वाला, लज्जया = लज्जा के कारण, दूरात् = दूर से ही, महापातकम् = महापाप।

अर्थ – कोई भी व्यक्ति इसका साथ नहीं करता, न ही (उसके साथ) आदर से बोलता है, धनी लोगों के घर उत्सवों में गया हुआ अनादर की दृष्टि से देखा जाता है, अल्प वस्त्र वाला होने के कारण लज्जावश बड़े लोगों से दूर ही घूमता है। मानता हूँ कि निर्धनता भी एक अन्य छठाँ महापाप है।

टिप्पणी – अल्पच्छदः – अल्पः छदः वस्त्रं यस्य सः (बहुब्रीहि समास)।

प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग शूद्रक कवि के द्वारा किया गया है।

दीनानां कल्पवृक्षः स्वगुणफलनतः सज्जनानां कुटुम्बी

आदर्शः शिक्षितानां सुचरितनिकषः शीलवेलासमुद्रः।

सत्कर्ता नावमन्ता पुरुषगुणनिधिर्दक्षिणोदारसत्त्वो

ह्येकः श्लाघ्यः सः जीवत्यधिकगुणतया चोच्छ्वसन्तीव चान्ये।।48।।

अन्वयः – दीनानां स्वगुणफलनतः कल्पवृक्षः, सज्जनानां कुटुम्बी, शिक्षितानाम् आदर्शः, सुचरितनिकषः, शीलवेलासमुद्रः सत्कर्ता, नावमन्ता, पुरुषगुणनिधिः, दक्षिणोदारसत्वः, अधिकगुणतया एकः श्लाघ्यः सः जीवति अन्ये उच्छ्वसन्ति इव च।

शब्दार्थ – कल्पवृक्षः = अभिलाषा पूर्ण करने वाला वृक्ष, सुचरितनिकषः = उत्तम चरत्रि की कसौटी, सत्त्वः = स्वभाव, कुटुम्बी = परिपालक, नावमन्ता = अनादर न करने वाले, श्लाघ्यः = प्रशंसनीय, उच्छ्वसन्ति = साँस लेते हैं।

अर्थ – दीनों के लिए अपने गुण रूपी फलों से नम्र अभिलाषा पूर्ण करने वाला वृक्ष (कल्पवृक्ष) हैं, सज्जन पुरुषों के परिपालक हैं, शिक्षितों के आदर्श, सच्चरित की कसौटी, सदाचार रूपी मर्यादा के (न लाँघने वाले) समुद्र, सत्कार करने वाले, किसी का अनादर न करने वाले, मनुष्योचित गुणों की खान वाले, सरल तथा उदार स्वभाव वाले, गुणों की अधिकता के कारण एक प्रशंसनीय वह (चारुदत्त) जीवित है अन्य लोग तो केवल साँस लेते हैं।

टिप्पणी – आदर्शः = आ + दृश् + घञ्, कल्पवृक्षः = कल्पस्य वृक्षः (षष्ठी तत्पुरुष समास)। प्रस्तुत श्लोक में उल्लेख, रूपक, उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकार है। यहाँ स्रग्धरा छन्द है।

अन्धस्य दृष्टिरिव पुष्टिरिवातुरस्य

मूर्खस्य बुद्धिरिव सिद्धिरिवालसस्य।

स्वल्पस्मृतेर्व्यसनिनः परमेव विद्या

त्वां प्राप्य सा रतिरिवारिजने प्रनष्टा।।49।।

अन्वयः – अन्धस्य दृष्टिः इव, आतुरस्य पुष्टिः इव, मूर्खस्य बुद्धिः इव, आलसस्य सिद्धिः इव, स्वल्पस्मृतेः व्यसनिनः परमा विद्या इव, अरिजने रतिः इव सा त्वां प्राप्य प्रनष्टा।

शब्दार्थ – आतुरस्य = रोग से व्याकुल, रोगी, पुष्टिः = शारीरिक बल, सिद्धिः = कार्यों में सफलता, व्यसनिनः = द्यूत आदि व्यसनों में आसक्त, परमा विद्या = उत्कृष्ट विद्या, अरिः = शत्रु।

अर्थ – अन्धे की दृष्टि के समान, रोग से व्याकुल रोगी के शारीरिक बल के समान, मूर्ख की बुद्धि के समान, आलसी की कार्यों में सफलता के समान, अल्पस्मृति वाले द्यूत आदि व्यसनों में आसक्त, उत्तम विद्या के समान, शत्रुओं में प्रेम के समान वह तुमको प्राप्त करके लुप्त हो गई।

टिप्पणी – व्यसनिनः = व्यसनमस्य अस्तीति व्यसनी, व्यसन + इन्।

प्रस्तुत श्लोक में मालोपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

आलाने गृह्यते हस्ती वाजी वल्गासु गृह्यते।

हृदये गृह्यते नारी यदिदं नास्ति गम्यताम्।।50।।

अन्वयः – हस्ती आलाने गृह्यते, वाजी वल्गासु गृह्यते, नारी हृदये गृह्यते, यदि इदम् नास्ति (तदा) गम्यताम्।

शब्दार्थ – हस्ती = हाथी, आलाने = खम्भे में, वाजी = घोड़ा, वल्गासु = लगाम से, हृदये = हृदय से, गृह्यते = वश में की जाती है।

अर्थ – हाथी खम्बे से (बाँधकर) रोका जाता है, घोड़ा लगाम से रोका जाता है, स्त्री हृदय से वश में की जाती है, यदि यह (हृदय-प्रेम) नहीं है तो जाइए।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में निदर्शना अलंकार एवं पथ्यावक्त्र छन्द है।

यदा तु भाग्यक्षयपीडितां दशां नरः कृतान्तोपहितां प्रपद्यते।

तदास्य मित्राण्यपि यान्त्यमित्रतां चिरानुरक्तोऽपि विरज्यते जनः।।53।।

अन्वयः – यदा नरः कृतान्तोपहिताम्, भाग्यक्षयपीडितां दशां प्रपद्यते तदा अस्य मित्राणि अपि अमित्रतां यान्ति, चिरानुरक्तोऽपि जनः विरज्यते।

शब्दार्थ – कृतान्तः = विधि, दैव, भाग्यम् = पूर्व अर्जित शुभ अशुभ कर्म, चिरानुक्तः = दीर्घकाल से अनुराग करने वाला, विरज्यते = विरक्त हो जाता है।

अर्थ – जब मनुष्य विधि द्वारा प्राप्त कराई गई, पूर्व अर्जित शुभ अशुभ कर्म के द्वारा पीड़ित दशा को प्राप्त हो जाता है, तब उसके मित्र भी शत्रुता को प्राप्त हो जाते हैं, दीर्घकाल से अनुराग करने वाला व्यक्ति भी विरक्त हो जाता है।

टिप्पणी – पीडिताम् = पीडा संजाता अस्याः ताम्, पीड़ा + इतच्।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार और वंशस्थ छन्द है।

उदयति हि शशाङ्कः कामिनीगण्डपाण्डुः

ग्रहगणपरिवारो राजमार्गप्रदीपः।

तिमिरनिकरमध्ये रश्मयो यस्य गौराः,

स्त्रुतजल इव पङ्के क्षीरधाराः पतन्ति।।57।।

अन्वयः – कामिनीगण्डपाण्डुः, ग्रहगणपरिवारः राजमार्गप्रदीपः शशाङ्कः उदयति, तिमिरनिकरमध्ये यस्य गौराः रश्मयः स्त्रुतजल पङ्के क्षीरधाराः इव पतन्ति।

शब्दार्थ – कामिनी = सुन्दर युवती, पाण्डुः = गौरवर्ण, शशाङ्कः = चन्द्रमा, तिमिर = अन्धकार, स्त्रुतजल = समाप्त हो गया है जल जिसमें, पङ्के = कीचड़ में।

अर्थ – सुन्दर युवती के कपोल के समान गौरवर्ण, नक्षत्र समूह रूपी परिवार वाला तथा राजमार्ग का दीपक चन्द्रमा निकल रहा है, अन्धकार समुदाय के मध्य में जिसकी उज्जवल किरणें समाप्त हो गया है जल जिसमें, ऐसे कीचड़ में दूध की धाराओं के समान पड रही हैं।

टिप्पणी – कामिनी = कामोऽस्याः अस्तीति।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा और रूपक अलंकार है। यहाँ मालिनी छन्द हैं

राजमार्गो हि शून्योऽयं रक्षिणः संचरन्ति च।

वञ्चना परिहतव्या बहुदोषा हि शर्वरी।।58।।

अन्वयः – अयं राजमार्गः शून्यः, रक्षिणः संचरन्ति च, वञ्चना परिहतव्या हि शर्वरी बहुदोषा (भवति)।

शब्दार्थ – शून्यः = सूना है, रक्षिणः = पहरेदार, संचरन्ति = घूम रहे हैं, वञ्चना = ठगी, छल, शर्वरी = रात्रि।

अर्थ – यह राजमार्ग सूना है और पहरेदार घूम रहे हैं, ठगी से बचना चाहिए क्योंकि रात्रि वास्तव में बड़ी दोषपूर्ण होती है।

टिप्पणी – बहुदोषाः = बहवः दोषाः यस्याम् (बहुब्रीहि समास)।

प्रस्तुत श्लोक में संकर अलंकार है। यहाँ पथ्यावक्त्र छन्द है।

22.3 द्वितीय अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के द्वितीय अंक की कथावस्तु एवं द्वितीय अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

22.3.1 द्वितीय अंक की कथावस्तु

मृच्छकटिक प्रकरण की द्वितीय अंक की कथावस्तु में शूद्रक कवि ने तात्कालिक सामाजिक जीवन का वर्णन किया है। इस अंक का प्रारम्भ वसन्तसेना और मदनिका के पारस्परिक वार्तालाप से होता है। मदनिका वसन्तसेना के अन्यमनस्क होने का कारण पूछती है तथा यह जानने का प्रयास करती है कि आर्या वसन्तसेना का यह प्रेम किसके प्रति है। तब वसन्तसेना कहती है तुम मेरे साथ कामदेवायतन उद्यान गई थी, उसके बाद भी अनजान व्यक्ति के समान इस प्रकार का प्रश्न पूछ रही हो। वसन्तसेना मदनिका से पूछती है कि उसका नाम क्या है? इस पर वह कहती है कि वे सेठों के बीच में रहने वाले आर्य चारुदत्त हैं किन्तु ऐसा सुना जाता है कि वह निर्धन हैं। इस पर वसन्तसेना कहती है, **"दरिद्रपुरुषसंक्रान्तमनाः खलु गणिका लोकेऽवचनीया भवति।"** अर्थात् निर्धन व्यक्ति में मन लगाने वाली वेश्या निःसन्देह संसार मे निन्दनीय नहीं होती। इस पर मदनिका कहती है, **"किं हीनकुसुमं सहकार्यपादपं मधुकर्यः पुनः सेवन्ते"** अर्थात् क्या भ्रमरियाँ बौर रहित आम के वृक्ष का भी सेवन करती हैं। मदनिका वसन्तसेना को चारुदत्त के साथ अभिसार करने के लिए कहती है। इस पर वसन्तसेना कहती है कि शीघ्रता में ऐसा न हो जाए कि आर्य चारुदत्त का दर्शन ही दुर्लभ हो जाए। तब मदनिका कहती है कि इसीलिए आपने आभूषणों को धरोहर के रूप में रखा है। वसन्तसेना मदनिका के कथन का समर्थन करती है।

नेपथ्य से संवाहक का स्वर सुनाई देता है और माथुर जुआरी के साथ रंगमंच में प्रवेश करता है। माथुर जुआरी से संवाहक को पकड़ने के लिए कहता है। दोनों देव मन्दिर में प्रवेश करते है और मूर्ति की ओर देखकर उसके विषय में विभिन्न प्रकार की बातें करते हैं। दोनों वहीं बैठकर जुआ खेलने लगते हैं। संवाहक पाँसे के शब्द को सुनकर अपनी मनोविकारों को प्रकट करता है। माथुरऔर जुआरी संवाहक से दस सुवर्ण मुद्राएं माँगते हैं। उसी समय दर्दुरक का प्रवेश होता है। दर्दुरक, माथुर और संवाहक के बीच वार्तालाप होने लगता है। इसी का मौका देखकर संवाहक वहाँ से भाग जाता है। वह वसन्तसेना के घर में प्रवेश करता है तथा वसन्तसेना से सम्पूर्ण वृत्तान्त निवेदित करता है और यह भी बताता है कि मैं पहले आर्य चारुदत्त का सेवक था। वसन्तसेना संवाहक को पर्याप्त सम्मान देती है और अपना कंगन देकर उसको माथुर तथा जुआरी से मुक्त कराती है।

नेपथ्य से यह ज्ञात होता है कि कर्णपूरक वसन्तसेना के खुण्टमोडक नामक हाथी के उपद्रव को शान्त करता है और वसन्तसेना को आर्य चारुदत्त का उत्तरीय प्रदान करता है। इसी घटना के साथ द्यूतकर संवाहक नामक द्वितीय अंक समाप्त होता है।

22.3.2 द्वितीय अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या – 5,6,7,8,11,13,14,15

इकाई के इस अंश में आप द्वितीय अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, शब्दार्थ, उनके अर्थों एवं उनसे सम्बन्धित टिप्पणियों का अध्ययन करेंगे।

अरे, कत्ताशब्दो निर्नाणकस्य हरति हृदयं, मनुष्यस्य।

ढक्काशब्द इव नराधिपस्य प्रभ्रष्टराज्यस्य।।5।।

अन्वयः – अरे! प्रभ्रष्टराज्यस्य नराधिपस्य हृदयं ढक्काशब्द हरति इव निर्नाणकस्य मनुष्यस्य (हृदयम्) कत्ताशब्दः (हरति)।

शब्दार्थ – कत्ता = पाँसा, कौड़ी, निर्नाणक = धनहीन, निर्धन, ढक्का = युद्ध का नगाड़ा।

अर्थ – जिस प्रकार प्रभ्रष्ट राज्य वाले राजा का हृदय युद्ध के नगाड़े के शब्द से हर लिया जाता है उसी प्रकार धनहीन मनुष्य का हृदय पाँसे के शब्द से हर लिया जाता है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार है। यहाँ विपुला छन्द है जो आर्या का ही एक प्रकार है –

पथ्या विपुला चपला मुखचपला जघनचपला च।
गीत्युपगीत्युद्गीतय आर्यागीतिश्च नवधाऽऽर्या।।

जानामि न क्रीडिष्यामि सुमेरुशिखरपतनसंनिभं द्यूतम्।
तथापि खलु कोकिलमधुरः कत्ताशब्दो मनो हरति।।6।।

अन्वयः – जानामि सुमेरुशिखरपतनसंनिभं द्यूतं न क्रीडिष्यामि तथापि कोकिलमधुरः कत्ताशब्दः खलु मनः हरति।

शब्दार्थ – सुमेरुशिखरः = सुमेरु पर्वत की चोटी, द्यूतम् = जुआं, कोकिल = कोयल, मनः = मन को, संनिभम् = अत्यन्त कष्टदायक।

अर्थ – जानता हूँ, सुमेरु पर्वत की चोटी से गिरने के समान अत्यन्त कष्टदायक जुआँ को नहीं खेलूँगा फिर भी कोयल की वाणी के समान मधुर पाँसे का शब्द निश्चय ही मन को हर लेता है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और विपुला छन्द है।

न गणयति पराभवं कुतश्चिद्धरति ददाति च नित्यमर्थजातम्।
नृपतिरिव निकाममायदर्शी विभववता समुपास्यते जनेन।।7।।

अन्वयः – (द्यूतम्) पराभवं न गणयति, कुश्चित् (धनम्) हरति नित्यमर्यजातं ददाति च। नृपतिः इव निकामम् आदर्शी विभववता जनेन समुपास्यते।

शब्दार्थ – पराभवम् = तिरस्कार, नृपतिः = राजा, निकामम् = अत्यन्त, आयदर्शी = धन प्राप्ति को दिखलाने वाला।

अर्थ – (जुआँ) तिरस्कार को नहीं गिनता है, कहीं से (धन) ले लेता है और (जीतने वाले विजेता को) लगातार धन देता रहता है। राजा के समान अत्यन्त धन प्राप्ति को दिखलाने वाले ऐश्वर्ययुक्त व्यक्ति के द्वारा सेवन किया जाता है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में पूर्णोपमा अलंकार है। यहाँ पुष्पिताग्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है, **'अयुजि न युगरेफतो, यकारौ युजि च नजौ जरगाश्चपुष्पिताग्रा'** अर्थात् जिसके प्रथम और तृतीय चरण में दो नगण, रगण और यगण हो तथा 12 वर्ण हो, द्वितीय और चतुर्थ चरण में नगण, दो जगण, रगण और एक गुरु हो तथा 13 वर्ण हों वहाँ पुष्पिताग्रा छन्द होता है।

द्रव्यं लब्धं द्यूतेनैव दारा मित्रं द्यूतेनैव।

दत्तं भुक्तं द्यूतेनैव सर्वं नष्टं द्यूतेनैव।।8।।

अन्वयः – द्यूतेन एव द्रव्यं लब्धम्, द्यूतेन एव दारा मित्रं (लब्धम्), द्यूतेन एव दत्तं भुक्तम्, द्यूतेनैव सर्वं नष्टम्।

शब्दार्थ – द्रव्यम् = धन, दारा = पत्नी, भुक्तम् = योग किया, नष्टम् = नष्ट किया।

अर्थ – जुएं से ही धन की प्राप्ति की, जुएं से ही पत्नी, मित्र प्राप्त किये, जुएं से ही दिया और उपभोग किया, जुएं से ही सर्वस्व नष्ट कर दिया।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में विषम अलंकार है। यहाँ विद्युन्माला छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकर है – **'मो मो गो गो विद्युन्माला'** अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में 8 वर्ण हों तथा 2 मगण और 2 गुरु वर्ण हों वहाँ विद्युन्माला छन्द होता है।

अयं पटः सूत्रदरिद्रतां गतो ह्यं पटश्छिद्रशतैरलङ्कृतः।

अयं पटः प्रवारितुं न शक्यते ह्यं पटः संवृत्तः एव शोभते।।10।।

अन्वयः – अयं पटः सूत्रदरिद्रतां गतः, अयं पटः हि शतैः छिद्रैः अलङ्कृतः, अयं पटः प्रवारितुं न शक्यते, अयं पटः हि संवृत्तः एव शोभते।

शब्दार्थ – पटः = वस्त्र, सूत्र = धागा, दरिद्रताम् = जीर्णता को, अलङ्कृत = सुशोभित, प्रवारितुम् = ढंकना, संवृतः = लिपटा हुआ।

अर्थ – यह वस्त्र धागे की जीर्णता को प्राप्त हो गया है, यह वस्त्र निश्चय ही सैकड़ों छिद्रों से सुशोभित है, यह वस्त्र (शरीर को) ढंकने में समर्थ नहीं है, यह वस्त्र निश्चय ही लिपटा हुआ ही शोभित होता है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में वंशस्थ छन्द है।

पादेनैकेन गगने द्वितीयेन च भूतले।

तिष्ठाम्युल्लम्बितस्तावद्यावत्तिष्ठति भास्करः ।।11।।

अन्वयः – एकेन पादेन गगने द्वितीयेन भूतले च, तावत् उल्लम्बितः तिष्ठामि यावत् भास्करः तिष्ठति।

शब्दार्थ – पादेन = पैर के द्वारा, भूतले = पृथ्वी पर, उल्लम्बितः = लटका हुआ, भास्करः = सूर्य।

अर्थ – एक पैर के द्वारा आकाश में और दूसरे के द्वारा पृथ्वी पर तभी तक लटका हुआ रुक सकता हूँ जब तक सूर्य रहता है।

टिप्पणी – उल्लम्बितः = उत् + लम्बितः।

प्रस्तुत श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है।

दुर्वर्णोऽसि विनष्टोऽसि दशस्वर्णस्य कारणात्।

पञ्चेन्द्रियसमायुक्तो नशे व्यापाद्यते त्वया ।।13।।

अन्वयः – दुर्वर्णः असि, विनष्टः असि, दशसुवर्णस्य कारणात् पञ्चेन्द्रियसमायुक्तः नरः त्वया व्यापाद्यते।

शब्दार्थ – दुर्वर्णः = नीच वर्ण का, विनष्टः = भ्रष्ट, व्यापाद्यते = मारा जा रहा है।

अर्थ – (तुम) नीच वर्ण के हो, भ्रष्ट हो, सोने की दस मुद्राओं के कारण पाँच इन्द्रियों से युक्त मनुष्य तुम्हारे द्वारा मारा जा रहा है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिङ्ग अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

यः आत्मबलं ज्ञात्वा भारं तुलितं वहति मनुष्यः।

तस्य स्खलनं न जायते न च कान्तारगतो विपद्यते।।14।।

अन्वयः – यः मनुष्यः आत्मबलं ज्ञात्वा तुलितं भारं वहति, तस्य स्खलनं न जायते, कान्तारगतः च न विपद्यते।

शब्दार्थ – आत्मबलम् = अपने बल को, स्खलनम् = पतन, कान्तार = दुर्गम मार्ग विपद्यते = विपत्ति से ग्रस्त।

अर्थ – जो मुनष्य अपने बल को जानकर उसके अनुसार सन्तुलित भार को वहन करता है, उसका पतन नहीं होता, वह दुर्गम मार्ग पर चलने से विपत्ति ग्रस्त नहीं होता है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार और आर्या छन्द है।

सत्कारधनः खलु सज्जनः कस्य न भवति चलाचलं धनम्।

यः पूजयितुमपि न जानाति सः पूजाविशेषमपि जानाति।।15।।

अन्वयः – खलु सत्कारः सज्जनः धनः, चलाचलं धनं कस्य न भवति च। यः पूजयितुम् अपि न जानति, सः पूजाविशेषमपि जानाति।

शब्दार्थ – चलाचलम् = चंचल, अस्थायी, जानाति = जानता है।

अर्थ – निश्चय ही सत्कार करना सत्पुरुषों का धन है, चञ्चल (अस्थायी) सम्पदा किसके पास नहीं होती है, जो सम्मान करना भी नहीं जानता है, वह सम्मान विशेष को जान लेता है अर्थात् जो दूसरों के प्रति किए गए सम्मान को नहीं जानते हैं ऐसे मनुष्य क्या अपने प्रति किए गए सम्मान को जानते हैं।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार हैं। कुछ विद्वान् इस श्लोक में वैतालीय छन्द तथा कुछ मात्रासमक छन्द मानते है।

22.4 सारांश

प्रिय छात्रों! 'संस्कृत साहित्यशास्त्र एवं साहित्य' पाठ्यक्रम की यह इकाई मृच्छकटिक प्रकरण के प्रथम और द्वितीय अंक से सम्बन्धित है। यह प्रकरण ग्रन्थ तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक दशाओं को सह्रदय पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। उज्जयिनी नगरी में निवास करने वाले दरिद्र चारुदत्त ने इस प्रकरण के प्रथम अंक में निर्धनता का बड़ा ही सजीव एवं मार्मिक वर्णन किया है। प्रस्तावना की समाप्ति के पश्चात् वह अपने मित्र मैत्रेय के समक्ष दरिद्रता के विभिन्न पक्षों को प्रकट करता है। वह कहता है कि जिसके पास धन नहीं है उसका सर्वस्व सूना होता है। वह व्यक्ति शरीर धारण करते हुए भी मृतक के समान जीवन व्यतीत करता है।

चारुदत्त का मत है कि निर्धनता एक ऐसा कष्ट है जो कभी समाप्त नहीं होता है मनुष्य ऐसे प्राणी से मित्रता भी नहीं करते हैं। वह कहता है कि निर्धनता सभी प्रकार की आपदाओं का निवास स्थान है। शकार, विट और चेट वसन्तसेना का पीछा करते हैं। विट वसन्तसेना से कहता है कि तुम वेश्या हो इसलिए प्रिय तथा अप्रिय दोनों का समान रूप से सेवन करो। शकार वसन्तसेना को भाँति-भाँति के यत्न करके रोकने की चेष्टा करता है किन्तु वह चारुदत्त के घर में प्रवेश कर जाती है और वहाँ अपने आभूषणों को न्यास के रूप में रखकर अपने घर चली जाती है।

द्वितीय अंक में एक ओर जहाँ वसन्तसेना मदनिका को चारुदत्त के प्रति अपने प्रेम के विषय में बताती है तो वहीं दूसरी ओर माथुर और सभिक के द्वारा पीछा किए जाते हुए संवाहक का वर्णन शूद्रक कवि ने किया है। संवाहक जुएं में दस सुवर्ण मुद्रायें हार जाता है। दर्दुरक आकर संवाहक को वहाँ से भगा देता है। संवाहक वासवदत्ता के घर में प्रवेश कर जाता है तब वासवदत्ता अपना कंगन देकर संवाहक को मुक्त कराती है।

इस प्रकार इस इकाई में आपने प्रथम और द्वितीय अंक की कथावस्तु और चयनित श्लोकों का अध्ययन किया।

22.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1969
- शूद्रक का मृच्छकटिकः एक आलोचनात्मक अध्ययन – डॉ. विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 1999
- मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर राय, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, 1997
- संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास – प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, 2018

22.6 अभ्यास प्रश्न

1. मृच्छकटिक प्रकरण के प्रथम अंक का कथासार अपने शब्दों में लिखिए।
2. **"सत्यं न मे विभवनाशकृतास्ति चिन्ता......।।"** इस श्लोक की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिये।
3. **"वाप्यां स्नाति विचक्षणः........।।"** श्लोक की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए।
4. मृच्छकटिक प्रकरण के द्वितीय अंक की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।

इकाई 23 मृच्छकटिक – तृतीय एवं चतुर्थ अंक

इकाई की रूपरेखा

23.0 उद्देश्य

23.1 प्रस्तावना

23.2 तृतीय अंक

23.2.1 तृतीय अंक की कथावस्तु

23.2.2 तृतीय अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 1,2,6,5,8,11,12,13,15,17,19,22,24,25,26,27,28,29,30

23.3 चतुर्थ अंक

23.3.1 चतुर्थ अंक की कथावस्तु

22.3.2 चतुर्थ अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या–

1,2,14,6,12,13,14,15,16,17,18,20,22,2325,32

23.4 सारांश

23.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

23.6 अभ्यास प्रश्न

23.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- मृच्छकटिक प्रकरण की तृतीय अंक की कथावस्तु का परिचय प्राप्त करेंगे।
- तृतीय अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।
- मृच्छकटिक प्रकरण की चतुर्थ अंक की कथावस्तु का परिचय प्राप्त करेंगे।
- चतुर्थ अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

23.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! 'संस्कृत साहित्यशास्त्र एवं साहित्य' पाठ्यक्रम का यह खण्ड 'मृच्छकटिक' प्रकरण से सम्बन्धित है। इस खण्ड की 22वीं इकाई में आपने 'मृच्छकटिक' प्रकरण के प्रथम और द्वितीय अंक की कथावस्तु तथा उन अंकों से चयनित श्लोकों का अध्ययन किया। इस इकाई में आप तृतीय और चतुर्थ अंक की कथावस्तु तथा तृतीय और चतुर्थ अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

मृच्छकटिक प्रकरण में शूद्रक कवि ने तात्कालिक सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था को बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। द्यूतकर संवाहक नामक द्वितीय अंक की समाप्ति के पश्चात् तृतीय अंक में शूद्रक कवि ने चौरकर्म का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। इस अंक में चारुदत्त और विदूषक रेभिल का संगीत सुनकर मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं। दोनों घर लौटते हैं। चेट दरवाजा खोलता है तथा स्वर्णभाण्ड की रक्षा का कार्य विदूषक को सौंपकर विश्राम करने चला जाता है। रात्रि में शर्विलक सेंध करके चारुदत्त के घर में प्रवेश करता है और स्वर्णभाण्ड को चुरा लेता है। प्रातःकाल घर में सेंध देखकर रदनिका शोर करने लगती है। जब चारुदत्त को यह ज्ञात होता है कि स्वर्णभाण्ड चोरी हो गया है उस समय भी वह अपने चरित्र के अनुकूल आचरण करता हुआ विदूषक से प्रतिवाद नहीं करता है अपितु प्रसन्न होकर कहता है कि चोर उसके घर से निराश होकर नहीं गया। चारुदत्त की पत्नी धूता विदूषक को रत्नामाला देकर वसन्तसेना के घर भेजती है और वर्धमानक चारुदत्त के आदेश पर सेंध बन्द कर देता है। इस प्रकार सन्धिच्छेद नामक तृतीय अंक की समाप्ति होती है।

चतुर्थ अंक में मदनिका और शर्विलक के प्रेम का चित्रण किया गया है। शर्विलक चोरी के आभूषणों को ले जाकर मदनिका को देता है। वह मदनिका से बताता है कि उसने उसको दास्य कर्म से मुक्त कराने के लिए चौरकर्म किया है। मदनिका आभूषणों को देखकर पहचान लेती है और बताती है कि यह आभूषण आर्या वसन्तसेना के हैं। उन्होंने इन आभूषणें को आर्य चारुदत्त के घर में न्यास के रूप में रखा था। मदनिका शर्विलक से कहती है कि तुम इन आभूषणों को चारुदत्त का सम्बन्धी बनकर आर्या वसन्तसेना को दे दो। शर्विलक उन आभूषणों को आर्या वसन्तसेना को दे देता है। आर्या वसन्तसेना भी मदनिका को शर्विलक को सौंप देती है तथा दोनों के लिए बहली का प्रबन्ध करवाकर ससम्मान उनको भेजती है। उसी समय विदूषक भी रत्नामाला लेकर वसन्तसेना के पास आता है। वसन्तसेना रत्नमाला ले लेती है और रात्रि के प्रथम पहर में चारुदत्त से मिलने का सन्देश विदूषक के माध्यम से पहुँचवाती है। वसन्तसेना चेटी से कहती है कि इस आभूषण को ले लो। हम चारुदत्त से रमण करने चलेंगे। इसी के साथ मदनिका शर्विलक नामक चतुर्थ अंक की समाप्ति होती है। इस प्रकार इस इकाई में आप तृतीय और चतुर्थ अंक की कथावस्तु और चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे। अध्ययन को सुगम बनाने के लिए मूल श्लोकों को अन्वय, शब्दार्थ, अर्थ और विशेष सान्दर्भिक टिप्पणियों सहित प्रस्तुत किया गया है।

23.2 तृतीय अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के तृतीय अंक की कथावस्तु एवं तृतीय अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

23.2.1 तृतीय अंक की कथावस्तु

आप जानते हैं कि 'मृच्छकटिक' एक प्रकरण रूपक है। आपने इस प्रकरण की प्रथम एवं द्वितीय अंक की कथावस्तु का अध्ययन कर लिया है। इकाई के इस अंश में आप तृतीय अंक की कथावस्तु का अध्ययन करेंगे। मृच्छकटिक प्रकरण के तृतीय अंक की कथावस्तु चारुदत्त

के घर में शर्विलक द्वारा की गई चोरी पर आधारित है। चेट कहता है कि आधी रात्रि व्यतीत हो गई परन्तु आर्य चारुदत्त अभी तक नहीं आए, अतः मैं बाहरी दरवाजे वाली कोठरी में जाकर सोता हूँ। उसी समय चारुदत्त और विदूषक प्रवेश करते हैं। चारुदत्त विदूषक से कहता है कि रेभिल ने बहुत अच्छा गाया, वीणा तो वास्तव में बिना समुद्र से निकला हुआ रत्न है, **"वीणा हि नामासमुद्रोत्थितं रत्नम्।"** इस प्रकार रेभिल के गाने की प्रशंसा करते हुए चारुदत्त और विदूषक अपने घर पहुँचते हैं। वर्धमानक द्वार खोलता है और वसन्तसेना के आभूषणों की रक्षा का कार्य विदूषक को सौंपकर स्वयं सोने चला जाता है। तत्पश्चात् शर्विलक का प्रवेश होता है। वह वृक्ष वाटिका के पास सेंध करके चारदीवारी के अन्दर प्रवेश करता है और चतुःशाला में भी सेंध करने का प्रयास करता है। किस स्थान पर सेंध लगाऊँ? किस प्रकार की सेंध बनाऊँ? इन तथ्यों पर विचार करता है। वह पूर्ण कुम्भ की आकृति वाली सेंध बनाता है। उसके पश्चात् घर में प्रवेश करता है। वहाँ विदूषक निद्रा में आभूषणों के चोरी हो जाने के भय से चारुदत्त को स्वर्णभाण्ड सौंपता है। शर्विलक आगे बढकर उसके हाथ से स्वर्णभाण्ड ले लेता है और अपनी प्रेयसी मदनिका को दास्य कर्म से मुक्त कराने के विषय में सोचता है।

तत्पश्चात् रदनिका का प्रवेश होता है। शर्विलक रदनिका को देखकर भाग जाता है। रदनिका शोर करती है। चारुदत्त और विदूषक जाग जाते हैं। चारुदत्त सेंध को देखकर उसकी आकृति की प्रशंसा करता है। विदूषक चारुदत्त से कहता है कि अच्छा हुआ मैंने पहले ही स्वर्णभाण्ड आपको दे दिया था। यह सुनकर चारुदत्त आश्चर्यचकित हो जाता है किन्तु वह प्रतिवाद नहीं करता है। चारुदत्त इस बात से प्रसन्न है कि चोर उसके घर से निराश होकर नहीं गया। चारुदत्त एक बात से चिन्तित है कि उज्जयिनी निवासी लोग चोरी की इस घटना पर विश्वास न करके उसको ही बदनाम करेंगे। इसी समय चारुदत्त की पत्नी धूता को घटना के विषय में पता चलता है। धूता विदूषक को रत्नामाला देकर वसन्तसेना के घर भेजती है। चारुदत्त वर्धमानक चेट को सेंध बन्द करने का आदेश देकर स्वयं सन्ध्याकालीन उपासना करने चला जाता है। इस प्रकार यहाँ प्रकरण के सन्धिच्छेद नामक तृतीय अंक की समाप्ति होती है।

23.2.2 तृतीय अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 1,2,6,5,8,11,12,13,15,17,19,22,24,25,26,27,28,29,30

इकाई के इस अंश में आप तृतीय अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, शब्दार्थ, उनके अर्थों एवं उनसे सम्बन्धित टिप्पणियों का अध्ययन करेंगे।

सुजनः खलु भृत्यानुकम्पकः स्वामी निर्धनकोऽपि शोभते।

पिशुनः पुनर्द्रव्यगर्वितो दुष्करः खलु परिणमदारुणः।।1।।

अन्वयः – भृत्यानुम्पकः सुजनः स्वामी निर्धनकोऽपि खलु शोभते पुनः द्रव्य गर्वितः पिशुनः दुष्करः परिणामदारुणः खलु (भवति)।

शब्दार्थ – सुजनः = सज्जन, पिशुनः = दुर्जन, दुष्करः = दुःख में सेवनीय।

अर्थ – अपने सेवकों पर अनुकम्पा करने वाला सज्जन स्वामी निर्धन होने पर भी निश्चित ही सुशोभित होता है किन्तु धन के मद से गर्व का अनुभव करने वाला दुर्जन दुःख में सेवनीय और अन्त में निश्चय ही भयंकर फल देने वाला होता है।

टिप्पणी – पिशुनः = पिशुनो दुर्जनः खलः (अमरकोश), दुष्करः = दुष्+कृ+खल्।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ वैतालीय छन्द का प्रयोग है

सस्यलम्पटवलीवर्दो न शक्यो वारयितु–

मन्यकलत्रप्रसक्तो न शक्यो वारयितुम्।

द्यूतप्रसक्तमनुष्यो न शक्यो वारयितुं

योऽपि स्वाभाविकदोषो न शक्यो वारयितुम्।।2।।

अन्वयः – सस्यलम्पटवलीवर्दः वारयितुं न शक्यः, अन्यकलत्रप्रसक्तः वारयितुं न शक्यः, द्यूतप्रसक्तमनुष्यः वारयितुं न शक्यः, यः अपि स्वाभाविकदोषः वारयितुं न शक्यः।

शब्दार्थ – वलीवर्दः = बैल, वारयितुम् = रोकने में, कलत्र = स्त्री, प्रसक्तः = लगा हुआ।

अर्थ – धान्य के लोभी बैल को रोका नहीं जा सकता, दूसरे की स्त्री में जिसकी आसक्ति है ऐसे पुरुष को रोका नहीं जा सकता, जुएं में आसक्त मनुष्य को रोका नहीं जा सकता, जितने भी स्वभावसिद्ध दोष हैं, उनका निवारण नहीं किया जा सकता।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसालंकार और शक्वरी छन्द है।

असौ हि दत्त्वा तिमिरावकाशमस्तं व्रजत्युन्नतकोटिरिन्दुः।

जलावगाढस्य वनद्विपस्य तीक्ष्णं विषाणाग्रमिवावशिष्टम्।।6।।

अन्वयः – तिमिरावकाशं दत्त्वा उन्नतकोटिः असौ इन्दुः अस्तं व्रजति इव हि जलावगाढस्य वनद्विपस्य तीक्ष्णं विषाणाग्रम् अवशिष्टम्।

शब्दार्थ – तिमिर = अन्धकार, इन्दुः = चन्द्रमा, जलावगाढस्य = जल में डूबे हुए, वनद्विपस्य = जंगली हाँथी।

अर्थ – अन्धकार को अवकाश प्रदान करके उन्नत अग्रभाग वाला यह चन्द्रमा अस्ताचल की ओर जा रहा है। जिस प्रकार जल में डूबे हुए जंगली हाँथी के तीक्ष्ण दाँत का अग्रभाग (जल में डूबने से) बच गया हो।

टिप्पणी – अवगाढ = अव+गाढ+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और उपजाति छन्द है। उपजाति छन्द का लक्षण इस प्रकार है '**अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः**' अर्थात् इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के चरणों के मिलने से बना हुआ छन्द उपजाति कहलाता है।

इयं हि निद्रा नयनावलम्बिनी ललाटदेशादुपसर्पतीव माम्।

अदृश्यरूपा चपला जरेव या मनुष्यसत्त्वं परिभूय वर्धते।।8।।

अन्वयः – हि ललाटदेशे नयनावलम्बिनी इयम् निद्रा माम् उपसर्पति इव, अदृश्यरूपा चपला जरा इव मनुष्यसत्त्वं परिभूय वर्धते।

शब्दार्थ – ललाट = मस्तक, चपला = चंचल, जरा = वृद्धावस्था, सत्त्व = बल, परिभूय = तिरस्कृत।

अर्थ – क्योंकि मस्तक प्रदेश से आँखों में उतरती हुई यह निद्रा मेरी ओर आ रही है, जो अदृश्यरूप वाली, चंचल वृद्धावस्था के समान मनुष्य के बल को तिरस्कृत करके आगे बढ़ती है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकार है। यहाँ वंशस्थ छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है– **"जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ"** अर्थात् इसके प्रत्येक चरण में 12 अक्षर होते हैं जिनमें जगण, तगण, जगण, और रगण होता है

कामं नीचमिदं वदन्तु पुरुषाः स्वप्ने च यद्वर्धते

विश्वस्तेषु च वञ्चनापरिभवश्चौर्यं न शौर्यं हि तत्।

स्वाधीना वचनीयतापि हि वरं बद्धो न सेवाञ्जलि–

र्मार्गोह्येष नरेन्द्रसौप्तिकवधे पूर्वं कृतो द्रौणिना।।11।।

अन्वयः – यत् स्वप्ने वर्धते, विश्वस्तेषु वञ्चनापरिभवः च हि तत् शौर्यं न, पुरुषः इदं कामम् नीचं वदन्तु, वचनीयता अपि स्वाधीना, वरं सेवाञ्जलिः बद्धः न, हि एषः मार्ग पूर्वं नरेन्द्रसौप्तिकवधे द्रौणिना कृतः।

शब्दार्थ – कामम् = चाहे, भले ही, वञ्चनापरिभवः = द्रव्यादि के हरण द्वारा पीड़ित करना, मार्गो ह्येष = यह मार्ग, विश्वस्त जनों की वञ्चना का मार्ग, द्रौणिना = अश्वत्थामा।

अर्थ – जो स्वप्न में बढ़ता है, विश्वस्त मनुष्यों को द्रव्यादि के हरण द्वारा पीड़ित करता है और निश्चय ही वह चोरी का कार्य वीरों का कार्य नहीं है। मनुष्य इसको भले ही नीच कार्य कहें, निन्दनीय कार्य भी किसी के अधीन न रहने के परिणामस्वरूप श्रेष्ठ है, सेवा में हाथ जोड़ना श्रेष्ठ नहीं है क्योंकि इस मार्ग को पहले ही राजा (पाण्डव) के सोते हुए (पुत्रों) के वध में द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने बना दिया था

टिप्पणी – सुप्तः = स्वप्+क्त, सौप्तिकः = सुप्त+ठञ्, द्रौणिना = द्रोणस्यापत्यं पुमान्, द्रोण+इञ्।

प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिङ्ग और अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्'** अर्थात् जिस छन्द में मगण, सगण, जगण, सगण, दो तगण और एक गुरुवर्ण हो, बारह और सात वर्णों पर यति हो, वहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द होता है।

देशः को नु जलावसेकशिथिलो यस्मिन्न शब्दो भवे–

द्भित्तीनां च न दर्शनान्तरगतः सन्धिः करालो भवेत्।

क्षारक्षीणतया च लोष्टककृशं जीर्णं क्व हर्म्यं भवे–

त्कस्मिन्स्त्रीजनदर्शनं च न भवेत्स्यादर्थसिद्धिश्च मे।।12।।

अन्वयः – जलावसेकशिथिलः भित्तीनां कः नु देशः यस्मिन् शब्दः न भवेत्, सन्धिः करालः भवेत्, न च दर्शनान्तरगतः, क्व च हर्म्यं क्षारक्षीणतया लोष्टक कृशं जीर्णं च, कस्मिन् स्त्रीजनदर्शनं न भवेत् मे अर्थसिद्धिः च स्यात्।

शब्दार्थ – जलावसेक = जल से भीगा हुआ, भित्ती = दीवार, करालः = विशाल, दर्शनान्तरगतः = दृष्टि का विषय, दिखलाई देने योग्य।

अर्थ – जल से भीगे होने के कारण शिथिल दीवारों का कौन सा ऐसा स्थान है जहाँ (सेंध लगाने पर) शब्द न हों, सेंध विशाल हो और किसी के द्वारा दिखलाई देने योग्य न हो और कहाँ घर क्षार से दुर्बल ढेलों से युक्त होने के कारण पतला और जर्जर है। किस स्थान पर स्त्रीजन का दर्शन नहीं होगा और मेरे कार्य की सिद्धि हो जाएगी।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

पद्मव्याकोशं भास्करं बालचन्द्रं

वापीविस्तीर्णं स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम्।

तत्कस्मिन्देशे दर्शयाम्यात्मशिल्पं

दृष्ट्वा श्वो यं यद्विस्मयं यान्ति पौराः।।13।।

अन्वयः – पद्मव्याकोशम्, भास्करम्, बालचन्द्रम्, वापी विस्तीर्णम्, स्वस्तिकम्, पूर्णकुम्भम् (चौर्यशास्त्रे वर्णितं सप्तविधानां मध्येऽत्र कीदृशः विधातव्यः) तत् कस्मिन् देशे आत्मशिल्पं दर्शयामि, यत् यं दृष्ट्वा श्वः पौराः विस्मयं यान्ति।

शब्दार्थ – पद्मव्याकोशम् = विकसित कमल के समान आकृति वाली, भास्करम् = सूर्य के समान गोल तथा विशाल, बालचन्द्रम् = द्वितीया के चन्द्रमा के समान वक्राकार, वापी = बावड़ी।

अर्थ – विकसित कमल के समान आकृति वाली, सूर्य के समान गोल तथा विशाल, द्वितीया के चन्द्रमा के समान वक्राकार, बावड़ी के समान विशाल, स्वास्तिक के चिह्न जैसा, नीचे से चौड़े तथा ऊपर से सँकरे घड़े के समान (चौर्यशास्त्र में वर्णित सेंध लगाने के इन सात प्रकारों के मध्य यहाँ किसका प्रयोग करूँ) तो किस स्थान पर अपना कौशल दिखाऊँ जिसको देखकर कल नागरिक लोग आश्यर्चचकित हो जायें।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में वैश्वदेवी अलंकार है जिसका लक्षण इस प्रकार है –**"बाणाश्वैश्छिन्ना वैश्वदेवी ममौ यौ"** अर्थात् इस छन्द के प्रत्येक चरण में दो मगण तथा दो यगण होते हैं। इसमें 12 वर्ण होते हैं तथा पाँचवे वर्ण पर यति होती है।

अनया हि समालब्धं न मां द्रक्ष्यन्ति रक्षिणः।

शस्त्रं च पतितं गात्रे रुजं नोत्पादयिष्यति।।15।।

अन्वयः – अनया समालब्धं मां रक्षिणः हि न द्रक्ष्यन्ति, गात्रे च पतितम् शस्त्रम् रुजं न उत्पादयिष्यति।

शब्दार्थ – समालब्धम् = लेपन किए गए, रक्षिणः = रक्षक, गात्रे = शरीर में, रुजम् = पीड़ा।

अर्थ – इस (योगरोचना) से लेपन किए गए मुझको रक्षक लोग नहीं देख पायेंगे और शरीर के ऊपर पड़ा हुआ शस्त्र पीड़ा उत्पन्न नहीं करेगा।

टिप्पणी – समालब्धम् = सम्+आ+लभ्+क्त।

यहाँ अनुष्टुप् छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

पंचमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्वितचुर्थयोः।

षष्ठं गुरु विजानीयात् एतत् पद्यस्य लक्षणम्।।

अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु, छठाँ गुरु और दूसरे तथा तीसरे चरणों में सातवाँ वर्ण लघु होता है वहाँ अनुष्टुप् छन्द होता है।

शिखा प्रदीपस्य सुवर्णपिञ्जरा महीतले सन्धिमुखेन निर्गता।
विभाति पर्यन्तमः समावृता सुवर्णरेखेव कषे निवेशिता।।17।।

अन्वयः – सुवर्णपिञ्जरा सन्धिमुखेन महीतले निर्गता पर्यन्ततमः समावृता प्रदीपस्य शिखा कषे निवेशिता सुवर्णरेखा इव विभाति।

शब्दार्थ – सुवर्णपिञ्जरा = सोने के समान पीली, निर्गता = निकली हुई, विभाति = सुशोभित, कषे = कसौटी।

अर्थ – सोने के समान पीली, सेंध के मार्ग से भूमि पर निकली हुई, चारों ओर अन्धकार से व्याप्त, दीपक की शिखा कसौटी पर खींची गई, सुवर्ण रेखा के समान सुशोभित होती है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और वंशस्थ छन्द का प्रयोग किया गया है।

धिगस्तु खलु दारिद्र्यमनिर्वेदितपौरुषम्।
यदेतद्गर्हितं कर्म निन्दामि च करोमि च ।।19।।

अन्वयः – अनिर्वेदित पौरुषं दारिद्र्यं खलु धिक् अस्तु, यद् एतद् गर्हितं कर्म निन्दामि च करोमि च।

शब्दार्थ – दारिद्र्यम् = निर्धनता, गर्हितम् = निन्दित, पौरुषम् = पुरुषार्थ।

अर्थ – अप्रदर्शित पुरुषार्थ वाली इस निर्धनता को निश्चय ही धिक्कार है, जो इस प्रकार के निन्दित कार्य की निन्दा कर रहा हूँ और उस कार्य को कर भी रहा हूँ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिङ्ग अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

उपरितलनिपातितेष्टकोऽयं
शिरसि तनुर्विपुलश्च मध्यदेशे।
असदृशजनसंप्रयोगभीरो–

हृदयमिव स्फुटितं महागृहस्य।।22।।

अन्वयः – उपरितलनिपातित इष्टका, शिरसि तनुः मध्यदेशे च विपुलः, अयम् असदृशजनसंप्रयोगभीरः महागृहस्य स्फुटितं हृदयम् इव।

शब्दार्थ – इष्टका = ईंट, तनुः = पतली, विपुलः = बड़ी, स्फुटित = विदीर्ण।

अर्थ – ऊपर के भाग से ईंट गिराकर, ऊपर के भाग में पतली और बीच के भाग में बड़ी, यह (सेंध) अनुचित व्यक्ति चोर आदि के सम्बन्ध से भयभीत हुए महान् भवन के शीर्ष हृदय के समान है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार है। यहाँ पुष्पिताग्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा'** अर्थात् जिस छन्द के विषम चरणों में दो नगण, एक रगण तथा एक यगण हो और सम चरणों में नगण, दो जगण तथा रगण हो उसके आगे एक गुरुवर्ण हो, वहाँ पुष्पिताग्रा छन्द होता है।

कः श्रद्धास्यति भूतार्थं सर्वो मां तूलयिष्यति।

शङ्कनीया हि लोकेऽस्मिन्निष्प्रतापा दरिद्रता।।24।।

अन्वयः – भूतार्थं कः श्रद्धास्यति, सर्वः मां तूलयिष्यति, हि अस्मिन् लोके निष्प्रतापा दरिद्रता शङ्कनीया।

शब्दार्थ – भूतार्थम् = वास्तविकता, श्रद्धास्यति = विश्वास करना, तूलयिष्यति = रुई के समान हल्का, निष्प्रतापा = नष्ट तेज वाला, शङ्कनीया = शङका का विषय।

अर्थ – वास्तविकता पर कौन विश्वास करेगा? सभी लोग मुझको रूई के समान हल्का (निकृष्ट अपराधी) समझेंगे क्योंकि इस संसार में नष्ट तेज वाली निर्धनता ही शङ्का का विषय होती है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

यदि तावत्कृतान्तेन प्रणयोऽर्थेषु मे कृतः।

किमिदानीं नृशंसेन चारित्रमपि दूषितम्।।25।।

अन्वयः – यदि कृतान्तेन मे अर्थेषु प्रणयः कृतः तावत् इदानीं नृशंसेन (भाग्येन) चारित्रम् अपि दूषितम् (कृतः)।

शब्दार्थ – कृतान्तेन = भाग्य ने, अर्थेषु = धन, सम्पत्ति, प्रणयः = अभिलाषा, नृशंसेन = निर्दयी।

अर्थ – यदि भाग्य ने मेरी सम्पत्ति की अभिलाषा की तो इस समय निर्दयी भाग्य के द्वारा मेरा चरित्र भी दूषित कर दिया गया।

टिप्पणी – नृशंसः = नृ+शस्+अण्।

प्रस्तुत श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

भैक्ष्येणाप्यर्जयिष्यामि पुनर्न्यासप्रतिक्रियाम्।

अनृतं नाभिधास्यामि चारित्रभ्रंशकारणम् ।।26।।

अन्वयः – न्यास प्रतिक्रियाम् भैक्ष्येण अपि अर्जयिष्यामि पुनः चरित्रभ्रंशकारणम् अनृतं न अभिधास्यामि।

शब्दार्थ – न्यास = धरोहर, भैक्ष्येण = भिक्षा के द्वारा, अनृतम् = झूठ।

अर्थ – धरोहर को लौटाने के लिए धन को भिक्षा के द्वारा भी अर्जित करूँगा किन्तु चरित्र के पतन का कारण असत्य को नहीं कहूँगा।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में शूद्रक कवि ने अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया है।

आत्मभाग्यक्षतद्रव्यः स्त्रीद्रव्येणानुकम्पितः।

अर्थतः पुरुषो नारी या नारी सार्थतः पुमान्।।27।।

अन्वयः – आत्मभाग्यक्षतद्रव्यः स्त्रीद्रव्येण अनुकम्पितः, अर्थतः पुरुषः नारी या नारी सार्थतः पुमान्।

शब्दार्थ – स्त्रीद्रव्येण = स्त्री के धन से, अनुकम्पितः = अनुगृहीत, अर्थतः = धनहीन, सार्थतः = धनयुक्त।

अर्थ – अपने भाग्य से नष्ट धन वाला स्त्री के धन से मैं (चारुदत्त) अनुगृहीत किया जा रहा हूँ। धनहीन पुरुष नारी तुल्य हो जाता है और जिसके पास धन है ऐसी नारी पुरुष तुल्य हो जाती है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में परिणाम अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

विभवानुगता भार्या सुखदुःखसुहृद्भवान्।

सत्यं च न परिभ्रष्टं यद्दरिद्रेषु दुर्लभम्।।28।।

अन्वयः – भार्या विभव अनुगता, भवान् सुख दुःख सुहृदः, सत्यं च न परिभ्रष्टं यत् दरिद्रेषु दुर्लभम्।

शब्दार्थ – भार्या = पत्नी, विभव = धन, सुहृदः = मित्र, परिभ्रष्टम् = छूटा हुआ।

अर्थ – पत्नी धन से युक्त है, आप सुख-दुःख के मित्र हैं और सत्य भी नहीं छूटा है जो निर्धन लोगों में दुर्लभ है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में समुच्चय अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

यं समालम्ब्य विश्वासं न्यासोऽस्मासु तया कृतः।

तस्यैतन्महतो मूल्यं प्रत्ययस्यैव दीयते।।29।।

अन्वयः – यम् विश्वासं समालम्ब्य तथा अस्मासु न्यासः कृतः तस्यैतन्महतः प्रत्ययस्य मूल्यम् दीयते।

शब्दार्थ – समालम्ब्य = आधार पर, अस्मासु = हमने, प्रत्ययस्य = विश्वास का।

अर्थ – जिस विश्वास के आधार पर उसने (वसन्तसेना ने) हमारे पास धरोहर रखी है उस महान् विश्वास का यह मूल्य (रत्नावली) दिया जा रहा है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

एताभिरिष्टिकाभिः सन्धिः क्रियतां सुसंहृतः शीघ्रम्।

परिवादबहलदोषान्न यस्य रक्षां परिहरामि।।30।।

अन्वयः – शीघ्रम् एताभिः इष्टिकाभिः सन्धिः सुसंहृतः कियताम्। परिवादबहलात् दोषात् यस्य रक्षां न परिहरामि।

शब्दार्थ – सन्धिः = सेंध, सुसंहृतः = भली प्रकार से ठीक करना, रक्षाम् = मरम्मत, परिहरामि = उपेक्षा।

अर्थ – शीघ्र ही इन ईंटों से सेंध को भली प्रकार से ठीक कर दो, अत्यधिक लोकोपवाद के दोष से जिसकी मरम्मत की उपेक्षा नहीं करूँगा।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिङ्ग अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथातृतीयेऽपि

अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या।

अर्थात् जिस छन्द के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्रायें, द्वितीय पाद में 18 और चतुर्थ पाद में 15 मात्रायें होती हैं वहाँ आर्या छन्द होता है।

23.3 चतुर्थ अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के चतुर्थ अंक की कथावस्तु एवं चतुर्थ अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

23.3.1 चतुर्थ अंक की कथावस्तु

इस प्रकरण के चतुर्थ अंक में शूद्रक कवि ने मदनिका और शर्विलक के प्रणय का चित्रण किया है। वसन्तसेना और मदनिका के पारस्परिक वार्तालाप से यह अंक प्रारम्भ होता है। उसी समय शर्विलक प्रवेश करता है। वह मदनिका को बताता है कि वसन्तसेना के दास्य कर्म से उसको मुक्त कराने के लिए उसने साहस (चौरकर्म) किया है। वह मदनिका को आभूषण देता है। मदनिका आभूषणों को देखकर शर्विलक से कहती है कि यह आभूषण आर्या वसन्तसेना के हैं। उन्होंने इन्हें आर्य चारुदत्त के घर में धरोहर के रूप में रखा था। मदनिका शर्विलक से कहती है कि इस आभूषण को चारुदत्त को लौटा दो। शर्विलक मदनिका से कहता है कि कोई दूसरा उपाय सोचो। इस पर मदनिका कहती है कि इस आभूषण को तुम स्वयं ही आर्य चारुदत्त का सम्बन्धी बनकर वसन्तसेना को दे दो। इस प्रकार तुम चोर भी सिद्ध नहीं होगे और आर्य चारुदत्त भी उऋण हो जायेंगे। तदनन्तर शर्विलक वसन्तसेना को आभूषण दे देता है। वसन्तसेना ने भी यह कहकर कि आर्य चारुदत्त ने कहा था जो इस आभूषण को तुम्हें समर्पित करे उसको मदनिका दे दी जानी चाहिए। अतः आर्य चारुदत्त भी

तुम्हें मदनिका को दे रहे हैं ऐसा समझो। तत्पश्चात् मदनिका शर्विलक के साथ प्रवहण (बहली) पर चढ़कर चली जाती है। नेपथ्य के द्वारा शर्विलक को यह ज्ञात होता है कि राजा पालक ने उसके मित्र आर्यक को पकड़ लिया है। शर्विलक चेट से कहता है कि मदनिका को सार्थवाह रेभिल के घर पहुँचा दो।

चेटी आकर वसन्तसेना से निवेदन करती है कि आर्य चारुदत्त के घर से ब्राह्मण आया है। वसन्तसेना प्रसन्न हो जाती और चेटी से कहती है कि उनको सादर अन्दर लेकर आओ। विदूषक वसन्तसेना के पास पहुँचता है। विदूषक वसन्तसेना के भव्य प्रासाद को देखकर आश्चर्यचकित हो जाता है। वह वसन्तसेना के पास पहुँचता है। वसन्तसेना विदूषक का स्वागत करती है। विदूषक वसन्तसेना से कहता है कि आर्य चारुदत्त आपके आभूषणों को जुएँ में हार गए। अतः उस स्वर्णभाण्ड के स्थान पर इस रत्नावली को ग्रहण करें। वसन्तसेना रत्नावली को लेकर विदूषक से कहती है कि आर्य चारुदत्त से यह कह देना कि रात्रि के प्रथम पहर में आर्य से मिलने आऊँगी। इसके अनन्तर विदूषक चला जाता है। आर्या वसन्तसेना चेटी से कहती है कि इस आभूषण को ले लो। हम चारुदत्त से रमण करने चलेंगे। इसी घटना के साथ इस प्रकरण के मदनिका शर्विलक नामक चतुर्थ अंक की समाप्ति होती है।

22.3.2 चतुर्थ अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या – 1,2,14,6,12,13,14,15,16,17,18,20,22,2325,32

इकाई के इस अंश में आप तृतीय अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, शब्दार्थ, उनके अर्थों एवं उनसे सम्बन्धित टिप्पणियों का अध्ययन करेंगे।

दत्त्वा निशाया वचनीयदोषं निद्रां च जित्वा नृपतेश्च रक्षान्।
स एष सूर्योदयमन्दरश्मिः क्षपाक्षयाच्चन्द्र इवास्मि जातः।।1।।

अन्वयः – निशाया वचनीयदोषं दत्त्वा च निद्रां नृपतेः रक्षान् च जित्वा, सः एष क्षपाक्षयात् सूर्योदयमन्दरश्मिः चन्द्रः इव जातः अस्मि।

शब्दार्थ – निशाया = रात्रि, क्षपाक्षयात् = रात्रि के बीत जाने पर, सूर्योदयमन्दरश्मिः = सूर्य के उदित होने से मन्द किरणों वाले।

अर्थ – रात्रि पर दोष लगाकर और निद्रा तथा राजा के सेवकों को जीतकर इस समय रात्रि के बीत जाने पर सूर्य के उदित होने से मन्द किरणों वाल चन्द्रमा के समान (मैं = शर्विलक) हो गया हूँ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और उपजाति छन्द है।

यः कश्चित्त्वरितगतिर्निरीक्षते मां
संभ्रान्तं द्रुतमुपसर्पति स्थितं वा।
तं सर्वं तुलयति दूषितोऽन्तरात्मा
स्वैर्दोषैर्भवति हि शङ्कितो मनुष्यः।।2।।

अन्वयः – त्वरित गतिः यः कश्चित् माम् निरीक्षते वा सम्भ्रान्तम् स्थितं द्रुतम् उपसर्पति, दूषित

अन्तरात्मा तं सर्वं तुलयति हि मनुष्य स्वदोषैः शङ्कितः भवति।

शब्दार्थ – निरीक्षते = देखता है, सम्भ्रान्तम् = आश्चर्यकित, द्रुतम् = शीघ्र, शङ्कितः = शङ्का करना।

अर्थ – तेज गति वाला जो कोई मुझको देखता है अथवा आश्चर्यचकित होकर खड़े हुए मेरे समीप शीघ्रता से आ जाता है, दूषित अन्तःकरण वाला मैं उन सभी को सन्दिग्ध दृष्टि से देखता हूँ क्योंकि मनुष्य अपने दोषों के कारण सशङ्कित रहता है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ प्रहर्षिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – '**म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्**' अर्थात् जिस छन्द में मगण, नगण, रगण और अन्त में एक गुरुवर्ण क्रमशः आए वहाँ प्रहर्षिणी छन्द होता है। इसके तीसरे और दसवें वर्ण पर यति होती है।

नो मुष्णान्यबलां विभूषणवतीं फुल्लामिवाहं लतां
विप्रस्वं न हरामि काञ्चनमथो यज्ञार्थमभ्युद्धृतम्।
धात्र्युत्सङ्गगतं हरामि न तथा बालं धनार्थी क्वचि–
त्कार्याकार्यविचारिणी मम मतिश्चौर्येऽपि नित्यं स्थिता।।6।।

अन्वयः – धनार्थी अहं फुल्लां लताम् इव विभूषणवतीम् अबलां नो मुष्णामि, विप्रस्वं यज्ञार्थम् अभ्युद्धृतं काञ्चनं न हरामि, तथा धात्र्युत्सङ्गगतं क्वचित् बालं न हरामि। चौर्येऽपि मम मतिः नित्यं कार्याकार्यविचारिणी स्थिता।

शब्दार्थ – धनार्थी = धन की इच्छा रखने वाला, विभूषणवतीम् = आभूषणों से सज्जित, हरामि = चोरी करना, काञ्चनम् = सोना, मतिः = बुद्धि।

अर्थ – धन की इच्छा रखने वाले मैंने खिली हुई लता के समान आभूषणों से सुसज्जित स्त्री को नहीं लूटा है, ब्राह्मण के यज्ञ के लिए एकत्रित किए गए सोने को नहीं चुराया है और धाय की गोद से किसी बालक को भी नहीं चुराया है। चोरी में भी मेरी बुद्धि सदैव करणीय अकरणीय का विचार करने वाली रहती है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अपण्डितास्ते पुरुषा मता मे ये स्त्रीषु च श्रीषु च विश्वसन्ति।
श्रियो हि कुर्वन्ति तथैव नार्यो भुजङ्गकन्यापरिसर्पणानि।।12।।

अन्वयः – मे मते ते पुरुषाः अपण्डिताः ये स्त्रीषु च श्रीषु च विश्वसन्ति, हि श्रियः तथा नारी भुजङ्गकन्या इव उपसर्पणानि कुवन्ति।

शब्दार्थ – अपण्डिताः = मूर्ख, श्रीषु = सम्पत्ति में, भुजङ्ग = सर्प, परिसर्पणानि = तीव्र गति से।

अर्थ – मेरी समझ में वे पुरुष मूर्ख हैं जो स्त्रियों में और सम्पत्तियों में भरोसा करते हैं

क्योंकि सम्पत्ति तथा नारी सर्पकन्या के समान तीव्र गति से गमन करती हैं। (अतः वे विश्वास के योग्य नहीं हैं)

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपजाति छन्द है।

स्त्रीषु न रागः कार्यो रक्तं पुरुषं स्त्रियः परिभवन्ति।
रक्तैव हि रन्तव्या विरक्तभावा तु हातव्या।।13।।

अन्वयः – स्त्रीषु रागः न कार्यः, स्त्रियः रक्तं पुरुषं परिभवन्ति हि रक्ता एव रन्तव्या विरक्तभावा तु हातव्या।

शब्दार्थ – रागः = अनुराग, परिभवन्ति = अपमानित करती हैं, रक्ता = अनुरक्त, विरक्तभावा = स्नेह से रहित भावों वाली।

अर्थ – स्त्रियों से अनुराग नहीं करना चाहिए, स्त्रियाँ अनुरक्त पुरुष को अपमानित करती हैं क्योंकि अनुराग करने वाली (स्त्री) पर ही अनुरक्त होना चाहिए, स्नेह से रहित भावों वाली को त्याग देना चाहिए।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में आर्या छन्द है।

एता हसन्ति च रुदन्ति च वित्तहेतो–
र्विश्वासयन्ति पुरुषं न तु विश्वसन्ति।
तस्मान्नरेण कुलशीलसमन्वितेन
वेश्याः श्मशानसुमना इव वर्जनीयाः।।14।।

अन्वयः – एताः वित्तहेतुः हसन्ति रुदन्ति च, पुरुषम् विश्वासयन्ति तु विश्वसन्ति, तस्मात् कुलशीलसमन्वितेन नरेण शमशानसुमना इव वेश्याः वर्जनीयाः।

शब्दार्थ – वित्तहेतुः = धन के लिए, रुदन्ति = रोती हैं, समन्वितेन = युक्त, नरेण = मनुष्य के द्वारा, वर्जनीयाः = त्याग।

अर्थ – ये स्त्रियाँ धन के लिए हँसती हैं और रोती हैं, पुरुष को विश्वास दिलाती हैं किन्तु उस पुरुष पर स्वयं विश्वास नहीं करतीं। इस प्रकार कुल और विनम्रता से युक्त पुरुष को श्माशान के फूल के समान वेश्या का त्याग कर देना चाहिए।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – ''**उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः**'' अर्थात् जिस छन्द में तगण, भगण, जगण और दो गुरु वर्ण हों वहाँ वसन्ततिलका छन्द होता है।

सम्रुद्रवीचीव चलस्वभावाः संध्याभ्रलेखेव मुहूर्तरागाः।
स्त्रियो हृतार्थाः पुरुषं निरर्थं निष्पीडितालक्तकवत्त्यजन्ति।।15।।

अन्वयः – समुद्रवीची इव चलस्वभावाः, सन्ध्या अभ्रलेखा इव मुहूर्तरागः, स्त्रियः हृतार्थाः निरर्थं पुरुषम् निष्पीडितालक्तवत् त्यजन्ति।

शब्दार्थ – समुद्रवीची = समुद्र की तरङ्ग, अभ्र = मेघ, निरर्थम् = धन से रहित, निष्पीडित = निचोड़ी गई, अलक्तक = महावर।

अर्थ – समुद्र की तरङ्गों के समान चंचल स्वभाव वाली, सायंकालीन मेघों की पंक्ति के समान क्षण भर के लिए प्रेम प्रकट करनी वाली वेश्यायें धन छीनकर धन से रहित पुरुष को निचोड़े गए महावर की भाँति त्याग देती हैं।

टिप्पणी – निरर्थम् = निर्गतः अर्थः यस्य तम्।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और उपजाति छन्द है।

अन्यं मनुष्यं हृदयेन कृत्वा अन्यं ततो दृष्टिभिरह्वन्ति।

अन्यत्र मुञ्चन्ति मदप्रसेकमन्यं शरीरेण च कामयन्ते।।16।।

अन्वयः – अन्यं मनुष्यं हृदयेन कृत्वा ततः दृष्टिभिः अन्यम् आह्वन्ति, मदप्रसेकम् अन्यत्र मुञ्चन्ति, शरीरेण च अन्यं कामयन्ते।

शब्दार्थ – हृदयेन = हृदय में, दृष्टिभिः = संकेतों से, आह्वन्ति = बुलाती हैं, मदप्रसेकम् = युवावस्था के मद से सिञ्चित।

अर्थ – (चंचल स्त्रियाँ) किसी अन्य पुरुष को हृदय में रखकर तत्पश्चात् संकेतों से किसी अन्य को बुलाती हैं, युवावस्था के मद से सिञ्चित को दूसरे स्थान पर छोड़ देती हैं और शरीर से आलिंगन आदि के लिए किसी दूसरे पुरुष की कामना करती हैं।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में दीपक अलंकार है। यहाँ इन्द्रवज्रा छन्द है।

न पर्वताग्रे नलिनी प्ररोहति न गर्दभा वाजिधुरं वहन्ति।

यवाः प्रकीर्णा न भवन्ति शालयो न वेशजाताः शुचयस्तथाङ्गनाः।।17।।

अन्वयः – पर्वताग्रे नलिनी न प्ररोहति, गर्दभाः वाजिधुरं न वहन्ति, प्रकीर्णा यवाः शालयः न भवन्ति, तथा वेशजाताः अङ्गनाः शुचयः न।

शब्दार्थ – नलिनी = कमलिनी, प्ररोहति = उगती है, गर्दभाः = गधा, वाजिधुरम् = घोड़े की गाड़ी, यवाः = जौ, शालयः = धान, शुचयः = पवित्र।

अर्थ – पर्वत की चोटी पर कमलिनी नहीं उगती है, गधे घोड़े की गाड़ी का भार नहीं वहन करते हैं, बिखराये गए जौ धान नहीं होते हैं, उसी प्रकार वेश्यालय में उत्पन्न स्त्रियाँ पवित्र नहीं होती हैं।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में दृष्टान्त अलंकार है।

छायार्थं ग्रीष्मसंतप्तो यामेवाहं समाश्रितः।

अजानता मया सैव पत्रैः शाखा वियोजिता।।18।।

अन्वयः – ग्रीष्मसंतप्तः अहं छायार्थं याम् एव समाश्रितः, मया अजानता सः एव शाखा तत्रैः वियोजिता।

शब्दार्थ – संतप्त = पीड़ित, समाश्रितः = आश्रय, अजानता = अज्ञानतावश, पत्रैः = पत्ते, वियोजिता = रहित।

अर्थ – गर्मी से पीड़ित होकर मैंने छाया प्राप्ति हेतु जिसका भी आश्रय लिया, मेरी अज्ञानतावश वही शाखा पत्तों से रहित हो गई।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ पथ्यावक्त्र छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है– ''**युजोश्चतुर्थतो जेन, पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्।**'' अर्थात् अनुष्टुप् छन्द में चतुर्थ वर्ण के अनन्तर जगण होने से पथ्यावक्त्र नामक छन्द होता है।

न खलु मम विषादः साहसेऽस्मिन्भयं वा
कथयसि हि किमर्थं तस्य सार्धोर्गुणांस्त्वम्।
जनयति मम वेदं कुत्सितं कर्म लज्जां
नृपतिरिह शठानां मादृशां किं न कुर्यात्।।20।।

अन्वयः – अस्मिन् साहसे मम खलु विषादः व भयं न। तस्य साधोर्गुणान् त्वम् किमर्थं कथयसि? वा कुत्सितं कर्म मम लज्जां जनयति, इह नृपतिः मादृशां शठानाम् किम् न कुर्यात्।

शब्दार्थ – साहसे = चौर्यकर्म, विषादः = शोक, साधुः = सज्जन पुरुष के, कुत्सितम् = बुरा कर्म, नृपतिः = राजा।

अर्थ – इस चौर्यकर्म से मुझे वस्तुतः शोक अथवा भय नहीं हैं। उस सज्जन पुरुष के गुणों को तुम किसलिए कह रही हो? अथवा बुरा कार्य मुझमें लज्जा उत्पन्न करता है, यह राजा मुझ जैसे धूर्त का क्या नहीं कर सकता।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिङ्ग अलंकार है। यहाँ मालिनी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –"**ननमययययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः**" अर्थात् इस छन्द के प्रत्येक चरण में दो नगण, मगण तथा दो यगण होते हैं। इसके प्रत्येक चरण में 15 वर्ण होते हैं तथा आठवें वर्ण पर यति होती है।

गुणेष्वेव हि कर्त्तव्यः प्रयत्नः पुरुषैः सदा।
गुणयुक्तो दरिद्रोऽपि नेश्वरैरगुणैः समः।।22।।

अन्वयः – पुरुषैः सदा गुणेषु एव प्रयत्नः कर्त्तव्यः हि गुणयुक्तः दरिद्रोऽपि अगुणैः ईश्वरैः समः न।

शब्दार्थ – गुणेषु = गुणों में, कर्तव्यः = करना चाहिए, गुणयुक्तः = गुणों से युक्त, समः = समान।

अर्थ – मनुष्यों को सदैव गुणों के लिए ही प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि गुण से युक्त दरिद्र भी गुणरहित धनवान् के तुल्य नहीं होता। (अपितु उनसे श्रेष्ठ होता है)

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

गुणेषु यत्नः पुरुषेण कार्यो न किञ्चिदप्राप्यतमं गुणानाम्।

गुणप्रकर्षादुडुपेन शम्भोरलङ्घ्यमुल्लङ्घितमुत्तमाङ्गम्।।23।।

अन्वय – पुरुषेण गुणेषु यत्नः कार्यः, गुणानाम् किञ्चिद् अप्राप्यतमं न, गुणप्रकर्षाद् उडुपेन शम्भोः अलङ्घ्यम् उत्तमाङ्गम् लङ्घितम्।

शब्दार्थ – गुणेषु = गुणों के, उडुपेन = चन्द्रमा, उत्तमाङ्गम् = मस्तक पर, अप्राप्यतमम् = अप्राप्य।

अर्थ – पुरुषों को गुणों में प्रयत्न करन चाहिए, गुणों के द्वारा कुछ भी अप्राप्य नहीं है। गुणों के उत्कर्ष के कारण ही चन्द्रमा ने शंकर के दुर्लङ्घ्य मस्तक को लाँघ लिया (अर्थात् मस्तक पर सुशोभित हो गया)।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार और उपेन्द्रवज्रा छन्द है।

द्वयमिदमतीव लोके प्रियं नराणां सुहृच्च वनिता च।

सम्प्रति तु सुन्दरीणां शतादीप सुहृद्विशिष्टतमः।।25।।

अन्वयः – इदं लोके नराणां सुहृत् च वनिता च द्वयम् अतीव प्रियम्, सम्प्रति तु शतात् सुन्दरीणाम् अपि सुहृत् विशिष्टतमः।

शब्दार्थ – लोके = संसार में, सुहृत् = मित्र, वनिता = स्त्री, शतात् = सौ, विशिष्टतमः = श्रेष्ठ है।

अर्थ – इस संसार में मनुष्यों को मित्र और पत्नी दोनों ही नितान्त प्रिय हैं। इस समय तो (मित्र पर संकट आने पर) सौ सुन्दरियों से भी मित्र श्रेष्ठ है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में आर्या छन्द है।

गुणप्रवालं विनयप्रशाखं विश्रम्भमूलं महनीयपुष्पम्।

तं साधुवृक्षं स्वगुणैः फलाढ्यं सुहृद्विहगङ्गाः सुखमाश्रयन्ति।।32।।

अन्वयः – गुणप्रवालम् विनयप्रशाखम्, विश्रम्भमूलम्, महनीयपुष्पं स्वगुणैः फलाढ्यं तं साधुवृक्षं सुहृद्विहङ्गाः सुखमाश्रयन्ति।

शब्दार्थ – प्रवालम् = कपोल, विश्रम्भ = विश्वास, फलाढ्यम् = फल से सम्पन्न, विहङ्गाः = पक्षी।

अर्थ – गुण ही जिनके कपोल हैं, नम्रता ही शाखा है, विश्वास ही जड़ है, महानता ही पुष्प है अपने गुण रूपी फलों से लदे हुए उस सज्जन चारुदत्त रूपी वृक्ष पर सुहृद् रूपी पक्षी सुखपूर्वक आश्रय ग्रहण करते हैं।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में रूपक अलंकार और उपजाति छन्द है।

23.4 सारांश

प्रिय विद्यार्थियों! 'संस्कृत साहित्यशास्त्र एवं साहित्य' पाठ्यक्रम की इस इकाई में आपने मृच्छकटिक प्रकरण के तृतीय और चतुर्थ अंक की कथावस्तु और चयनित श्लोकों का अध्ययन किया। आपको यह ज्ञात है कि मृच्छकटिक प्रकरण का तृतीय अंक सन्धिच्छेद पर आधारित है। किस प्रकार शर्विलक चारुदत्त के घर में सेंध करके प्रवेश करता है और न्यास के रूप में रखे गए वसन्तसेना के आभूषणों को चुरा लेता है। इस अंक में शर्विलक ने भिन्न-भिन्न प्रकार से चौर्यकर्म की प्रशंसा की है तथा सेंध लगाने की विभिन्न विधियों का भी वर्णन किया है। धूता विदूषक को रत्नामाला देती है और चारुदत्त वर्धमानक को सेंध बन्द करने का आदेश देता है। इस प्रकरण के चतुर्थ अंक में शर्विलक चुराए गए आभूषणों को मदनिका को देता है और बताता है कि उसने उसको दास्य कर्म से मुक्त कराने के लिए साहस का कार्य किया है। मदनिका आभूषणों को देखकर कहती है कि यह आभूषण आर्या वसनतसेना के हैं। तुम इन्हें आर्या को यह कहकर लौटा दो कि आर्य चारुदत्त ने इन आभूषणों को भेजा है। शर्विलक आभूषणों को वसन्तसेना को लौटा देता है। वसन्तसेना भी मदनिका को शार्विलक को सौंप देती है। उसी समय विदूषक रत्नमाला लेकर आता है। वसन्तसेना रत्नमाला लेकर चेटी के साथ चारुदत्त से रमण करने जाती है। यहीं पर मदनिका शर्विलक नामक अंक समाप्त हो जाता है।

इस प्रकार इस इकाई में आपने तृतीय और चतुर्थ अंक की कथावस्तु और चयनित श्लोकों का अध्ययन किया

23.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1969
- शूद्रक का मृच्छकटिकम्: एक आलोचनात्मक अध्ययन – डॉ. विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 1999
- मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर राय, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराण्सी, 1997
- संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास – प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, 2018

23.6 अभ्यास प्रश्न

1. 'मृच्छकटिक' प्रकरण के तृतीय अंक की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।
2. **"कामं नीचमिदं वदन्तु पुरुषाः .....।।"** श्लोक की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिये।
3. 'मृच्छकटिक' के चतुर्थ अंक का कथासार लिखिए।
4. **"एता हसन्ति च रुदन्ति च ....।।"** श्लोक की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए।

इकाई 24 मृच्छकटिक – पञ्चम एवं षष्ठ अंक

इकाई की रूपरेखा

24.0 उद्देश्य

24.1 प्रस्तावना

24.2 पञ्चम अंक

24.2.1 पञ्चम अंक की कथावस्तु

24.2.2 पञ्चम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या–

8,12,13,14,24,25,26,36,40,41,42,43,48,49

24.3 षष्ठ अंक

24.3.1 षष्ठ अंक की कथावस्तु

24.3.2 षष्ठ अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या–

1,2,4,13,14,15,16,17,18,19,21

24.4 सारांश

24.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

24.6 अभ्यास प्रश्न

24.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- पञ्चम अङ्क में उद्दीपन रूप वर्षा के विशद एवं सुन्दर वर्णन से परिचित होंगे।
- षष्ठ अंक में आप प्रवहण-विपर्यय की घटना से अभिमुख होंगे।
- एक गणिका की उदारता का परिचय प्राप्त करेंगें।
- वीरक और चन्दनक के झगड़े से हास्य रस का आस्वादन करेंगें।
- पञ्चम एवं षष्ठ अंक के चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

24.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! 'संस्कृत साहित्यशास्त्र एवं साहित्य' पाठ्यक्रम की 22वीं और 23वीं इकाई में आपने मृच्छकटिक प्रकरण के प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ अंक की कथावस्तु तथा चयनित श्लोकों का अध्ययन किया। इन अंकों के माध्यम से आपने जाना कि वसन्तसेना अपने आभूषणों को चारुदत्त के घर में न्यास के रूप में रख देती है। द्वितीय अंक में द्यूत का वर्णन कवि शूद्रक के द्वारा किया गया है। तृतीय अंक में चारुदत्त के घर में न्यास के रूप में रखे गए आभूषणों को शर्विलक चुरा लेता है और चतुर्थ अंक में वह उन आभूषणों को वसन्तसेना को देकर अपनी प्रेयसी मदनिका को मुक्त करवाता है। पंचक अंक दुर्दिन है। इस अंक में कवि ने वर्षा का बड़ा ही सुन्दर एवं सजीव चित्रण किया है। इस अंक में वसन्तसेना चारुदत्त से मिलने जाती है। षष्ठ अंक प्रवहण विपर्यय है। चारुदत्त वसन्तसेना को उद्यान में मिलने बुलाता है किन्तु संयोगवश वसन्तसेना शकार की गाड़ी में बैठ जाती है तथा वसन्तसेना की गाड़ी में आर्यक बैठ जाता है। इस प्रकार इस इकाई में आप पंचम एवं षष्ठ अंक की कथावस्तु तथा इन अंकों के चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

24.2 पञ्चम अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के पञ्चम अंक की कथावस्तु एवं पञ्चम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

24.2.1 पञ्चम अंक की कथावस्तु

इस प्रकरण का पंचम अंक दुर्दिन है। आर्य चारुदत्त असमय में होने वाली वर्षा का वर्णन करते हैं। उसी समय विदूषक प्रवेश करता है और चारुदत्त से बताता है कि आर्या वसन्तसेना ने रत्नावली ले ली है और रात्रि के प्रथम पहर में आपसे मिलने आने का सन्देश भिजवाया है। कुम्भीलक चारुदत्त और विदूषक से निवेदन करता है कि यह वह आर्या वसन्तसेना आई हैं। कुम्भीलक जाकर आर्या वसन्तसेना से निवेदन करता है। विदूषक चारुदत्त से कहता है कि निःसन्देह रत्नावली के मूल्य से सन्तुष्ट न होने के परिणामस्वरूप वह कुछ और माँगने आई है। तत्पश्चात् विट और वसन्तसेना प्रवेश करते हैं। वसन्तसेना विदूषक के साथ प्रवेश करती है। विट निकल जाता है। वसन्तसेना विदूषक से पूछती है कि आपके जुआरी चारुदत्त कहाँ हैं? विदूषक बताता है कि सूखे वृक्षों वाली वाटिका में हैं। सभी वाटिका में प्रवेश करते हैं।

चारुदत्त वसन्तसेना का स्वागत करता है। विदूषक वसन्तसेना से आने का कारण पूछता है। तब चेटी कहती है कि आर्या वास्तव में यह पूछने आई हैं कि उस रत्नावली का कितना मूल्य है? वह उस रत्नावली को अपनी समझकर जुएं में हार गई हैं। अतः तब तक आप इस स्वर्णपात्र को ग्रहण कीजिए। चेटी विदूषक से कहती है कि यह वही स्वर्णपात्र है जो आपके पास से चोरी हो गया था। चारुदत्त चेटी से पूछता है क्या यह वही स्वर्णपात्र है। चेटी के समर्थन करने पर आर्य चारुदत्त उसको अपनी अगूँठी पुरस्कार में देते हैं। तब वसन्तसेना कहती है इसीलिए आपकी कामना की जाती है। विदूषक कहता है कि मोटी जलधाराओं से युक्त होकर यह बादल फिर आ गया है। इसी के साथ सभी भीतर प्रवेश करते हैं और दुर्दिन नामक पंचम अंक की समाप्ति होती है।

24.2.2 पञ्चम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 8,12,13,14,24,25,26,36,40,41,42,43,48,49

इकाई के इस अंश में आप पञ्चम अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, प्रसंग एवं अर्थों का अध्ययन करेंगे।

वेगं करोति तुरगस्त्वरितं प्रयातुं

प्राणव्ययान्न चरणास्तु तथा वहन्ति।

सर्वत्र यान्ति पुरुषस्य चलाः स्वभावाः

खिन्नास्ततो हृदयमेव पुनर्विशन्ति।।8।।

अन्वयः – तुरगः त्वरितं प्रयातुं वेगं करोति, तु प्राणव्ययात् चरणाः तथा न वहन्ति, पुरुषस्य चलाः स्वभावाः सर्वत्र यान्ति, ततः खिन्ना पुनः हृदयम् एव विशन्ति।

सन्दर्भ – प्रस्तुत श्लोक में महाकवि शूद्रक विरचित मृच्छकटिक नामक प्रकरण के पञ्चम अङ्क से समुद्धृत है। प्रकृत नाट्य ग्रन्थ में महाकवि शूद्रक ने तत्कालीन समाज का जो जीवन्त चित्रण किया है वह आज भी सहृदय के हृदय को आन्दोलित करता है।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में चारुदत्त का अपनी गरीबी के कारण स्वतः ही उनसे दूर होने का वर्णन किया गया है।

अर्थ – तेज भागने के लिये घोड़े उत्सुक होते हैं किन्तु बलविहीन होने पर वे वेग से दौड़ नहीं पाते, मनुष्य के चंचल मन चारों ओर दौड़ते हैं किन्तु साधनहीन होने पर पुनः भीतर ही विलीन हो जाते हैं।

शब्दार्थ – त्वरितम् – शीघ्र, प्रयातुं – जाने के लिये, प्राणव्ययात् – शक्ति के क्षीण होने से, चलाः – चञ्चल, खिन्ना – उदास होकर, विशन्ति – घुस जाते हैं।

टिप्पणी – त्वरितम् – (अव्यय) त्व+क्त+सु, चरणाः – चर्+ल्युट्, प्रयातुम् – प्र उपसर्ग+या+तुमुन्।

प्रस्तुत श्लोक में सामान्य से विशेष की प्रतीति होने से अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – ''**उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः**'' अर्थात् जिस छन्द में तगण, भगण, जगण और दो गुरु वर्ण हों वहाँ वसन्ततिलका छन्द होता है।

अपद्मा श्रीरेषा प्रहरणमनङ्गस्य ललितं

कुलस्त्रीणां शोको मदनवरवृक्षस्य कुसुमम्।

सलीलं गच्छन्ती रतिसमयलज्जाप्रणयिनी

रतिक्षेत्रे रङ्गे प्रियपथिकसार्थैरनुगता।।12।।

अन्वयः – रतिसमयलज्जाप्रणियिनी प्रियपथिकसार्थैः अनुगताः रङ्गे(इव) रतिक्षेत्रे सलीलम् गच्छन्ती, एषा अपद्मा श्रीः अनङ्गस्यललितम् प्रहरणम् कुलस्त्रीणाम् शोकः मदनवरवृक्षस्य कुसुमम् अस्ति।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में विट के द्वारा वसन्तसेना का वर्णन किया गया है।

अर्थ – सुरत के समय सलज्जा, प्रिय पथिक समूहों के द्वारा पीछा की गयी, नाट्यशाला के समान राग बढाने वाली, यह वसन्तसेना बिना कमल के ही लक्ष्मी है, कामदेव सुकुमार आयुध है, कुलीन रमणियों का शोक तथा कामरूपी सुन्दर वृक्ष का मनोरम फूल है।

शब्दार्थ – प्रियपथिकसार्थैः – प्रियपथिकों या प्रेमियों के समूह द्वारा, अनुगताः – पीछा की गयी, रङ्गे – रङ्ग भूमि में, रतिक्षेत्रे – संभोग के स्थान में, सलीलम् – विलासिता के साथ, अपद्माश्रीः – कमलरहित लक्ष्मी, अनङ्गस्य – कामदेव का, ललितम् – सुकुमार, प्रहरणम् – अस्त्र, मदनवरवृक्षस्य – कामदेवरूपी उत्तम वृक्ष का।

टिप्पणी – शोकः – शुच्+घञ्, सलीलम् – सहलीलया, बहुव्रीहि समास।

प्रस्तुत श्लोक में बिना कमल के लक्ष्मी और कामदेव का सुकुमार आयुध होने से विरोधाभास अलंकार है। प्रस्तुत श्लोक में शिखरिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है ''**रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी**'' अर्थात् जिस छन्द में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण तथा एक

लघु और एक गुरु वर्ण हो तथा छठें और ग्यारहवें वर्णों पर यति हो तो वहाँ शिखरिणी छन्द होता है।

गर्जन्ति शैलशिखरेषु विलम्बिबिम्बा

मेघा वियुक्तवनिताहृदयानुकाराः।

येषां रवेण सहसोत्पतितैर्मयूरैः

खं वीज्यते मणिमयैरिव तालवन्तैः।।13।।

अन्वयः – वियुक्तवनिताहृदयानुकाराः शैलशिखरेषु विलम्बिबिम्बाः, मेघाः गर्जन्ति येषां रवेण सहसा उत्पतितैः मयूरैः मणिमयैः तालवृन्तैः खं वीज्यते इव।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में विट वसन्तसेना को उद्देश्य करके वर्षा वर्णन करता है।

अर्थ – वियोगिनी कामिनियों के हृदय की तरह मलिन, पहाड़ की चोटियों पर मेघमण्डल गरज रहे हैं, जिसकी आवाज से घबड़ाकर डरते हुए मयूर अपने मणिमय पंखों से मानो जैसे आकाश को हवा कर रहे हों।

शब्दार्थ – विलम्बि – लटके हुए, मेघा – बादल, वनिता – स्त्रियाँ, रवेण – गर्जन, खम् – आकाश।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – ''**उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः**'' अर्थात् जिस छन्द में तगण, भगण, जगण और दो गुरु वर्ण हों वहाँ वसन्ततिलका छन्द होता है।

पङ्कक्लिन्नमुखाः पिबन्ति सलिलं धाराहता दर्दुराः

कण्ठं मुञ्चति बर्हिणः समदनो नीपः प्रदीपायते।

संन्यासः कुलदूषणैरिव जनैर्मेघैर्वृतश्चन्द्रमा

विद्युन्नीचकुलोदगतेव युवतिर्नैकत्र संतिष्ठते।।14।।

अन्वयः – धाराहताः पङ्कक्लिन्नमुखाः दर्दुराः सलिलम् पिबन्ति, समदनः बर्हिणः कण्ठम् मुञ्चति, नीपः प्रदीपायते, कुलदूषणैः जनैः संन्यास इव विद्युत एकत्र न सन्तिष्ठते।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – वर्षा के जल से ताड़ित एवं पङ्क से लिप्त मुख वाले मेढक जल पी रहे हैं कामातुर मयूर मधुर शब्द बोल रहे हैं। कदम्ब वृक्ष दीप के समान प्रफुल्लित हो रहे हैं, कुलकलंकित

करने वाले संयासी के समान मेघों के द्वारा चन्द्रमा आच्छन्न हो रहा है। नीच वंशोत्पन्न कुलटा युवती के समान बिजली एक स्थान पर नहीं ठहर रही है।

शब्दार्थ – धाराहताः – पानी की बूँदों से ताड़ित, पङ्कक्लिन्नमुखाः – कीचड़ से लथपथ मुख वाले, दर्दुराः – मेढक, समदनः – कामातुर, बर्हिणः – मोर, नीपः – कदम्ब, प्रदीपायते – दीपक सा प्रतीत हो रहा है।

टिप्पणी – सन्तिष्ठते – सम्+स्था लट् प्र. पु. एक. (समप्रविभ्यःस्थःआत्मनेपदम्)।

प्रस्तुत श्लोक के तीसरे और चौथे पाद में श्रौती उपमा है।यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्'** अर्थात् जिस छन्द में मगण, सगण, जगण, सगण, दो तगण और एक गुरुवर्ण हो, बारह और सात वर्णों पर यति हो, वहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द होता है।

निष्पन्दीकृतपद्मषण्डनयनं नष्टक्षपावासरं

विद्युद्भिः क्षणनष्टदृष्टतिमिरं प्रच्छादिताशामुखम्।

निश्चेष्टं स्वपितीव संप्रति पयोधारागृहान्तर्गतै।

सफीताम्भोधरधामनैकजलदच्छत्रापिधानं जगत्।।24।।

अन्वयः – निष्पन्दीकृतपद्मषण्डनयनं नष्टक्षपावासरम् विद्युद्भिः क्षणनष्टदृष्टतिमिरं प्रच्छादिताशामुखं स्फीताम्भोधरधामनैक जलदच्छत्रापिधानं पयोधारागृहान्तर्गतं सम्प्रति निश्चेष्टं स्वपिति इव।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में विट के द्वारा वसन्तसेना को दिखाते हुए वर्षा का वर्णन किया गया है।

अर्थ – कमलरूपी आँखे बन्द कर, रात दिन का भेद मिटाकर, कभी सघन अन्धकार में छिपकर, तो कभी बिजली के प्रकाश मे प्रकट होकर (आँख मिचौनी करते हुए), दिशारूपी मुँह ढककर, जलधारा रूपी घर में, बहुरंगे बादल के छाते लगाकर आकाश के नीचे यह संसार निश्चिन्त होकर सो रहा है।

शब्दार्थ – निष्पन्दीकृतपद्मषण्डनयनम् –कमल के समूह रूपी नेत्रों को बन्द करने वाला, नष्टक्षपावासरम् – जिसके रात दिन नष्ट हो गये हैं, विद्युद्भिः – बिजलियों से, क्षणनष्टदृष्टतिमिरं – क्षण भर में खत्म हो जाता है और फिर दिखाई पड़ने लगता है, प्रच्छादिताशामुखम् – ढंका है दिशारूपी मुँह जिसका, स्फीताम्भोधरधामनैक – बढे हुए बादलों के निवास स्थान।

टिप्पणी – षण्डः – सन्+ड, पद्म – पद+मन्।

पद्मषण्ड में नेत्रत्व का, जलद में छत्रत्व का आरोप करने से रूपक तथा जगत्स्वपिति इव मे उत्प्रेक्षा अलंकार है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

गता नाशं तारा उपकृतमसाधाविव जने

वियुक्ताः कान्तेन स्त्रिय इव न राजन्ति ककुभः।

प्रकामान्तस्तप्तं त्रिदशपतिशस्त्रस्य शिखिना

द्रवीभूतं मन्ये पतति जलरूपेण गगनम्।।25।।

अन्वयः – असाधौ जने उपकृतम् इवताराः नाशं गताः, कान्तेन, वियुक्ताः स्त्रियः.इव ककुभः न राजन्ति, त्रिदशपतिशस्त्रस्य शिखिना प्रकामम् अन्तस्तप्तं द्रवीभूतं गगनं जलरूपेणपतति (इति अहं) मन्ये।

प्रसङ्ग – प्रस्तुत श्लोक में वसन्तसेना के द्वारा वर्षा वर्णन किया गया है।

अर्थ – असाधु पुरुषों पर किये गये उपकार की तरह आकाश के तारे विलुप्त हों। पतिहीन वियोगिनी की तरह आकाश की दिशायें श्री हत हो गयी हैं। इन्द्र के हथियार से निकलने वाली आग से झुलसा आकाश मानो पिघलकर पानी के रूप में गिर रहा है।

शब्दार्थ – असाधौ – दुष्ट, उपकृतम् – उपकार, इव – तरह, गता – प्राप्त हो गयी हैं, वियुक्ताः – छोड़ी गयी, ककुभः – दिशायें, राजन्ति – शोभित हो रही हैं, शिखिना – आग से, मन्ये – मानती हूँ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकार है। यहाँ शिखरिणी छन्द है।

उन्नमति नमति वर्षति गर्जति मेघः करोति तिमिरौघम्।

प्रथमश्रीरिव पुरुषः करोति रूपाण्यनेकानि।।26।।

अन्वयः – प्रथमश्रीः पुरुषः इव मेघः अनेकानि रूपाणि करोति,(सः कदाचित्), उन्नमति नमति वर्षति गर्जति तिमिरौघं करोति।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में वसन्तसेना के द्वारा वर्षा का वर्णन किया गया है।

अर्थ – प्रथम बार सम्पत्ति प्राप्त पुरुष की तरह ये बादल अनेक रूप धारण कर रहा है। कभी तो ऊपर उठकर सम्पूर्ण आकाश को घेर लेता है कभी नीचे झुककर फैल जाता है। कभी बरसता है तो कभी गरजता है कभी घोर अन्धकार से सम्पूर्ण आकाश के आयाम को ढंक लेता है।

शब्दार्थ – उन्नमति – उमड़ रहा है, नमति – झुक रहा है, वर्षति – बरस रहा है, गर्जति – गरज रहा है, तिमिरौघं – अन्धकार के समूह को।

टिप्पणी – प्रथमश्रीः – प्रथमं प्राप्ता श्रीः येन तादृशः, उन्नमति – उत्+नम्, लट् लकार।

एक मेघ (कारक) का उमड़ना आदि बहुत सी क्रियाओं का सम्बन्ध होने से कारक दीपक अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथातृतीयेऽपि

अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या।

अर्थात् जिस छन्द के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्रायें, द्वितीय पाद में 18 और चतुर्थ पाद में 15 मात्रायें होती हैं वहाँ आर्या छन्द होता है।

साटोपकूटकपटानृतजन्मभूमेः

शाठ्यात्मकस्य रतिकेलिकृतालयस्य।

वेश्यापणस्य सुरतोत्सवसंग्रहस्य

दाक्षिण्यपण्यसुखनिष्क्रयसिद्धिरस्तु।।36।।

अन्वयः – साटोपकूटकपटानृतजन्मभूमेः शठ्यात्मकस्य रतिकेलिकृतालयस्य सुरतोत्सवसङ्ग्रहस्य वेश्यापणस्य दाक्षिण्यपण्य सुखनिष्क्रियसिद्धिः अस्तु।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में वसन्तसेना के द्वारा विट के घर लौटने के आदेश पर वसन्तसेना के लिये विट के कथन का वर्णन किया गया है।

अर्थ – गर्व के सहित माया छल कपट की जो जन्मभूमि है, धूर्तता के केन्द्रस्वरूप, कामक्रीडा ही जिसका घर है,संभोग सुख ही जिसका संचय है, उस वेश्या रूपी बाजार की विक्रय वस्तु युवावस्था का उदारता पूर्वक आदान प्रदान करो।

टिप्पणी – निष्क्रिय – निष्+क्रि+अच्, सिद्धिः – सिध्+क्तिन्, दाक्षिण्यम् – दक्षिण+ष्यञ्।

प्रस्तुत श्लोक में अनुप्रास तथा रूपक अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – ''**उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः**'' अर्थात् जिस छन्द में तगण, भगण, जगण और दो गुरु वर्ण हों वहाँ वसन्ततिलका छन्द होता है।

धनैर्वियुक्तस्य नरस्य लोके किं जीवितेनादित एव तावत्।

यस्य प्रतीकारनिरर्थकत्वात्कोपप्रसादा विफलीभवन्ति।।40।।

अन्वयः – लोकेधनैः वियुक्तस्य नरस्य आदितः एव जीवितेन, किं तावत् प्रतीकारनिरर्थकत्वात् यस्य कोपप्रसादाः विफलीभवन्ति।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में चारुदत्त के द्वारा निर्धनों के जीवन की निरर्थकता का वर्णन किया गया है।

अर्थ – संसार मे गरीबों का जन्म ही निरर्थक है। बदला चुकाने में असमर्थ होने के कारण जिसके कोप और अनुग्रह दोनों ही निष्फल होते हैं (अर्थात् निर्धन व्यक्ति न तो किसी पर खुश होकर कुछ दे ही सकता है न तो नाराज होकर कुछ बिगाड़ ही सकता है)।

टिप्पणी – विफलीभवन्ति –विफल+च्वि+ईत्व+भू लट्, आदितः– आ+दा+कि+तसिल्।

प्रस्तुत श्लोक के पूर्वार्ध मे निर्धन सामान्य से प्रस्तुत निर्धन चारुदत्त विशेष की प्रतीति होने से अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। जीवन की व्यर्थता के प्रति क्रोध और प्रसन्नता की प्रतिकार शक्ति के हेतु रूप से कथन कर काव्यलिङ्ग अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है।

पक्षविकलश्च पक्षी शुष्कश्च तरुः सरश्च जलहीनम्।

सर्पश्चोद्धृतदंष्ट्रस्तुल्यं लोके दरिद्रश्च।।41।।

अन्वयः – पक्षविकलः पक्षी च शुष्कः तरुः च जलहीनं सरः च उद्धृतदंष्ट्रः सर्पः दरिद्रः च लोके तुल्यम् (भवति)।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – संसार में पंखविहीन पक्षी, सूखा पेड़, बिना जल का तालाब तथा विषदन्तविहिन साँप व दरिद्र मनुष्य (ये सभी) समान होते हैं।

शब्दार्थ – विकलः – विहीन, शुष्कः – सूखा, हीन – विरहित, सरः – तालाब, सर्प – भुजङ्ग।

टिप्पणी – शुष्क–शुष्+क्त, शुष कः इति सूत्रेण, दंष्ट्राः – दंश+ष्ट्रन्+टाप्।

पंखविहीन पक्षी, शुष्क वृक्ष, जलहीन तालाब इत्यादि कई सारे उपमानों की उपमेय दरिद्र मनुष्य से समानता होने से यहां मालोपमा अलंकार है। दरिद्र उस सामान्य कथन से विशेष चारुदत्त की प्रतीति होने से अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है।

शून्यैर्गृहैः खलु समाः पुरुषा दरिद्राः

कूपैश्च तोयरहितैस्तरुभिश्च शीर्णैः।

द्दृष्टपूर्वजनसङ्गमविस्मृताना–

मेवं भवन्ति विफलाः परितोषकालाः।।42।।

अन्वयः – शून्यैः गृहैः तोयरहितैः कूपैः शीर्णैः तरुभिश्च समाः दरिद्राः पुरुषाः, खलु यद् दृष्टपूर्वजन सङ्गम विस्मृतानां परितोषकालाः एवं विफलाः भवन्ति।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – दरिद्र मनुष्य तो सूने घर, सुखे पेड़, जलहीन कुएं के समान हैं जिन्हें पूर्वपरिचित लोग भी पहचान नहीं पाते खुश होकर भी वे किसी को कुछ दे नहीं पाते।

शब्दार्थ – तोयरहितैः – निर्जल, शीर्णैः – सूखे, तरुभिश्च – पेड़ों के, समाः – समान, दृष्टपूर्वजनसङ्गमविस्मृतानाम् – पहले के परिचित जनों के मिलने से, परितोषकालाः – पुरुस्कार,

टिप्पणी – परितोषः – परि+तुष्+घञ्, कूपः – कु+पक्+दीर्घश्च।

यहाँ दरिद्र मनुष्य की समानता शुष्क वृक्ष, सूने घर, जलहीन कुएं से होने से मालोपमा अलंकार है। यहाँ आर्या वसन्ततिलका है।

कः श्रद्धास्यति भूतार्थं सर्वो मां तूलयिष्यति।

शङ्कनीया हि लोकेऽस्मिन्निष्प्रतापा दरिद्रता।।43।।

अन्वयः – कः भूतार्थं श्रद्धास्यति, सर्वः मां तुलयिष्यति, हि अस्मिन् लोके निष्प्रतापा दरिद्रता शङ्कनीया (भवति)।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में वसन्तसेना चारुदत्त से कहती है आपने जो रत्नहार भेजकर मुझे तौलने की चेष्टा की है वो उचित नहीं है इसका प्रतिउत्तर देते हुए चारुदत्त के कथन का वर्णन किया गया है।

अर्थ – वास्तविक बात पर कौन विश्वास करता सभी तो मुझे बेईमान ही समझते क्योंकि इस संसार मे गरीबी सबके सन्देह का घर है।

टिप्पणी – निष्प्रतापा – निर्गतः प्रतापः यस्याः सा, तूलयिष्यति – तूल्+णिच्+लृट्।

दरिद्रता शंका के योग्य होती है। इस सामान्य वचन से अतः आप सभी मुझे तुच्छ समेझेंगे इस विशेष बात का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ अनुष्टुप् छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

पंचमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्वितचुर्थयोः।

षष्ठं गुरु विजानीयात् एतत् पद्यस्य लक्षणम्।।

अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु, छठाँ गुरु और दूसरे तथा तीसरे चरणों में सातवाँ वर्ण लघु होता है वहाँ अनुष्टुप् छन्द होता है।

वर्षशतमस्तु दुर्दिनमविरतधारं शतह्रदा स्फुरतु।

अस्मद्विधदुर्लभया यदहं प्रियया परिष्वक्तः।।48।।

अन्वयः – अविरतधारं दुर्दिनं वर्षशतम् अस्तु, शतह्रदा स्फुरतु यत् अहम् अस्मद्विधदुर्लभया प्रियया परिष्वक्तः।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक मे इस दुर्दिन की वजह से वसन्तसेना ने मुझे आलिङ्गित किया है चारुदत्त के इस कथन का वर्णन किया गया है।

अर्थ – लगातार मेघ सैकड़ों वर्ष तक बरसते रहें, बिजलियाँ चमकती रहें क्योंकि मेरे जैसे गरीब को दुर्लभ कामिनी वसन्तसेना ने उसी दुर्दिन के कारण आलिङ्गित किया है।

शब्दार्थ – अविरतधारं – बिना रुकी धारा वाला, स्फुरतु – चमके, अस्मद्विधदुर्लभया – हमारे निर्धनों के जैसे दुर्लभ, परिष्वक्तः – आलिङ्गित किया जा रहा हूँ।

टिप्पणी – परिष्वक्तः – परि+स्वञ्ज+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में आर्या छन्द है।

धन्यानि तेषां खलु जीवितानि ये कामिनीनां गृहमागतानाम्।

अर्द्राणि मेघोदकशीतलानि गात्राणि गात्रेषु परिष्वजन्ति।।49।।

अन्वयः – तेषाम् जीवितानि खलु धन्यानि, ये गृहम् आगतानां कामिनीनां मेघोदकशीतलानि गात्राणि गात्रेषु परिष्वजन्ति।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में चारुदत्त के द्वारा वसन्तसेना को लेकर जीवन की धन्यता का वर्णन किया गया है।

अर्थ – वास्तव में उन्हीं के जीवन धन्य हैं जो घर मे आयी हुई कामिनियों के बादल के जल से ठण्डे हुए गीले अङ्गों को अपने में कसकर आलिङ्गन करते हैं।

शब्दार्थ – मेघोदकशीतलानि – बादल के जल से ठण्डे, गात्राणि – अङ्गों को, गात्रेषु – अङ्गों में, परिष्वजन्ति – कसकर आलिङ्गन करते हैं।

टिप्पणी – परिष्वजन्ति – ष्वंज+परिष्वङ्गे, यह धातु आत्मनेपदी है किन्तु पद विधायक नियमों के अनित्य होने से यहाँ परस्मैपद हो गया।

यहाँ अप्रस्तुत अर्थ की प्रशंसा का वर्णन होने से अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ इन्द्रवज्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।' अर्थात् जिस** छन्द के प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण तथा दो गुरु वर्ण हों वहाँ इन्द्रवज्रा छन्द होता है।

24.3 षष्ठ अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के षष्ठ अंक की कथावस्तु एवं षष्ठ अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

24.3.1 षष्ठ अंक की कथावस्तु

मृच्छकटिक प्रकरण का छठाँ अंक प्रवहण-विपर्यय है। वसन्तसेना चेटी से कहती है कि इस रत्नावली को मेरी बहन आर्या धूता को समर्पित कर दो और कहना कि ''मैं श्री चारुदत्त के गुणों से वशीभूत दासी हूँ तब आपकी भी दासी हूँ। अतः यह रत्नावली आपके ही कण्ठ का आभूषण हो।'' चेटी वापस आकर वसन्तसेना से कहती है कि आर्या धूता कह रही हैं कि ''आर्यपुत्र ने आपको यह रत्नावली प्रसन्न होकर प्रदार की है, मेरा इसको लेना उचित नहीं है। आप यह समझ लें कि आर्यपुत्र ही मेरे आभूषण हैं।''

इसके पश्चात् रदनिका बच्चे को लेकर प्रवेश करती है। रदनिका बच्चे से गाड़ी से खेलने का आग्रह करती है किन्तु वह बच्चा मिट्‌टी की गाड़ी के स्थान पर सोने की गाड़ी माँगता है। रदनिका कहती है पिताजी की पुनः समृद्धि पर सोने की गाड़ी से खेलना। रदनिका आर्या वसन्तसेना को प्रणाम करती है। वसन्तसेना रदनिका से बच्चे के विषय में पूछती है। रदनिका उन्हें बताती है कि यह आर्य चारुदत्त का पुत्र रोहसेन है। वह रोहसेन के रोने का कारण पूछती है। रदनिका उन्हें बताती है कि यह पड़ोसी के बच्चे की सोने की गाड़ी से खेल रहा था, वह उसने ले ली। तब मैंने यह मिट्‌टी की गाड़ी बनाई, तभी से यह उस सोने की गाड़ी की माँग कर रहा है। वसन्तसेना अपने आभूषणों को उतारकर उस मिट्‌टी की गाड़ी में रख देती है और कहती है कि जाओ बेटे सोने की गाड़ी बनवा लो।

उसी समय चेट आकर रदनिका से कहता है कि आर्या वसन्तसेना से निवेदन करो कि बगल के द्वारा पर बन्द सुसज्जित गाड़ी खड़ी है। वसन्तसेना वर्धमानक को ठहरो के लिए कहकर श्रृंगार करने लगती है। चेट भी गद्‌दी भूल जाता है जिसको लेने के लिए दुबारा चला जाता है।

स्थावरक चेट अपनी गाड़ी को आर्य चारुदत्त की वृक्षवाटिका के पक्षद्वार पर खड़ा कर देता है। उसी समय दुर्भाग्यवश वसन्तसेना उसकी गाड़ी में बैठ जाती है। तब आर्यक का प्रवेश

होता है। वह चारुदत्त के घर में प्रवेश करता है। चेट आकर कहता है कि मैं गाड़ी का बिछावन ले आया हूँ, अतः रदनिके वसन्तसेना से निवेदन करो कि सुसज्जित गाड़ी पर चढ़कर आर्या पुष्करण्डक नामक जीर्णोद्यान में जाएं। आर्यक चढ़कर गाड़ी में बैठ जाता है। वीरक रक्षकों को सभी दिशाओं में नियुक्त करता है। चन्दनक वीरक से कहता है कि यह बन्द गाड़ी राजमार्ग में जा रही है तनिक यह पता करो कि यह गाड़ी किसकी है और कहाँ जा रही है? वीरक गाड़ी रुकवाकर पूछता है कि यह गाड़ी किसकी है? इसमें कौन है और यह कहाँ जा रही है? चेट वीरक के प्रश्नों का समुचित उत्तर देता है। तत्पश्चात् चन्दनक गाड़ी के भीतर देखता है। आर्यक चन्दनक से कहता है कि मैं शरणागत हूँ। चन्दनक भी शरणागत को अभय है ऐसा कहता है। इसके पश्चात् वीरक भी गाड़ी का निरीक्षण करने की इच्छा प्रकट करता है किन्तु चन्दनक उसको अपने संवादों के जाल में फँसाकर चेट से कहता है कि गाड़ीवान जाओ। यदि कोई पूछता है तो कह देना 'चन्दनक और वीरक द्वारा देखी गई गाड़ी जा रही है' और आर्या वसन्तसेना पहचान के रूप में मैं तुम्हें यह तलवार देता हूँ। इसी घटना के साथ प्रवहण विपर्यय नामक षष्ठ अंक समाप्त होता है।

24.3.2 षष्ठ अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 1,2,4,13,14,15,16,17,18,19,21

इकाई के इस अंश में आप षष्ठ अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, प्रसंग एवं अर्थों का अध्ययन करेंगे।

हित्वाहं नरपतिबन्धनापदेश–

व्यापत्तिपव्यसनमहार्णवं महान्तम्।

पादाग्रस्थितनिगडैकपाशकर्षी–

प्रभ्रष्टो गज इव बन्धनाद् भ्रमामि।।1।।

अन्वयः – महान्तम् नरपतिबन्धनापदेशव्यापत्तिव्यसनमहार्णवम् हित्वा, पादाग्रस्थितनिगडैकपाशकर्षी अहं बन्धनात् प्रभ्रष्टः गजः इव भ्रमामि।

सन्दर्भ – प्रस्तुत श्लोक महाकवि शूद्रक विरचित मृच्छकटिक नामक प्रकरण के षष्ठअङ्क से समुद्धृत है। प्रकृत नाट्य ग्रन्थ में महाकवि शूद्रक ने तत्कालीन समाज का जो जीवन्त चित्रण किया है वह आज भी सहृदय के हृदय को आन्दोलित करता है।

प्रसंग – प्रकृत श्लोक में जेल से भागा हुआ आर्यक बिना पर्दा गिराये प्रवेश करता है एक पैर में लटकी बेड़ी तथा कपड़े से सारी देह ढका हुआ घबड़ाया हुआ घूमते हुए उसके कथनका प्रतिपादन किया गया है।

अर्थ – राजा की कैद के बहाने से होने वाली बहुत बड़े आपत्ति रूप संकट के विशाल महासागर को पार करके, पैर के निचले हिस्से मे लगी बेड़ी रूप एक पाश को खींचने वाला मैं बन्धन से छूटे हुए हाथी के समान घूम रहा हूँ।

शब्दार्थ – महान्तम् – बहुत बड़े, नरपतिबन्धनापदेशव्यापत्तिव्यसनमहार्णवम् – राजा की कैद के बहाने से होने वाली बहुत बड़ी आपत्ति रूप संकट के सागर को, हित्वा – पार करके, पादाग्रस्थितनिगडैकपाशकर्षी – पैर के निचले हिस्से मे लगी बेड़ी रूप एक पाश को खींचने वाला, अहं – मैं, प्रभ्रष्टः – छूटे हुए, गजःइव – हाथी के समान, भ्रमामि – चल रहा हूँ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अपह्नुति तथा श्रौती उपमा अलंकार है। यहाँ प्रहर्षिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्'** अर्थात् जिस छन्द में मगण, नगण, रगण और अन्त में एक गुरुवर्ण क्रमशः आए वहाँ प्रहर्षिणी छन्द होता है। इसके तीसरे और दसवें वर्ण पर यति होती है।

भाग्यानि मे यदि तदा मम कोऽपराधो

यद्वन्यनाग इव संयमितोऽस्मि तेन।

दैवी च सिद्धिरपि लङ्घयितुं न शक्या

गम्यो नृपो बलवता सह को विरोधः।।2।।

अन्वयः – यदि मे भाग्यानि तदा मम कः अपराधः, यत्तेन वन्यनागः इव संयमितः अस्मि। दैवी सिद्धिः अपि च लङ्घयितुं न शक्या, नृपः गम्यः बलवता सह कः विरोधः?

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में आर्यक रोते हुए अपने दुख का वर्णन करता है।

अर्थ – यदि मेरे भाग्य में लिखा है कि मैं राजा बनूँगा तो इसमें मेरा क्या कसूर है? जिससे उस राजा पालक के द्वारा मैं जंगली हाथी के समान बन्धन में डाल दिया गया था। भाग्यवश होने वाली राज्य प्राप्ति भी टाली नहीं जा सकती। फिर राजा तो सबके लिये सेव्य है बलवान से भला कौन विरोध करना चाहेगा?

शब्दार्थ – मे – मेरे, भाग्यानि – भाग्य, वन्यनागः – जंगली हाथी, संयमित – बन्धन में डाल दिया गया, दैवी – भाग्यवश होने वाली, लङ्घयितुम् – टाली जाने के लिये।

टिप्पणी – लङ्घयितुम् – तुमुन् प्रत्यय, शक्या – यत् प्रत्यय।

प्रस्तुत श्लोक में 'वन्यनाग इव' में श्रौती उपमा, 'बलवान के साथ क्या विरोध' में सामान्य का विशेष से समर्थन होने पर अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है।

भवेद् गोष्ठीयानं न च विषमशीलैरधिगतं

वधूसंयानं वा तदभिगमनोपस्थितमिदम्।

बहिर्नेतव्यं वा प्रवरजनयोग्यं विधिवशा

द्विविक्तत्वाच्छून्यं मम खलु भवेदैवविहितम्।।4।।

अन्वयः – इदम् विषमशीलैः अधिगतम् गोष्ठीयानम् न च भवेद्, शून्यं वधूसंयानं तदभिगमनोपस्थितं वा (भवेत्)। विविक्तत्वात् प्रवरजनयोग्यम् विधिवशात् बहिर्नेतव्यम् दैवविहितं मम भवेद् खलु।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में आर्यक का वसन्तसेना को लेने आयी हुई गाड़ी के विषय में कथन का वर्णन किया गया है

अर्थ – यह गाड़ी अशिष्ट आचरण वाले व्यक्ति के द्वारा चढ़ी गयी किसी उत्सव में जाने वाली सवारी न हो, अथवा यह किसी नववधू की सवारी न हो जो उसे ले जाने के लिये आयी हो अथवा मेरे भाग्य के कारण सूनी (किसी के द्वारा न चढ़ी गयी) बाहर ले जाने वाली, बड़े लोगों के चढ़ने के लायक न हो अथवा निर्जन होने के कारण खाली मालूम पड़ने वाली यह गाड़ी निश्चय ही मेरे भाग्य के द्वारा न भेजी गयी हो ।

शब्दार्थ – विषमशीलैः – खराब आचरण वालों के द्वारा, अधिगतं – चढी गयी, गोष्ठीयानं – उत्सव अथवा सभा में जाने वाली सवारी, न भवेत् – न हों, वा – अथवा, वधूसंयानम् – दुल्हन की सवारी, तदभिगमनोपस्थितम् – उसे ले जाने के लिये आयी हुई, विधिवशात् – भाग्य के कारण, प्रवरजनयोग्यम् – बड़े लोगों के चढ़ने के लायक, विविक्तत्वात् – निर्जन होने के कारण, दैवविहितम् – भाग्य के द्वारा भेजी गयी।

टिप्पणी – अधिगतम् – अधि उपसर्ग गम् धातु क्त प्रत्यय।

प्रस्तुत श्लोक में 'गाड़ी किसकी है' इस बात का निश्चय न होने से सन्देह अलंकार है। यहाँ शिखरिणी छन्द है।

कस्तं गुणारविन्दं शीलमृगाङ्कं जनो न जानाति।

आपन्नदुःखमोक्षं चतुःसागरसारं रत्नम्।।13।।

अन्वयः – गुणारविन्दम् शीलमृगाङ्कम् आपन्नदुखमोक्षम् चतुःसागरसारम् रत्नम् तम् कः जनः न जानाति।

प्रसंग – प्रकृत श्लोक में चन्दनक के द्वारा चारुदत्त की प्रशंसा का वर्णन किया गया है।

अर्थ – विपत्तिशीलों का उद्धार करने वाला, चारों सागरों के उत्तम रत्न, गुण में कमल और स्वभाव में चन्द्रमा के समान शीतल आर्य चारुदत्त को कौन मनुष्य नहीं जानता।

शब्दार्थ – गुणारविन्दम् – गुणों में कमल के समान, शीलमृगाङ्कम् – स्वभाव में चन्द्रमा के तुल्य, आपन्नदुःखमोक्षम् – विपत्ति में पड़े हुए लोगों के दुःख दूर करने वाले, चतुःसागरम् –चारों सागरों के सार रूप।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में उपमा और रूपक अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है।

द्वावेव पूजनीयाविह नगर्यां तिलकभूतौ च।

आर्या वसन्तसेना धर्मनिधिश्चारुदत्तश्च।।14।।

अन्वयः – इह नगर्यां द्वौ एव पूजनीयौ तिलकभूतौ च आर्या वसन्तसेना धर्मनिधिः चारुदत्तः च।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – इस (उज्जयिनी) नगरी में दो ही श्रेष्ठ व्यक्ति हैं, पूजनीय हैं, एक आर्या वसन्तसेना और दूसरे धर्मात्मा चारुदत्त।

शब्दार्थ – द्वौ एव – दो ही, तिलकभूतौ – पूजनीय, आर्या – वसन्तसेना।

टिप्पणी – यहाँ एक ही पूजन क्रिया में दोनो की कर्म विवक्षा होने से तुल्योगिता अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है।

जानामि चारुदत्तं वसन्तसेनं च सुष्ठु जानामि।

प्राप्ते च राजकार्ये पितरमप्यहं न जानामि।।15।।

अन्वयः – चारुदत्तं जानामि वसन्तसेनां सुष्ठु जानामि च राजकार्ये प्राप्ते अहं पितरम् अपि न जानामि।

प्रसंग – प्रकृत श्लोक में वीरक के इस कथन का वर्णन है कि मैं वसन्तसेना को भी जानता हूँ चारुदत्त को भी।

अर्थ – चारुदत्त को जानता हूँ, आर्या वसन्तसेना को अच्छी तरह जानता हूँ किन्तु राजकार्य के आ पड़ने पर मैं अपने पिता को भी नहीं जानता।

शब्दार्थ – जानामि – जानता हूँ, सुष्ठु – अच्छी तरह से, राजकार्ये प्राप्ते – राजकार्य के आने पर।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अर्थापत्ति अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है।

एककार्यनियोगेपि नानयोस्तुल्यशीलता।

थ्ववाहे च चितायां च यथा हुतभुजोर्द्वयोः।।16।।

अन्वयः – एककार्यनियोगे अपि अनयोः तुल्यशीलता न। यथा विवाहे चितायां च द्वयोः हुतभुजोः।।16।।

प्रसंग – प्रकृत श्लोक में आर्यक के द्वारा उसके शत्रु और मित्रों का वर्णन किया गया है।

अर्थ – एक ही काम में लगे रहने पर भी इन दोनों के स्वभाव मे समानता नहीं है। जिस तरह विवाह की अग्नि और चिता की अग्नि में समानता नहीं होती, अर्थात् (चन्दनक विवाह की अग्नि के समान सुखदायी और वीरक चिता की अग्नि के समान दुःखदायी है)।

शब्दार्थ – एकार्थनियोगे – एक काम में लगे रहने पर, तुल्यशीलता – स्वभाव में समानता, हुतभुजोः – आग की।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –''**युजोश्चतुर्थतो जेन, पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्।**'' अर्थात् अनुष्टुप् छन्द में चतुर्थ वर्ण के अनन्तर जगण होने से पथ्यावक्त्र नामक छन्द होता है।

भीमस्यानुकरिष्यामि बाहुः शस्त्रं भविष्यति।

वरं व्यायच्छतो मृत्युर्न गृहीतस्य बन्धने।।17।।

अन्वयः – भीमस्य अनुकरिष्यामि बाहुः शस्त्रं भविष्यति, व्यायच्छतः मृत्युः वरं बन्धने गृहीतस्य न।

प्रसंग – आर्यक जिस गाड़ी में बैठा है उसे देखने के लिये वीरक चन्दनक आपस में झगड़ते हैं। चन्दनक कहता है ओ गाड़ी वाले पर्दा उठाओ। आर्यक मन ही मन कहता है–

अर्थ – भीम की नकल करूँगा। मेरी भुजाएं ही मेरे हथियार बनेंगे। जेल में बन्द होने की अपेक्षा लड़कर मर जाना ही अच्छा होगा।

शब्दार्थ – अनुकरिष्यामि – नकल करूँगा, व्यायच्छतः – लड़ते हुए, गृहीतस्य – बन्द किये गये।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है।

त्यजति किल तं जयश्रीर्जहति च मित्राणि बन्धुवर्गश्च।

भवति च सदोपहास्यो यः खलु शरणागतं त्यजति।।18।।

अन्वयः – यः खल शरणागतं त्यजति तम् जयश्रीः त्यजति मित्राणि च जहति बन्धुवर्गः (जहति) सदा उपहास्य च भवति।

प्रसंग – प्रकृत श्लोक में चन्दनक के देख लेने पर आर्यक कहता है मैं आपकी शरण में हूँ, आपको शरणागत की रक्षा करनी चाहिये उस विषय का वर्णन किया गया है।

अर्थ – जो व्यक्तिशरण में आये हुए की रक्षा नहीं करता है, निश्चय ही उसको विजयलक्ष्मी त्याग देती है मित्र तथा भाई-बन्धु भी उसे छोड़ देते हैं और वह हमेशा हंसी का पात्र होता है।

शब्दार्थ – यः – जो, त्यजति – छोड़ देता है, जहति – छोड़ देता है, किल – अवश्य ही।

टिप्पणी – उपहास्यः – हंसी का पात्र, उप+हस्+ण्यत्।

प्रस्तुत श्लोक में समुच्चय अलङ्कार है। यहाँ आर्या छन्द है।

भीताभयप्रदानं ददतः परोपकाररसिकस्य।

यदि भवतु नाशस्तथापि खलु लोके गुण एव।।19।।

अन्वयः – भीताभयप्रदानं ददतः परोपकाररसिकस्य यदि नाशः भवति तदा भवतु तथा अपि च लोके गुण एव।।19।।

प्रसंग – प्रकृत श्लोक में अभयदान देने वाले की प्रशंसा का वर्णन किया गया है।

अर्थ – डरे हुए को अभयदान देने वाले परोपकारी प्रेमी की यदि मौत भी होती हो तो कोई चिन्ता नहीं क्योंकि मृत्यु के बाद भी संसार में उसकी प्रशंसा ही होती है निन्दा नहीं।

शब्दार्थ – भीताभयप्रदानम् – डरे हुए के लिये अभयदान को, परोपकाररसिकस्य – परोपकार करने के प्रेमी, गुणः – प्रशंसा।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में आर्या छन्द है।

जानन्नपि खलु जातिं तव च न भणामि शीलविभवेन।

तिष्ठतु ममैव मनसि किं च कपित्थेन भग्नेन।।21।।

अन्वयः – तवजातिं खलु जानन् अपि शीलविभवेन न भणामि मम एव मनसि तिष्ठतु कपित्थेन भग्नेन च किम्।।21।।

प्रसंग – वीरक और चन्दनक जाति को लेकर आपस में झगड़ा करते हैं चन्दनक वीरक से कहता है कि मैं तुम्हारी जाति जानता हूँ लेकिन शील के कारण कहूँगा नहीं।

अर्थ – तुम्हारी जाति जानता हूँ किन्तु, अपने शील के कारण कहूँगा नहीं। वह मेरे मन में ही रहे, कैथ तोड़ने से क्या लाभ (अर्थात् भण्डाफोड़ करने का कोई लाभ नहीं।)

शब्दार्थ – तव – तुम्हारी, जानन् – जानते हुए, शीलविभवेन – शीलता के कारण, भणामि – कहता हूँ, कपित्थेन – कैथ, भग्नेन – तोड़ने से, किं – क्या लाभ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में आर्या छन्द है।

24.4 सारांश

'मृच्छकटिक' प्रकरण के इस खण्ड की 24वीं इकाई में आपने पंचम एवं षष्ठ अंक की कथावस्तु एवं इन अंकों से चयनित श्लोकों का अध्ययन किया। इस इकाई के माध्यम से आपने यह जाना कि वसन्तसेना दुर्दिन में भी किस प्रकार आर्य चारुदत्त से मिलने जाती है? चारुदत्त वसन्तसेना का स्वागत करता है। चेटी रत्नावली का मूल्य पूछती है तथा चोरी का रहस्य बताते हुए स्वर्णभाण्ड दिखाती है। षष्ठ अंक में रोते हुए रोहसेन को देखकर वह उसके रोने का कारण पूछती है तथा अपने आभूषणों को उतारकर वह उसको सोने की गाड़ी बनवाने के लिए दे देती है। चारुदत्त वसन्तसेना को पुष्करण्डक उद्यान में बुलाता है किन्तु दैववश वसन्तसेना शकार की गाड़ी में बैठ जाती है और आर्यक वसन्तसेना की गाड़ी में। इस प्रकार प्रवहण विपर्यय की घटना से वसन्तसेना शकार के पास पहुँच जाती है और आर्यक चारुदत्त के पास। चारुदत्त उसके बन्धन कटवाकर उसको छोड़ देता है। इस अंक में आपने पंचम एवं षष्ठ अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, अर्थ, टिप्पणी आदि से सम्बन्धित पक्षों का भी अध्ययन किया।

24.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1969

- शूद्रक का मृच्छकटिकः एक आलोचनात्मक अध्ययन – डॉ. विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 1999
- मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर राय, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, 1997
- संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास – प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, 2018

24.6 अभ्यास प्रश्न

1 पञ्चम अङ्क की कथावस्तु पर प्रकाश डालिये।

2 ''**शून्यैर्गृहैः खलु समाः पुरुषा दरिद्राः**'' श्लोक की व्याख्या कीजिए।

3 षष्ठ अङ्क की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।

4''**द्वावेव पूजनीयाविह नगर्यां तिलकभूतौ च**'' श्लोक की व्याख्या कीजिए।

इकाई 25 मृच्छकटिक – सप्तम एवं अष्टम अंक

इकाई की रूपरेखा

25.0 उद्देश्य

25.1 प्रस्तावना

25.2 सप्तम अंक

25.2.1 सप्तम अंक की कथावस्तु

25.2.2 सप्तम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या – 4,5,6,8,9

25.3 अष्टम अंक

25.3.1 अष्टम अंक की कथावस्तु

25.3.2 अष्टम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या–

1,2,3,4,9,16,19,20,23,24,26,29,30,32,33,38,39,47

25.4 सारांश

25.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

25.6 अभ्यास प्रश्न

25.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- सप्तम अंक की कथावस्तु से परिचित होंगे।
- सप्तम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन कर सकेंगे।
- अष्टम अङ्क में आप शकार की नृशंसता से परिचित होंगे।
- एक वेश्या की चरित्रगुणसम्पन्नता से परिचित होंगे।
- अष्टम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन कर सकेंगे।

25.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! 'मृच्छकटिक' प्रकरण से सम्बन्धित इस खण्ड में आपने मृछकटिक का सामान्य परचिय तथा इसके प्रथम अंक से लेकर षष्ठ अंक तक की कथावस्तु एवं चयनित श्लोकों का अध्ययन किया। आपके पाठ्यक्रम में अध्ययन हेतु सम्पूर्ण मृच्छकटिक प्रकरण को रखा

गया है। अतः अध्ययन के इस क्रम में आप इस इकाई में सप्तम एवं अष्टम अंक की कथावस्तु तथा उन अंकों से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे। आप जानते हैं कि इस प्रकरण रूपक में जहाँ एक ओर चारुदत्त और वसन्तसेना के प्रणय की कथा निबद्ध है तो वहीं दूसरी ओर शकार, विट, चेट जैसे धूर्त पात्रों का चित्रण कवि के द्वारा किया गया है। सप्तम अंक में चारुदत्त अपनी उदारता के कारण आर्यक को अभयदान देता है तो वहीं अष्टम अंक में शकार का प्रणय निवेदन स्वीकार न करने पर वह वसन्तसेना का गला घोंट देता है इस प्रकार इस इकाई के माध्यम से आप इन्हीं दोनों घटनाओं के विषय में अध्ययन करेंगे।

25.2 सप्तम अंक

25.2.1 सप्तम अंक की कथावस्तु

सप्तम अंक के प्रारम्भ में चारुदत्त और विदूषक पुष्करण्डक जीर्णोद्यान की शोभा को देखते हैं। विदूषक आर्य चारुदत्त को शिलातल पर बैठने के लिए कहता है। चारुदत्त विदूषक से कहते हैं कि वर्धमानक देर लगा रहा है। उसी समय चेट रथ लेकर प्रवेश करता है। आर्यक आर्य चारुदत्त का दर्शन करके जाने का निश्चय करता है। चारुदत्त विदूषक से वसन्तसेना को उतारने के लिए कहता है। विदूषक भीतर देखकर कहता है कि आर्य यह वसन्तसेना नहीं अपितु वसन्तसेन है। चारुदत्त स्वयं गाड़ी पर चढ़कर देखते हैं और पूछते हैं कि आप कौन है? तब आर्यक बताता है कि आपकी शरण में आया हुआ मैं आर्यक हूँ। चारुदत्त वर्धमानक से कहते हैं कि आर्यक की बेड़ियाँ खोल दो। आर्यक आर्य चारुदत्त से आज्ञा लेकर निकल जाता है। चारुदत्त आर्यक को गाड़ी में ही आगे भेज देते हैं। इस प्रकार आर्यकापहरण नामक सप्तम अंक की समाप्ति होती है।

25.2.2 सप्तम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या – 4,5,6,8,9

स तावदस्माद्व्यसनार्णवोत्थितं निरीक्ष्य साधुः समुपैति निर्वृतिम्।

शरीरमेतद्गतमीदृशीं दशां धृतं मया तस्य महात्मनो गुणैः।।4।।

अन्वयः – साधुः स अस्मात् व्यसनार्णवोत्थितं निरीक्ष्य निर्वृतिं समुपैति। मया ईदृशीं दशां गतं एतत् शरीरं तस्य महात्मनः गुणैः धृतम्।

सन्दर्भ –

प्रसंग – प्रकृत श्लोक में आर्यक गाड़ी से उतरकर कहता है कि शहर से बहुत दूर निकल आया हूँ आर्य चारुदत्त से मिलकर ही जाता हूँ वो शरणागत वत्सल हैं।

अर्थ – वह सज्जन इस विपत्तिरूपी सागर से उबरा हुआ मुझे देखकर सुख को प्राप्त होंगे। मैंने ऐसी अवस्था में पड़े हुए इस शरीर को उन महात्मा के गुणों से ही धारण किया है।

शब्दार्थ – व्यसनार्णवोत्थितं – विपत्तिरूपी सागर से उबरा हुआ, निरीक्ष्य – देखकर, निर्वृत्तिम् – सुख को, समुपैति – प्राप्त होंगे, ईदृशीम् – ऐसी, धृतम् – धारण किया है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में शरीर को उन महात्मा के गुणों से ही धारण किया है में अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ वंशस्थ छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकर है – '**जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ**' अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक जगण, एक तगण, एक जगण और एक रगण हो, वहाँ वंशस्थ छन्द होता है।

करिकरसमबाहुः सिंहपीनोन्नतांसः

पृथुतरसमवक्षास्ताम्रलोलायताक्षः।

कथमिदमसमानं प्राप्त एवंविधो यो

वहति निगडमेकं पादलग्नं महात्मा।।5।।

अन्वयः – करिकरसमबाहुः सिंहपीनोन्नतांसः पृथुतरसमवक्षाः ताम्रलोलायताक्षः यः एवंविधः महात्मा (अस्ति सः) कथम् इदम् असमानं प्राप्तः पादलग्नम् एकम् निगडं वहति।।

प्रसंग – वसन्तसेना को गाड़ी से उतारने के लिये चारुदत्त गाड़ी पर चढकर देखकर अरे यह कौन है जो पैरों में बेड़ी को धारण कर रहा है।

अर्थ – हाथी के सूँड के समान जिसकी भुजाएं हैं सिंह के समान मोटे जिसके कन्धे हैं ऊँची एवं समतल जिसकी छाती है। ताम्र वर्ण की चञ्चल तथा बड़ी-बड़ी जिसकी आँखे हैं इस प्रकार का यह जो महात्मा है कैसे इस अयोग्य अवस्था में पड़कर पैर में लगी हुई एक बेड़ी को धारण कर रहा है।

शब्दार्थ – करिकरसमबाहुः – हाथी के सूँड़ के समान भुजा वाला, सिंहपीनोन्नतांसः – सिंह के समान मोटे एवं ऊँचे कन्धे हैं जिसके, पृथुतरसमवक्षाः – ऊँची एवं समतल छाती वाला, ताम्रलोलायताक्षः – ताम्र वर्ण की, चञ्चल तथा बडी-बडी आँखों वाला, असमानम् – अयोग्य, निगडम् – बेड़ी को, वहति – धारण कर रहा है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में पूर्वार्ध में लुप्तोपमा अलंकार है। यहाँ मालिनी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है ''**ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलौकैः**'' अर्थात् जहाँ दो नगण, एक मगण और दो यगण हों, वहाँ मालिनी छन्द होता है।

विधिनैवोपनीतस्त्वं चक्षुर्विषयमागतः।

अपि प्राणानहं जह्यां न तु त्वां शरणागतम्।।6।।

अन्वयः – विधिना एव उपनीतः त्वं चक्षुर्विषयम् आगतः अहं प्राणान् अपि जह्यं तु शरणागतं त्वां न।

प्रसंग – गाड़ी में चढकर आर्यक को देखने के बाद चारुदत्त पूछता है कि तुम कौन हो आर्यक कहता है मैं अहिर का बेटा फिर चारुदत्त कहता है चाहे प्राण चले जायें पर शरण में आये हुए मैं तुमको नहीं छोड़ सकता।

अर्थ – भाग्य के द्वारा ही लाये गये तुम मेरी आँखों के विषय हुए हो मैं अपने प्राणों को छोड़ सकता हूँ किन्तु अपने शरण में आये हुए तुमको नहीं छोड़ सकता अर्थात् (राजा पालक चाहे मुझे फिर कैद में ही क्यों न डाल दे मुझे अपने प्राण ही क्यों न देना पडे, अपने शरण में आये हुए तुम्हारी रक्षा अवश्य करूँगा)।

शब्दार्थ – विधिना – भाग्य से, एव – ही, उपनीतः – लाये गये, त्वम् – तुम, चक्षुर्विषयम् – आँखों के विषय, जह्याम् – छोड़ दूँ।

प्रस्तुत श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – ''**युजोश्चतुर्थतो जेन, पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्।**'' अर्थात् अनुष्टुप् छन्द में चतुर्थ वर्ण के अनन्तर जगण होने से पथ्यावक्त्र नामक छन्द होता है।

कृत्वैवं मनुजपतेर्महद्व्यलीकं

स्थातुं हि क्षणमपि न प्रशस्तमस्मिन्।

मैत्रेय, क्षिप निगडं पुराणकूपे

पश्येयुः क्षितिपतयोः हि चारदृष्ट्या।।8।।

अन्वयः – हे मैत्रेय! एवं मनुजपतेः महद्व्यलीकं कृत्वा अस्मिन् क्षणम् अपि स्थातुं न प्रशस्तम्। निगडं पुराण कूपे क्षिप। हि क्षितिपतयः चारदृष्ट्या पश्येयुः।

प्रसंग – चारुदत्त आर्यक से कहता है इस तरह राजकीय अपराध करके यहाँ रुकना उचित नहीं। यहाँ से भाग जाओ।

अर्थ – इस प्रकार राजा का बहुत बड़ा अपराध करके इस बगीचे मे क्षण भर भी रुकना उचित नहीं। मैत्रेय बेड़ी को पुराने कुएँ में फेंक दो क्योंकि राजा दूत की आँखों से देखते हैं।

शब्दार्थ – मनुजपतेः – राजा के, महद् – बहुत बड़े, व्यलीकम् – अपराध को, कृत्वा – करके, अस्मिन् क्षणम् – इस एक क्षण, अपि – भी, स्थातुम् – रुकना, न प्रशस्तम् –उचित नहीं, निगडम् – बेड़ी को, पुराणकूपे – पुराने कुएँ में, क्षिप – फेंक दो, हि – क्योंकि, क्षितिपतयः – राजा लोग।

टिप्पणी – व्यलीकम् – अप्रिय,असुखद कार्य, विशेषेण अलति – वि+अल्+धातु+कीकन्। प्रशस्त – योग्य उचित, प्र+शंस्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में प्रहर्षिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्'** अर्थात् जिस छन्द में मगण, नगण, रगण और अन्त में एक गुरुवर्ण क्रमशः आए वहाँ प्रहर्षिणी छन्द होता है। इसके तीसरे और दसवें वर्ण पर यति होती है।

अपश्यतोऽद्य तां कान्तां वामं स्फुरति लोचनम्।

अकारणपरित्रस्तं हृदयं व्यथते मम।।9।।

अन्वयः – अद्य तां कान्ताम् अपश्यतः मम वामं लोचनं स्फुरति, अकारणपरित्रस्तं मम हृदयं व्यथते।

प्रसंग – चारुदत्त मैत्रेय से कहता है कि मित्र मैं वसन्तसेना को न देखने से उतावला हो रहा हूँ।

अर्थ – इस समय प्रियतमा वसन्तसेना को देखे बिना मेरी बांयीं आँख फड़क रही है अकारण ही भयभीत होकर मेरा हृदय पीड़ित हो रहा है।

शब्दार्थ – स्फुरति – फड़क रही है, अकारणपरित्रस्तम् – बिना कारण के ही घबड़ाया हुआ।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में बिना कारण के आँख का स्फुरण रूप कार्य के होने से विभावना अलंकार है।

25.3 अष्टम अंक

25.3.1 अष्टम अंक की कथावस्तु

अष्टम अंक का प्रारम्भ भिक्षु के प्रवेश से होता है। वह अपने गेरुए वस्त्र को धोकर शीघ्र निकल जाता है। तब नेपथ्य से शकार का स्वर सुनाई देता है। शकार भिक्षु को ठहरने के लिए कहता है। तत्पश्चात् शकार, विट और भिक्षु का परस्पर वार्तालाप होता है और भिक्षु निकल जाता है। विट शकार को उद्यान की शोभा देखने के लिए कहता है। शकार विट से कहता है कि स्थावरक चेट अभी तक गाड़ी लेकर नहीं आया। तभी चेट गाड़ी लेकर प्रवेश करता है। वसन्तसेना उसके वचनों को सुनकर कहती है कि यह वर्धमानक का स्वर नहीं है। वसन्तसेना नाना प्रकार के भावों के विषय में सोचती है। शकार पहिए के शब्द को सुनकर विट से कहता है कि गाड़ी आ गई। शकार गाड़ी में भीतर देखकर कहता है कि इस गाड़ी में कोई स्त्री बैठी है। तब विट स्वयं गाड़ी के भीतर झाँककर वसन्तसेना को देखकर कहता

है कि क्या तुम शकार का तिरस्कार करके अब धन के लिए आई हो। तब वसन्तसेना बताती है कि मैं गाड़ी बदलने से आ गई हूँ। विट शकार से कहता है कि सचमुच उस गाड़ी पर राक्षसी बैठी हुई है। विट शकार से पैदल उज्जयिनी नगरी में प्रवेश के लिए कहता है किन्तु शकार नहीं मानता। अन्ततः वह शकार से कहता है कि यह वसन्तसेना आपसे अभिसार करने आई है। शकार प्रसन्न हो जाता है। वह वसन्तसेना के समीप जाकर कहता है कि माता अम्बिके मेरा निवेदन सुनो। वसन्तसेना उसको दूर हटाती है। शकार स्थावरक से पूछता है कि यह तुम्हें कहाँ मिली? तब स्थावरक सम्पूर्ण वृत्तान्त बताता है। शकार कहता है कि भूल से चढ़ गई, यह उस चारुदत्त से अभिसरण कर रही है। वह उसको गाड़ी से नीचे उतारता है। शकार विट से वसन्तसेना को मारने के लिए कहता है किन्तु विट मना कर देता है। तत्पश्चात् वह चेट से वसन्तसेना को मारने के लिए कहता है वह भी इस कार्य को करने से मना कर देता है और निकल जाता है। शकार स्वयं वसनतसेना को मारने के लिए तत्पर होता है तो विट कहता है कि मेरे सामने मारोगे ऐसा कहकर वह शकार का गला पकड़ लेता है। शकार किसी प्रकार विट को उस स्थान से भेज देता है। विट शकार से कहता है कि यह वसन्तसेना तुम्हारे हाथ में धरोहर के रूप में हैं। ऐसा कहकर वह निकल जाता है। शकार और वसन्तसेना के मध्य वार्तालाप होता है। शकार वसन्तसेना को मारने के लिए उद्यत होता है वह क्रन्दन करती हुई वसन्तसेना का गला दबा देता है। वसन्तसेना मूर्च्छित हो जाती है। उसी समय विट और चेट प्रवेश करते हैं। शकार विट को बताता है कि मैंने वसन्तसेना को मार दिया। वह वसन्तसेना को सूखे पत्तों से ढँककर न्यायालय में व्यवहार (अभियोग) लिखवाता है कि चारुदत्त ने धन के लिए पुष्करण्डक उद्यान में वसन्तसेना को मार दिया। ऐसा कहकर वह निकल जाता है।

तदनन्तर संवाहक प्रवेश करता है। वह पत्तों के भीतर साँस लेती हुई वसन्तसेना को देखता है। वह वसन्तसेना पर पानी डालता है। उसकी चेतनता वापस आ जाती है। इसी के साथ सभी निकल जाते हैं और वसन्तसेनामोटन नामक अष्टम अंक समाप्त होता है।

25.3.2 अष्टम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या–

1,2,3,4,9,16,19,20,23,24,26,29,30,32,33,38,39,47

संयच्छत निजोदरं नित्यं जाग्रत ध्यानपटहेन।

विषमा इन्द्रियचौरा हरन्ति चिरसञ्चितं धर्मम्।।1।।

अन्वयः – निजोदरं संयच्छत ध्यानपटहेन नित्यं जाग्रत विषमाः इन्द्रियचौराः चिरसञ्चितं धर्मं हरन्ति।

सन्दर्भ–

प्रसंग – भीगा वस्त्र हाथ में लिये संन्यासी का प्रवेश होता है। वह कहता है अरे अज्ञानियों धर्म का उपार्जन करो।

अर्थ – अपने पेट को नियन्त्रण मे रखो, ध्यानरूपी नगाड़े से सदा जगते रहो, क्योंकि इन्द्रियरूपी बलशाली चोर बहुत दिनों से सञ्चित धर्म का अपहरण कर लेते हैं।

शब्दार्थ – निजोदरम् – अपने पेट को, संयच्छत – संयम या नियन्त्रण में, ध्यानपटहेन – ध्यान रूपी नगाड़े से, विषमाः – बलशाली या भयङ्कर, चिरसञ्चितम् – बहुत दिनों से एकत्रित किये गये, हरन्ति – छीन लेते हैं।

टिप्पणी – संयच्छत – सम्+दाण+लोट्, सञ्चितम् – सम्+चि+क्त, हरन्ति – हृ+क्त, मारिताः – मृ+णिच्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय ध्यान, इन्द्रिय एवं धर्म में उपमान पटह, चोर तथा धर्म का आरोप करने से रूपकालंकार है। जागरण के प्रति इन्द्रिय चौरकतृक धर्मात्मक धनहरण का कारण होने से काव्यलिङ्ग अलङ्कार है। यहाँ आर्या छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथातृतीयेऽपि

अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या।

अर्थात् जिस छन्द के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्रायें, द्वितीय पाद में 18 और चतुर्थ पाद में 15 मात्रायें होती हैं वहाँ आर्या छन्द होता है।

पञ्चजना येन मारिताः स्त्रियं मारयित्वा ग्रामो रक्षितः।

अबलः क्व चाण्डालो मारितोऽवश्यमपि स नरः स्वर्गं गाहते।।2।।

अन्वयः – येन पञ्चजनाः मारिताः, स्त्रियं मारयित्वा, ग्रामः रक्षितः अबलः चाण्डालः च मारितः, स नरः अवश्यं स्वर्गं गाहते।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – जिसने पाँच जनों (इन्द्रियों) को मार दिया अर्थात इन्द्रियों को वश में कर लिया अविद्या रूपी स्त्री को मार कर शरीर रूपी ग्राम की रक्षा कर ली तथा दुर्बल चाण्डाल अहङ्कार को भी नष्ट कर दिया ।

शब्दार्थ – पञ्चजना – पाँच व्यक्ति (इन्द्रियाँ), मारिताः – मार दिया, स्त्रियम् – अविद्या को, मारयित्वा – मारकर, ग्रामः – शरीर या आत्मा, अबलः – निर्बल, चाण्डालः – अहङ्कार, गाहते – अवगाहन करता है

टिप्पणी – मारिताः – मृ+णिच्+क्त, मारयित्वा – मृ+णिच्+क्त्वा।

प्रस्तुत श्लोक में इन्द्रियादि को पञ्चजन आदि से भिन्न होने पर भी अभेदेन वर्णन किया गया है अतएव अतिशयोक्ति अलङ्कार है। यहाँ वैतालीय छन्द है।

शिरो मुण्डितं तुण्डं मुण्डितं चित्तं न मुण्डितं किमर्थं मुण्डितम्

यस्य पुनश्च चित्तं मुण्डितं साधु सुष्ठु शिरस्तस्य मुण्डितम्।।3।।

अन्वयः – शिरः मुण्डितं तुण्डं मुण्डितम् चित्तं न मुण्डितम् (तदा) किमर्थं मुण्डितं पुनः यस्य च चित्तं साधु मुण्डितम्, तस्य शिरः सुष्ठ मुण्डितम्।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – शिर मुंडा लिया, मुँह मुंडा लिया, किन्तु यदि चित्त नहीं मुंडाया तो यह मुडाना भी किस काम का? फिर जिसका चित्त भली-भाँति मुंड गया उसका शिर भी अच्छी तरह मुंड गया।

शब्दार्थ – मुण्डितम् – मुंडा हुआ, साधु – अच्छी प्रकार से, सुष्ठु – भली-भाँति।

टिप्पणी – चित्त मुण्डन ही शिरोमुण्डन है यहाँ भेद में भी अभेद का अभिधान होने से अतिशयोक्ति अलंकार है। यहाँ वैतालीय छन्द है।

अशरणशरणप्रमोदभूतैर्वनतरुभिः क्रियमाणचारुकर्म।

हृदयमिव दुरात्मनामगुप्तं नवमिव राज्यमनिर्जितोपभोग्यम्।।4।।

अन्वयः – अशरणशरणप्रमोदभूतैः वनतरुभिः क्रियमाणचारुकर्म दूरात्मनां हृदय इव अगुप्तं नवं राज्यम् इव अनिर्जितोपभोग्यम् (उद्यानं भवान् पश्यतु)।

प्रसंग – विट वाटिका की निराली छटा को दिखाते हुए कहता है–

अर्थ – आश्रय विहीनों के लिये आश्रयरूप तथा आनन्दस्वरूप वनवृक्षों द्वारा जहाँ मनोहर कार्य किया जा रहा है, जो दुष्टजनों के हृदय के समान अनियन्त्रित है तथा नवीन राज्य के समान भली-भाँति अधिकृत न किया गया एवं सबके उपभोग के योग्य है (ऐसे उद्यान को देखो)।

शब्दार्थ – अशरणशरणप्रमोदभूतैः – गृहरहितों के लिये आश्रय तथा आनन्दस्वरूप, वनतरुभिः – वन वृक्षों के द्वारा, क्रियमाणचारुकर्म – जिसमें सुन्दर कार्य किया जा रहा है, दूरात्मनाम्

– दुष्टों के, अगुप्तम् – असंयत, नवम् – नये, अनिर्जितोपभोग्यम् – भली-भाँति वश में न किये गये और सबके उपभोग के योग्य।

टिप्पणी – अशरणशरण – अशरणानां शरणानि प्रमोदन्ते एभिरिति प्रमोदाः तद्भूताः ते च ते इति तथोक्तास्तैः – विशेषेणं विशेषेणेति समासः, निर्जितोपभोग्यम् – अनिर्जितानि उपभोग्यानि यस्मिन् तत् तथोक्तम्, अगुप्तम् – न गुप्तम्, नञ्+गुप्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में 'दुरात्मनाम् ह्रदयम् इव, नव राज्यम् इव' में उपमा अलंकार है। यहाँ पुष्पिताग्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा'** अर्थात् जिस छन्द के विषम चरणों में दो नगण, एक रगण तथा एक यगण हो और सम चरणों में नगण, दो जगण तथा रगण हो उसके आगे एक गुरुवर्ण हो, वहाँ पुष्पिताग्रा छन्द होता है।

स्त्रीभिर्विमानितानां कापुरुषाणां विवर्धते मदनः।

सत्पुरुषस्य स एव तु भवति मृदुर्नैव वा भवति।।9।।

अन्वयः – स्त्रीभिः विमानितानां कापुरुषाणां मदनः विवर्धते, तु सत्पुरुषस्य स एव मृदुः भवति नैव वा भवति।

प्रसंग – शकार के लिये विट कहता है कि अपमानित होने पर भी यह वसन्तसेना को भूल नहीं पाता है–

अर्थ – कामिनियों के तिरस्कार से जहाँ दुष्ट कामुकों की कामवासना और तेज होती है वहीं सत्पुरुषों की वासना कम हो जाती है या उत्पन्न ही नहीं होती।

शब्दार्थ – विमानितानाम् – अपमानित, कापुरुषाणाम् – अधम पुरुषों का, मदनः – काम, विवर्धते – अधिक बढ जाता है, मृदुः – कम।

टिप्पणी – विमानितानाम् – वि+मन्+णिच्+क्त, षष्ठी बहु., विवर्धते – वि+वृध्+लट्।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है।

शरच्चन्द्रप्रतीकाशं पुलिनान्तरशायिनम्।

ळंसी हंसं परित्यज्य वायसं समुपस्थिता।।16।।

अन्वयः – हंसी शरच्चन्द्रप्रतीकाशं पुलिनान्तरशायिनं हंसं परित्यज्य वायसं समुपस्थिता।

प्रसंग – गाड़ी के बदल जाने पर गाड़ी शकार के पास पहुँचती है। विट गाड़ी के अन्दर वसन्तसेना को देखकर अपने आप कहता है अरे कैसे यह हरिणि व्याघ्र का अनुसरण कर रही है खेद है।

अर्थ – हंसी शरद्कालीन चन्द्रमा के समान नदी के दूसरे तट पर सोये हुए हंस को छोड़कर कौवे के समीप कैसे आ गयी?

शब्दार्थ – शरच्चन्द्रप्रतीकाशम् – शरद ऋतु के चन्द्रमा के सदृश, पुलिनान्तरशायिनम् –नदी के किनारे वाली भूमि में सोये हुए, वायसम् – कौवे के पास, समुपस्थिता – आ गयी।

टिप्पणी – पुलिनान्तरशायिनम् –पुलिनस्य अन्तरे शेते इति तम्, परित्यज्य – परि+त्यज्+क्त्वा, समुपस्थिता – सम्+उप+स्था+क्त+टाप्।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुत हंसी, हंस और काक का वर्णन करके प्रस्तुत वसन्तसेना, चारुदत्त और शकार का वर्णन किया गया है। अतः अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है । 'शरच्चन्द्रप्रतीकाशम्' में लुप्तोपमालंकार है। यहाँ पथ्यावक्त्र छन्द है।

यच्चुम्बितमम्बिकामातृकाभिर्गतं न देवानामपि यत्प्रणामम्।

तत्पातितं पादतलेन मुण्डं वने श्रृगालेन यथा मृताङ्गम्।।19।।

अन्वयः – यत् अम्बिकामातृकाभिः चुम्बितं यत् देवानाम् अपि प्रणामं न दत्तम्, तत् मुण्डं (त्वया) पादतलेन पातितं यथा वने श्रृगालेन मृताङ्गम्।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में शकार क्रुद्ध होकर कहता है–

अर्थ – जिस मस्तक को मेरी माँ ने चूमा, जो कभी देवताओं के आगे भी नहीं झुका उसी मस्तक को तूने चरण तल से उसी प्रकार गिरा दिया जैसे वन में सियार के द्वारा मृतक शरीर(कुचल दिया जाता है।)

शब्दार्थ – अम्बिकामातृकाभिः – माताओं के द्वारा, मुण्डम् – मस्तक, पादतलेन – पैर के तलवे से, पातितम् – गिरा दिया गया।

टिप्पणी – मातृका – मातृ+क+टाप्, प्रणामम् – प्र+नम्+घञ्, पातितम् – पत्+णिच्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में 'वने श्रृगालेन यथा मृताङ्गम्' में उपमालंकार है। यहाँ उपजाति छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – '**अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः**' अर्थात् इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के चरणों के मिलने से बना हुआ छन्द उपजाति कहलाता है।

एताभ्यां ते दशनखोत्पलमण्डलाभ्यां, हस्ताभ्यां चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम्।

कर्षामि ते वरतनुं निजयानकात्, केशेषु बालिदयितामिव यथा जटायुः।।20।।

अन्वयः – दशनखोत्पलमण्डलाभ्यां चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम् एताभ्यां हस्ताभ्यां यथा जटायुः बालिदयिताम् इव केशेषु ते वरतनुम् निजयानकात् कर्षामि।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में शकार पुनः कहता है–

अर्थ – दश नखरूपी कमलसमूह वाले तथा मीठी-मीठी बातों की तरह पीटने मे अभ्यस्त अपने हाथों से तुम्हारा बाल पकड़कर गाड़ी घसीटकर उसी तरह निकालता हूँ जैसे जटायु ने बालि की पत्नी तारा को घसीटा था।

शब्दार्थ – दशनखोत्पलमण्डलाभ्यां – दश नखरूपी कमलसमूह वाले, चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम् – मीठे वचनों के समान पीटने के लालची, बालिदयिताम् – बालि की स्त्री को, वरतनुम् – श्रेष्ठ शरीर को, कर्षामि – खींचता हूँ।

टिप्पणी – दशनखोत्पलमण्डलाभ्याम् – दशनखाः एव उत्पलानां मण्डलं ययोः ताभ्याम्, चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम् – चाटुशतानि इव ताडनानि।

प्रस्तुत श्लोक में वसन्ततिलका छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – ''**उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः**'' अर्थात् जिस छन्द में तगण, भगण, जगण और दो गुरु वर्ण हों वहाँ वसन्ततिलका छन्द होता है।

बालां स्त्रियं च नगरस्य विभूषणं च

वेश्यामवेशसदृशप्रणयोपचाराम्।

एनामनागसमहं यदि घातयामि

केनोडुपेन परलोकनदीं तरिष्ये।।23।।

अन्वयः – यदि अहं नगरस्य विभूषणम् अवेशसदृशप्रणयोपचाराम्, वेश्यां बालां अनागसं एनां स्त्रियं घातयामि (तर्हि) केन उडुपेन परलोकनदीं तरिष्ये।

प्रसंग – वसन्तसेना को मारने के लिये शकार विट को अनेक लालच देता है। विट कहता है इसे मारकर मैं परलोक को कैसे पार करूँगा–

अर्थ – यदि मैं उज्जयिनी के विभूषण वेश्याओं के विरुद्ध कुलकामिनी के सदृश प्रेमवती इस निरपराध वेश्या की हत्या कर दूँगा तो परलोक की वैतरणी को किस नाव से पार करूँगा।

शब्दार्थ – अवेशसदृशप्रणयोपचाराम् – वेश्यायों के अयोग्य अर्थात् कुलीन स्त्री के सदृश प्रेम व्यवहार करने वाली, अनागसम् –निरपराध, उडुपेन – नौका, तरिष्ये – पार करूँगा।

टिप्पणी – अवेशसदृशप्रणयोपचाराम् – अवेशसदृशः प्रणयस्य उपचारः यस्याः ताम्, तरिष्ये – तॄ, लट्, उ.पु.एक.।

प्रस्तुत श्लोक में विशेषण वाचक पदों के साभिप्राय होने से परिकर अलंकार है। निरङ्गरूपक होने से सङ्कर अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है।

पश्यन्ति मां दशदिशो वनदेवताश्च

चन्द्रश्च दीप्तकिरणश्च दिवाकरोऽयम्।

धर्मानिलौ च गगनं च तथान्तरात्मा

भूमिस्तथा सुकृतदुष्कृतसाक्षिभूता।।24।।

अन्वयः – सुकृतदुष्कृतसाक्षिभूताः दशदिशः वनदेवताः च चन्द्रः च दीप्तकिरणः अयम् दिवाकरः च धर्मानिलौ च गगनं च तथा अन्तरात्मा तथा भूमिः माम पश्यन्ति।

प्रसंग – शकार कहता है कि वसन्तसेना को मारते हुए तुम्हें कौन देखेगा तो विट उसके प्रत्युत्तर में कहता है –

अर्थ – पाप और पुण्य की साक्षी ये दिशायें, वनदेवता, चन्द्रमा, तीक्ष्ण किरणों वाले दिवाकर, धर्म, वायु आकाश तथा अन्तरात्मा और भूमि मुझे देखती हैं।

शब्दार्थ – सुकृतदुष्कृतसाक्षिभूताः – पाप और पुण्य की साक्षी, दीप्तिकिरणः – चमकती हुई किरणों वाला।

टिप्पणी – साक्षिभूताः – साक्षात्+इनि साक्षाद् द्रष्टरि संज्ञायाम् इति सूत्रेण = साक्षिन्।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुत दिक् आदिकों का पश्यन्ती इस एक क्रिया के साथ सम्बन्ध होने से तुल्ययोगिता अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है।

अप्येष नाम परिभूतदशो दरिद्रः

प्रेष्यः परत्र फलमिच्छति नास्य भर्ता

तस्मादमी कथमिवाद्य न यान्ति नाशं

ये वर्धयन्त्यसदृशं सदृशं त्यजन्ति।।26।।

अन्वयः – परिभूतदशः दरिद्रः प्रेष्यः अपि एषः परत्र फलं नाम इच्छति अस्य भर्ता न (इच्छति), तस्मात् ये असदृशं वर्धयन्ति सादृशं त्यजन्ति अमी अद्य कथमिव नाशं न यान्ति।

प्रसंग – वसन्तसेना को मारने के लिये शकार चेट से भी कहता है किन्तु वह भी परलोक के भय से मना कर देता है तब शकार कहता है –

अर्थ – अपमानित अवस्था वाला दरिद्र दास भी यह चेट परलोक के फल की इच्छा करता है किन्तु इसका स्वामी शकार नहीं। तब जो (शकार जैसे) लोग अनुचित कामों की ढेर लगाते हैं और उचित कामों को छोड़ देते हैं, वे आज ही विनाश को क्यों नही प्राप्त हो जाते ।

शब्दार्थ – परिभूतदशः – दयनीय अवस्था वाला, प्रेष्यः – दास, परत्र – परलोक में, दृशम् – उचित को।

टिप्पणी – प्रेष्य – प्र+इष्+ण्यत् वृद्धिः, भर्ता – भृ+तृच।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है।

किं कुलेनोपदिष्टेन शीलमेवात्र कारणम्।

भवन्ति सुतरां स्फीताः सुक्षेत्रे कण्टकिद्रुमाः।।29।।

अन्वयः – कुलेन उपदिष्टेन किम् (यतः) अत्रशीलम् एव कारणं सुक्षेत्रे कण्टकिद्रुमाः सुतरां स्फीताः भवन्ति।

प्रसंग – शकार विट के सामने कहता है कि मैं वसन्तसेना को मारूँगा विट उसका गला पकड़ लेता है फिर शकार कहता है ऊँचे कुल खानदान का होकर मैं ऐसा कुकर्म क्यों करूँगा? विट कहता है–

अर्थ – कुल के कथन से क्या लाभ क्योंकि इसमें (अनुचित कार्य में) तो स्वभाव ही कारण है। अच्छे खेत में भी काटेंदार पौधे बहुत अधिक समृद्ध हो जाते हैं।

शब्दार्थ – शीलम् – स्वभाव, सुक्षेत्रे – अच्छे खेत में, कण्टकिद्रुमाः – काटेंदार पौधे, सुतराम् – बहुत अधिक, स्फीताः – समृद्ध।

टिप्पणी – उपदिष्टेन – उप+दिश्+क्त, स्फीताः – स्फाय+क्त (स्फी आदेश)।

प्रस्तुत श्लोक में कण्टकिद्रुमाः से प्रस्तुत शकार विशेष का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ पथ्यावक्त्र छन्द है।

अस्मत्समक्षं हि वसन्तसेना शौण्डीर्यभावान्न भजेत मूर्खम्।

तस्मात्करोम्येष विविक्तमस्या विविक्तविश्रम्भरसो हि कामः।।30।।

अन्वयः – वसन्तसेना शौण्डीर्यभावात् अस्मत्समक्षं मूर्खं न भजेत्, तस्मात् एषः अस्याः विविक्तं करोमि हि कामः विविक्तविश्रम्भरसः (भवति)।

प्रसंग – विट कहता है स्थान एकान्त कर देता हूँ वसन्तसेना अपने उदात्तता के कारण इस मूर्ख को स्वीकार न कर रही हो

अर्थ – वसन्तसेना अपने स्वाभिमान के कारण हमारे सामने इस मूर्ख को स्वीकार न कर रही हो, अतः मैं इसको एकान्त कर देता हूँ क्योंकि काम निर्जन एवं विश्वस्त स्थान मे अनुकूलता को प्राप्त होता है

शब्दार्थ – शौण्डीर्यभावात् – उच्च गुणों अथवा स्वाभिमान के कारण, विविक्तम् – एकान्त, विविक्तविश्रम्भरसः – निर्जन एवं विश्वस्त स्थान में आनन्ददायक।

टिप्पणी – विविक्तविश्रम्भरसः – विविक्ते वश्रम्भः तेन रसः यस्मिन् सः, विवक्तम् – वि+विच्+त।

प्रस्तुत श्लोक में सामान्य काम के एकान्तरसत्व से, विशेष वसन्तसेनागत काम के उद्‌बोधन का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ उपजाति छन्द है।

खलचरित निकृष्ट जातदोषाः कथमिह मां परिलोभसे धनेन।

सुचरितचरितं विशुद्धदेहं न हि कमलं मधुपाः परित्यजन्ति।।32।।

अन्वयः – हे खलचरित निकृष्ट (त्वम्) जातदोषः इह माम धनेन कथं परिलोभसे मधुपाः सुचरितचरितं विशुद्धदेहं कमलम् हि न परित्यजन्ति।

प्रसंग – शकार के धन का लालच देने पर भी वसन्तसेना उस पर आकृष्ट नहीं होती अपितु कहती है–

अर्थ – हे दुष्ट चरित्र वाले अधम तुम पाप से युक्त होकर मुझे यहाँ धन से क्यों लुभा रहे हो? भ्रमर सुन्दर स्वभाव एवं आकर्षक आकृति वाले कमल को छोड़कर अन्य कहीं नहीं जाते अर्थात् मैं तुम्हारे धन के लालच से कमल की तरह पवित्र एवं गुणी चारुदत्त को नहीं छोड़ सकती।

शब्दार्थ – खलचरित – दुष्ट चरित्र वाले, निकृष्ट – अधम, जातदोषः – दोषों की उत्पत्ति जहां से हो, परिलोभयसे – लुभा रहे हो, मधुपाः – भ्रमर, सुचरितचरितम् – सुन्दर शील वाले।

टिप्पणी – जातदोषः – जाताः दोषाः यस्य सः, निकृष्ट – नि+कृष्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुत मधुप अकतृक कमल का परित्याग रूप सम से प्रस्तुत वसन्तसेना अकतृक चारुदत्त के अपरित्याग सम की प्रतीति होने से अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ पुष्पिताग्रा छन्द है।

यत्नेन सेवितव्यः पुरुषः कुलशीलवान्दरिद्रोऽपि।

शोभा हि पण्यस्त्रीणां सदृशजनसमाश्रयः कामः।।33।।

अन्वयः – कुलशीलवान् पुरुषः दरिद्रः अपि यत्नेन सेवितव्यः हि सदृशजनसमाश्रयः कामः पण्यस्त्रीणां शोभा (अस्ति)।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – कुलवान् एवं शील पुरुष के निर्धन होने पर भी उसकी सेवा यत्नपूर्वक करनी चाहिये समान गुण वाले व्यक्ति के साथ समागम ही वेश्याओं की शोभा है।

शब्दार्थ – सदृशजनसमाश्रयः – अपने योग्य पुरुष के साथ किया गया समागम, परस्त्रीणाम् – वेश्याओं की।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुत पुरुष एवं परस्त्री सामान्य से प्रस्तुत पुरुष परस्त्री विशेष चारुदत्त और वसन्तसेना की प्रतीति होने से अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। परस्त्रीशोभावर्धक कारण रूप से कुलशीलवान् पुरुष के सेवन रूप कार्य का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है। काम शोभा में कारण एवं कार्य का अभेद रूप से कथन होने से हेतु अलंकार है। इन सबका परस्पर अङ्गाङ्गिभाव होने से सङ्कर अलंकार है। यहाँ आर्या छन्द है।

दाक्षिण्योदकवाहिनी विगलिता याता स्वदेशं रतिः–

हा हालङ्कृतभूषणे सुवदने क्रीडारसोद्भासिनी।

हा सौजन्यनदि प्रहासपुलिने हा मादृशामाश्रये

हा हा नश्यति मन्मथस्य विपणिः सौभाग्यपण्याकरः।।38।।

अन्वयः – दाक्षिण्योदकवाहिनी विगलिताः रतिः स्वदेशं याता, हा हा अलङ्कृतभूषणे सुवदने हा प्रहासपुलिने सौजन्यनदि हा मादृशाम् आश्रये हा हा मन्मथस्य विपणिः सौभाग्यपण्याकरः नश्यति।

प्रसंग – शकार के द्वारा वसन्तसेना के मार दिये जाने पर विट रोते हुए वसन्तसेना की प्रशंसा करते हुए कहता है–

अर्थ – उदारतारूपी जल की नदी नष्ट हो गयी, रति अपने देश स्वर्ग को चली गयी। हा आभूषणों को सुशोभित करने वाली, सुन्दर मुख वाली काम क्रीडा के आनन्द को प्रकाशित करने वाली, हा हास परिहास रूपी बालुकामय किनारों वाली, सुजनता की नदी, हा मेरे जैसों को आश्रय देने वाली, कामदेव का बाजार, सौन्दर्यरूपी विक्रेय वस्तु की खान (निधि) नष्ट हो गयी।

शब्दार्थ – दाक्षिण्योदकवाहिनी – उदारता रूपी जल की नदी, विगलिताः – नष्ट हो गयी, याता – चली गयी, अलङ्कृतभूषणे – आभूषणों को अलंकृत करने वाली, सुवदने – सुन्दर मुख वाली, क्रीडारसोद्भासिनी – काम क्रीडा के आनन्द को प्रकाशित करने वाली, प्रहासपुलिने – हास परिहास रूपी रेतीले किनारों वाली, सौजन्यनदि –सुजनता की नदी।

टिप्पणी – विगलिताः – वि+गल्+टाप्, रतिः – रम्+क्तिन्, याता – या+क्त+टाप्, अलंकृत – अलम्+कृ+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में 'दाक्षिण्योदकवाहिनी विगलिताः' में परम्परित रूपक अलंकार तथा

'प्रहासपुलिने सौजन्यनदि, मन्मथस्य विपणिः सौभाग्यपण्याकरः' में एकदेशविवर्तिरूपक है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्'** अर्थात् जिस छन्द में मगण, सगण, जगण, सगण, दो तगण और एक गुरुवर्ण हो, बारह और सात वर्णों पर यति हो, वहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द होता है।

किं नु नाम भवेत्कार्यमिदं येन त्वया कृतम्।

अपापा पापकल्पेन नगरश्रीर्निपातिता।।39।।

अन्वयः – किं नु नाम कार्यं भवेत् येन त्वया इदं कृतं पापकल्पेन अपापा नगरश्री निपातिताः।

प्रसंग – विट दुःखित होकर कहता है महाकष्ट है वसन्तसेना को मारकर तुम्हारा कौन सा मनोरथ पूरा हुआ?

अर्थ – कौन सा प्रयोजन होगा जिसके कारण तुमने यह पाप किया है। पापी तुमने इस पापरहित नगरलक्ष्मी को समाप्त कर दिया।

शब्दार्थ – पापकल्पेन – पाप के समान, अपापा – पापरहित, निपातिताः –मार दिया।

टिप्पणी – अपापा– नास्ति पापं यस्याः सा, निपातिता – नि+पत्+णिच्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में पापकल्पेन में आर्थी उपमा है और नगरश्री में रूपक अलंकार है। यहाँ पथ्यावक्त्र छन्द है

हस्तसंयतो मुखसंयतः इन्द्रियसंयतः स खलु मनुष्यः।

किं करोति राजकुलं तस्य परलोको हस्ते निश्चलः।।47।।

अन्वयः – स खलु मानुषः हस्तसंयतः मुखसंयतः इन्द्रियसंयतः राजकुलं तस्य किं करोति, परलोकः तस्य हस्ते निश्चलः।

प्रसंग – बौद्ध भिक्षु मूर्च्छित पड़ी हुई वसन्तसेना को बचाता है और मनुष्य की सार्थकता का श्लोक कहता है–

अर्थ – वही मनुष्य वस्तुतः मनुष्य है जिसका हाथ, मुँह, इन्द्रियाँ वश मे रहती हैं। राजकुल उसका क्या बिगाड़ सकता है। परलोक तो उसके हाथ में है।

टिप्पणी – संयतः – सम्+यम्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में 'स खलुमानुषः' इस कथन से 'न पुनरन्यः' इस अन्य का व्यपोहन होने से परिसंख्या अलंकार है। यहाँ गीति एवं उपगीति से मिश्रित छन्द है।

25.4 सारांश

मृच्छकटिक प्रकारण की 25वीं इकाई में आपने सप्तम एवं अष्टम अंक की कथावस्तु एवं चयनित श्लोकों का अध्ययन किया। आपने यह जाना कि सप्तम अंक में पुष्करण्डक उद्यान में चारुदत्त और मैत्रेय वसन्तसेना की प्रतीक्षा करते हैं किन्तु गाड़ी बदलने की घटना के कारण वसन्तसेना की गाड़ी में आर्यक बैठ जाता है और वह चारुदत्त के पास पुष्करण्डक उद्यान पहुँच जाता है जहाँ चारुदत्त अपनी उदारता के परिणामस्वरूप उसका बन्धन कटवाकर उसको अभयदान देता है। वसन्तसेना भी प्रवहण विपर्यय की घटना के परिणामस्वरूप शकार के पास पहुँच जाती है। शकार वसन्तसेना के प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित करता है किन्तु वह उसके प्रणय को स्वीकार नहीं करती है। शकार उसका गला घोंट देता है तथा चारुदत्त पर वसन्तसेना को मारने का आरोप लगाने के लिए न्यायालय चला जाता है। उसी समय बौद्ध भिक्षु आकर वसन्तसेना के प्राणों की रक्षा करता है। इस इकाई में आपने सप्तम एवं अष्टम अंक के चयनित श्लोकों के अन्वय, अर्थ, शब्दार्थ तथा टिप्पणियों का भी अध्ययन किया।

25.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1969

- शूद्रक का मृच्छकटिकः एक आलोचनात्मक अध्ययन – डॉ. विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 1999
- मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर राय, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, 1997
- संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास – प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, 2018

25.6 अभ्यास प्रश्न

1 सप्तम अङ्क की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।

2 **'करिकरसमबाहुः सिंहपीनोन्नतांसं'** श्लोक का अर्थ कीजिए।

3 षष्ठ अङ्क की कथावस्तु संक्षेप मे लिखिए।

4 **'दाक्षिण्योदकवाहिनी विगलिता याता स्वदेशं'** श्लोक की व्याख्या कीजिए

इकाई 26 मृच्छकटिक – नवम एवं दशम अंक

इकाई की रूपरेखा

26.0 उद्देश्य

26.1 प्रस्तावना

26.2 नवम अंक

26.2.1 नवम अंक की कथावस्तु

26.2.2 नवम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 2,3,4,5,7,9,11,15,16,20,26

26.3 दशम अंक

26.3.1 दशम अंक की कथावस्तु

26.3.2 दशम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या–

9,13,14,15,16,23,25,49,56,60,61

26.4 सारांश

26.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

26.6 अभ्यास प्रश्न

26.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- मृच्छकटिक प्रकरण की नवम अंक की कथावस्तु का परिचय प्राप्त करेंगे।
- तत्कालीन न्याय व्यवस्था से परिचित होंगे।
- नवम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।
- दशम अंक की कथावस्तु का परिचय प्राप्त करेंगे।
- चारुदत्त की उदरता से परिचित होंगे।

26.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! आपने मृच्छकटिक प्रकरण के प्रथम अंक से लेकर अष्टम अंक तक की कथावस्तु एवं चयनित श्लोकों का अध्ययन कर लिया है। आप जानते हैं कि शकार पुष्करण्डक उद्यान में वसन्तसेना का गला घोंट देता है और उसको मृत समझकर वह इस कृत्य का आरोप चारुदत्त पर लगाता है। नवम अंक की कथावस्तु इसी घटना से सम्बद्ध है। व्यवहार नामक इस नवम अंक में शकार न्यायालय जाकर न्यायाधीश के समक्ष अपना पक्ष रखता है। न्यायधीश चारुदत्त को बुलवाते हैं और व्यवहार का प्रारम्भ होता है। शकार येन-केन प्रकारेण चारुदत्त पर अभियोग सिद्ध करवा देता है परिणामस्वरूप उसको मृत्युदण्ड की सजा दी जाती है। दशम अंक में चारुदत्त को वध स्थान की ओर ले जाया जाता है। जहाँ संवाहक और वसन्तसेना समय से पहुँच जाते हैं तथा मृत्युदण्ड की प्रक्रिया रुक जाती है। उसी समय पालक को मारकर आर्यक राजा बन जाता है। वह शकार को मृत्युदण्ड देता है किन्तु चारुदत्त की उदारता के परिणामस्वरूप शकार बच जाता है। चारुदत्त और वसन्तसेना का मिलन हो जाता है। इसी के साथ प्रकरण का सुखद अन्त होता है। इस इकाई में आप नवम एवं दशम अंक की कथावस्तु के साथ इन अंकों के चयनित श्लोकों का भी अध्ययन करेंगे।

26.2 नवम अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के नवम अंक की कथावस्तु एवं नवम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

26.2.1 नवम अंक की कथावस्तु

नवम अंक का प्रारम्भ शोधनक के प्रवेश से होता है। वह न्यायालय को व्यवस्थित करता है तभी उसकी दृष्टि शकार पर पड़ती है। शकार न्यायालय में चारुदत्त के विरुद्ध अभियोग लिखवाने के विषय में सोचता है। तभी न्यायालय के अधिकारियों का प्रवेश होता है। अधिकरणिक शोधनक से कहते हैं कि ज्ञात करो ''कौन-कौन व्यवहार प्रस्तुत करने का इच्छुक है। शोधनक बाहर जाकर पूछता है तो शकार कहता है कि मैं व्यवहार प्रस्तुत करने का इच्छुक हूँ। शोधनक भीतर जाकर न्यायाधीशों से निवेदन करता है। अधिकरणिक कहता है कि उससे कहिए जाओ आज तुम्हारा विवाद नहीं विचारा जाता।'' इस पर शकार क्रुद्ध होकर न्यायाधीश को हटाकर दूसरे न्यायाधीश की नियुक्ति की बात कहता है। शोधनक यह बात न्याधिकारियों को बताता है। शोधनक शकार को न्यायालय में प्रवेश कराता है। शकार बताता है कि पुष्करण्डक नामक जीर्णोद्यान में प्रवेश करके किसी ने भुजापाश से बलपूर्वक वसन्तसेना

को मार दिया। न्यायाधिकारीगण वसन्तसेना की माता को बुलवाते है। वह बताती है कि उसकी पुत्री वसन्तसेना आर्य चारुदत्त के घर गई है। तदनन्तर अधिकरणिक आर्य चारुदत्त को भी न्यायालय में बुलवाते हैं।

चारुदत्त शोधनक के साथ न्यायालय में प्रवेश करता है। अधिकारणिक चारुदत्त से पूछते हैं कि क्या आपका वसन्तसेना के प्रति स्नेह है? चारुदत्त पूछता है कि मेरा व्यवहार किसके साथ है? तब शकार कहता है मेरे साथ। चारुदत्त अधिकरणिक को बताता है कि वसन्तसेना अपने घर गई। श्रेष्ठी कायस्थ पूछता है कि किसके साथ? उसी समय शकार पुनः कहता है मेरे पुष्पकरण्डक नामक उद्यान में ले जाकर भुजापाश से बलपूर्वक मार दी गई है और अब कह रहे हो ''घर को गई''। अधिकरणिक कहता है कि आर्य चारुदत्त अकार्य को कैसे करेंगे? अधिकरणिक पुनः प्रश्न करता है वह पैदल गई अथवा गाड़ी से। इस पर चारुदत्त उत्तर देता है मेरे सामने नहीं गई, अतः मैं नहीं जानता। उसी समय वीरक न्यायालय में प्रवेश करता है और बताता है कि आर्यक को ढूँढते हुए ''ढँकी हुई गाड़ी जा रही है'' यह विचार करते हुए ''तूने (चन्दनक) ने देख ली मुझे (वीरक) भी देख लेनी चाहिए''। यह कहते ही मुझे चन्दनक ने लात मारी। अब आप ही प्रमाण हैं। तब अधिकरणिक वीरक से पूछता है कि वह गाड़ी किसकी थी? इस पर वीरक बताता है कि आर्य चारुदत्त की। ''इस पर बैठी वसन्तसेना पुष्करण्डक उद्यान में क्रीड़ा के लिए ले जाई जा रही है'' ऐसा गाड़ीवान ने कहा था। अधिकरणिक वीरक से कहता है कि पुष्करण्डक उद्यान में जाकर देखो वहाँ कोई मृतक स्त्री है या नहीं। वीरक आकर बताता है कि मैंने स्त्री का शरीर हिंसक पशुओं द्वारा समाप्त किया जाता देखा है। श्रेष्ठी पूछता है कि कैसे ज्ञात किया कि वह स्त्री का शरीर है। तब वीरक उत्तर देता है बचे हुए केशपाश आदि से। चारुदत्त आसन से उतरकर नीचे बैठ जाता है। शकार प्रसन्न होता है। उसी समय विदूषक भी न्यायालय में प्रवेश करता है। चारुदत्त और विदूषक के मध्य वार्तालाप होता है और अन्त में चारुदत्त पर अभियोग सिद्ध हो जाता है। राजा पालक उसको श्मशान में ले जाकर शूली पर चढ़ाने का आदेश देते हैं। इसी के साथ सब निकल जाते हैं और व्यवहार नामक नवम अंक की समाप्ति होती है।

26.2.2 नवम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 2,3,4,5,7,9,11,15,16,20,26

इकाई के इस अंश में आप नवम अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, प्रसंग एवं अनुवाद प्रक्रिया का अध्ययन करेंगे।

क्षणेन ग्रन्थिः क्षणजूलिका मे क्षणेन बालाः क्षणकुन्तला वा।

क्षणेन मुक्ताः क्षणमूर्ध्वचूडाश्चित्रो विचित्रोऽहं राजश्यालः।।2।।

अन्वयः – मे (केशेषु) क्षणेन मुक्ताः क्षणजूलिका (भवति), क्षणेन, (ते) बालाः, वा, क्षणकुन्तलाः, मुक्ताः क्षणम्, ऊर्ध्वचूडाः (भवति), (सत्यम्) अहम् चित्र, विचित्रः, राजश्यालः (अस्मि)।

सन्दर्भ – प्रस्तुत श्लोक महाकवि शूद्रक विरचित मृच्छकटिक नामक प्रकरण के नवम अङ्क से समुद्धृत है। प्रकृत नाट्य ग्रन्थ मे महाकवि शूद्रक ने तत्कालीन समाज का जो जीवन्त चित्रण किया है वह आज भी सहृदय के हृदय को आन्दोलित करता है।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में अपनी प्रशंसा करते हुए शकार के न्यायालय मे अभियोग लिखवाने का वर्णन किया गया है।

अर्थ – मेरे (केश) क्षणभर में गाँठ बनते हैं तो क्षणभर मे जूड़ाबन जाते हैं क्षणभर में (वे) सामान्य बाल और क्षण भर में घुंघराले बाल हो जाते हैं। पुनः क्षणभर को खुले हुए तथा क्षणभर में ऊपर को शिखायुक्त हो जाते हैं। मैं चित्र-विचित्र राजा का साला हूँ।

टिप्पणी – चित्रः = चित्र+अच् अथवा चि+ष्ट्रन।

प्रस्तुत श्लोक में उपजाति छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – '**अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः**' अर्थात् इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के चरणों के मिलने से बना हुआ छन्द उपजाति कहलाता है।

छन्नं कार्यमुपक्षिपन्ति पुरुषा न्यायेन दूरीकृतं

स्वान्दोषान्कथयन्ति नाधिकरणे रागाभिभूताः स्वयम्।

तैः पक्षापरपक्षवर्धित बलैर्दोषैर्नृपः स्पृश्यते

संक्षेपादपवाद एव सुलभो द्रष्टुर्गुणो दूरत।।3।।

अन्वयः – पुरुषाः न्यायेन दूरीकृतं कार्यम्, छन्नम् उपक्षिपन्ति रागाभिभूताः स्वयम्, स्वान् दोषान् अधिकरणे न कथयन्ति, पक्षापरपक्षवर्धित बलैस्तैः दोषैः नृपः स्पृश्यते, संक्षेपात् द्रष्टुः अपवादः एव सुलभः गुणः दूरतः।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में अधिकरणिक के द्वारा न्यायाधीश के विषय में उक्त कथन वर्णित है कि न्याय पराधीन होने के कारण न्यायाधीशों के लिये दूसरे के चित्त को जानना कठिन है।

अर्थ – वादी और प्रतिवादी गण सही बात को छिपाकर अभियोग उपस्थित करते हैं। क्रोध और आसक्ति के कारण अपने दोषों को छिपाकर अभियोग कहते हैं। पक्ष विपक्ष के द्वारा

परिवर्धित पाप ही न्यायाधीश तक पहुँच पाता है। संक्षेप मे यही कहा जा सकता है कि न्यायाधीश की बहुत निन्दा होती है। यश तो दूर ही रहता है।

टिप्पणी – छन्नम् = छद्+क्त, द्रष्टुः = दृश्+तृच्, अपवादः = अप+वद्+घञ्।

प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिङ्ग अलंकार है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्'** अर्थात् जिस छन्द में मगण, सगण, जगण, सगण, दो तगण और एक गुरुवर्ण हो, बारह और सात वर्णों पर यति हो, वहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द होता है।

छन्नं दोषमुदाहरन्ति कुपिता न्यायेन दूरीकृताः

स्वान्दोषान्कथयन्ति नाधिकरणे सन्तोऽपि नष्टा ध्रुवम्।

ये पक्षापरपक्षदोषसहिताः पापानि संकुर्वते

संक्षेपादपवाद एव सुलभो द्रष्टुर्गुणो दूरतः।।4।।

अन्वयः – कुपिताः न्यायेन दूरीकृताः (ये पुरुषाः), अधिकरणे छन्नम् दोषम् उदाहरन्ति (तथा), स्वान् दोषान् न कथयन्ति, (एभिः सह ते) सन्तः, अपि अपवादः एव सुलभः गुणः (तु) दूरतः एव।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – क्रुद्ध वादी-प्रतिवादी सत्य को छिपाकर असत्य अभियोग उपस्थित करते हैं, सज्जन लोग भी अपने दोष को स्वीकार नहीं करते हैं, अतः ऐसे लोगों के साथ वे भी भ्रष्ट हो जाते हैं वादी और प्रतिवादी दोनो ही पक्षों से दूषित हो जाते हैं। संक्षेप मे न्यायाधीश को अपयश ही सुलभ है, यश तो दूर ही रहा।

टिप्पणी – दूरीकृता = दूर+च्वि+कृ+क्त, उदाहरन्ति = उत् +आङ्+लट्।

प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिंग अलंकार और शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

शास्त्रज्ञः कपटानुसारकुशलो वक्ता न च क्रोधन–

स्तुल्यो मित्रपरस्वकेषु चरितं दृष्ट्वैव दत्तोत्तरः।

क्लीबान्पालयिता शठान्व्यथयिता धर्म्यो न लोभान्वितो

द्वार्भावे परतत्त्वबद्धहृदयो राज्ञश्च कोपापहः।।5।।

अन्वयः – शास्त्रज्ञः कपटानुसारकुशलः वक्ता न च क्रोधनः मित्रपरस्वकेषु तुल्य चरितम् दृ ष्ट्वा, एव दत्तोतर क्लीबान् पालियिता शठान व्यथयिता धर्म्यः, न लोभान्वितः द्वार्भावे परतत्वबद्धहृदयः च राज्ञः कोपापहः (भवेत्)।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में अधिकरणिक के द्वारा न्यायाधीश के गुणों का विवेचन किया गया है।

अर्थ – शास्त्रों का ज्ञाता, वादी प्रतिवादी के कपट को समझने मे दक्ष, वक्ता एवं क्रोधरहित होना चाहिये, मित्र, शत्रु एवं अपने लोगों मे समान दृष्टि रखने वाला, व्यवहार को देखकर ही उत्तर देने वाला, दुर्बलों का रक्षक, धूर्तों को दण्ड देने वाला, धार्मिक, लोभरहित, उपाय रहते दूसरों की बातों को जानने में दत्तचित्त एवं राजा के कोप को नष्ट करने वाला होना चाहिये।

टिप्पणी – शास्त्रज्ञः = शास्त्र+ज्ञा+क ''अतोऽनुपसर्गे कः'' सूत्र से, पालयिता = पाल्+णिच्+तृन्, धर्म्याः = धर्म्य+यत्, कोपापहः = कोप+अप+हन्+ड ''अपेक्लेशतमसोः' सूत्र से, व्यथयिता = व्यथ्+णिच्+तृन्।

प्रस्तुत श्लोक में शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

ज्ञातो हि किं न खलु बन्धनविप्रयुक्तो

मार्गागतः प्रवहणेन मयापनीतः।

चारेक्षणस्य नृपतेः श्रुतिमागतो वा

येनाहमेवमभियुक्त इव प्रयामि।।9।।

अन्वयः – बन्धनविप्रयुक्तः मार्गागतः सः मया प्रवहेण अपनीतः, किम् नु खलु चारेक्षणस्य नृपतेः ज्ञातः वा, श्रुतिम् आगतः येन अहम् अभियुक्तः इव एवम् प्रयामि।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में शोधनक के साथ चारुदत्त के न्यायालय में प्रवेश करने का वर्णन है।

अर्थ – बन्धन से मुक्त होकर आर्यक रास्ते से मेरे पास आया और मैंने अपनी गाड़ी से दूसरे स्थान पर पहुँचा दिया क्या राजा ने अपने गुप्तचर रूपी नेत्रों से देखा है अथवा किसी ने उन्हें इसकी सूचना दी है जिससे मैं एक अपराधी की तरह कचहरी मे पेश किया जा रहा हूँ।

टिप्पणी – चारेक्षणस्य = चारः इव ईक्षणम् यस्य तादृशस्य, विप्रयुक्तः = वि+प्र+युज्+क्त, अभियुक्तः = अभि+युज्+क्त, प्रयामि = प्र+य+लट् (उ.पु.ए.व.)

प्रस्तुत श्लोक में 'चारेक्षणस्य' पद में रूपक अलंकार तथा 'अभियुक्त इव' पद में उपमा अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – "**उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः**" अर्थात् जिस छन्द में तगण, भगण, जगण और दो गुरु वर्ण हों वहाँ वसन्ततिलका छन्द होता है।

शुष्कवृक्षस्थितो ध्वाङ्क्ष आदित्याभिमुखस्तथा।

मयि चोदयते वामं चक्षुर्घोरमसंशयम्।।11।।

अन्वयः – शुष्कवृक्षस्थितः तथा आदित्याभिमुखः ध्वाङ्क्षः मयि वामम् चक्षुः चोदयते, असंशयम् घोरम् (वर्तते)।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में शोधनक के साथ न्यायालय मे प्रवेश करते हुए कौवे को देखकर किसी अनहोनी की आशंका करते हुए चारुदत्त के कथन का वर्णन है –

अर्थ – सूखे वृक्ष पर बैठा हुआ तथा सूर्याभिमुख कौआ मुझ पर वाम नेत्र डाल रहा है, निःसन्देह कोई विपत्ति आने वाली है।

टिप्पणी – चोदयते = चुद्+णिच्+लट्, ध्वाङ्क्षः = ध्वङ्क्ष्+अच्, स्थितः = स्था+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – "**युजोश्चतुर्थतो जेन, पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम्।**" अर्थात् अनुष्टुप् छन्द में चतुर्थ वर्ण के अनन्तर जगण होने से पथ्यावक्त्र नामक छन्द होता है।

सव्यं मे स्पन्दते चक्षुर्विरौति वायसस्तथा।

पन्थाः सर्पेण रुद्धोऽयं स्वस्ति चास्मासु दैवतः।।15।।

अन्वयः – मे सव्यम् चक्षुः स्पन्दते, तथा वायसः विरौति, अयम् पन्थाः सर्पेण रुद्धः, अस्मासु दैवतः स्वस्ति।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में प्रवेश करते हुए चारुदत्त के द्वारा दूसरे अपशगुन का वर्णन किया गया है।

अर्थ – मेरी बांयी आँख फड़क रही है कौवा काँव-काँव कर रहा है, मार्ग सर्प से अवरुद्ध हो गया है अब भाग्य ही रक्षक है।

टिप्पणी – दैवतः = दैवः+तस् पञ्चम्यर्थे अथवा 'दैवतानि पुंसि वा' से दैवतः प्रथमान्त पद है जिसका अर्थ होगा देवता कल्याण करेंगे। देव+तल् ततः 'प्रज्ञादिभ्यश्य' सूत्र से स्वार्थिकोऽण् = दैवतः।

प्रस्तुत श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है।

घोणोन्नतं मुखमपाङ्गविशालनेत्रं

नैतद्धि भाजनमकारणदूषणानाम्।

नागेषु गोषु तुरगेषु तथा नरेषु

नह्याकृतिः सुसदृशं विजहाति वृत्तम।।16।।

अन्वयः – घोणोन्नतम् अपाङ्गविशालनेत्रम् एतत् मुखम् हि अकारणदूषणानाम् भाजनम् न, (भवितुं शक्नोति) नागेषु, गोषु, तुरगेषु तथा नरेषु, आकृतिः, सुसदृशं वृत्तं नहि विजहाति।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में चारुदत्त को देखकर अधिकरणिक के द्वारा उसकी आकृति वर्णन करते हुए उसके निर्दोष होने का कथन किया गया है।

अर्थ – ऊँची नासिका और विशाल नेत्रों से आकर्षक आकृति वाला यह पुरुष (चारुदत्त) अकारण ही किसी के दोषारोपण का पात्र नहीं हो सकता है हाथी, गाय, घोड़े और मानव के गुण आकृति के अनुरूप होते हैं।

टिप्पणी – आकृति = आ+कृ+क्तिन्, उन्नतम् = उत्+नम्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है। 'नरेषु' इस प्रस्तुत के साथ अप्रस्तुत 'गजों' का वृत्त रूप एक धर्म सम्बन्ध होने से दीपक अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलका छन्द है।

तुलनं चाद्रिराजस्य समुद्रस्य च तारणमई

ग्रहणं चानिलस्येव चारुदत्तस्य दूषणम्।।20।।

अन्वयः – चारुदत्तस्य दूषणम् अद्रिराजस्य तुलनं, समुद्रस्य तारणम् अनिलस्य ग्रहणमिव वर्तते।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में अधिकरणिक के द्वारा चारुदत्त के लिये इस कथन का वर्णन किया गया है कि उस पर दोष लगाना उसी तरह बेकार है जैसे हवा को मुट्ठी मे पकड़ना।

अर्थ – चारुदत्त का दोष दिखाना हिमालय को तौलने के समान, सागर को तैर कर पार करने के समान एवं वायु को पकड़ने के समान है।

टिप्पणी – अद्रिराजस्य = अद्रीणां राजा तस्य 'राजाहः सखिभ्यष्टच्' से टच् प्रत्यय, तारणम् = तृ+णिच्+ल्युट्, दूषणम् = दुष्+ल्युट्।

प्रस्तुत पद्य में मालोपमा अलंकार है। यहाँ पथ्याक्त्र छन्द है।

यथैव पुष्पं प्रथमे विकाशे समेत्य पातुं मधुपाः पतन्ति।

एवं मनुष्यस्य विपत्तिकाले छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति।।26।।

अन्वयः – यथैव प्रथमे विकाशे पुष्पं पातुं मधुपाः समेत्य पतन्ति, एवं मनुष्यस्य विपत्तिकाले छिद्रेषु अनर्थाः बहुलीभवन्ति।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में चारुदत्त के द्वारा जब मनुष्य पर विपत्ति आती है सारे अनिष्ट एक साथ जुड जाते हैं, इस कथन का वर्णन किया गया है।

अर्थ – प्रथम विकास के समय पुष्पों का रस पान करने के लिये जैसे भ्रमर समूह मे एक साथ आ गिरते हैं उसी प्रकार मनुष्य की विपत्ति के समय भूल (दोष) पाकर, अनिष्ट एकत्र हो जाते हैं।

टिप्पणी – समेत्य = सम+इ+क्त्वा, विकाश = वि+कश्+घञ्

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ उपजाति छन्द है।

26.3 दशम अंक

प्रिय विद्यार्थियों! इकाई के इस अंश में आप मृच्छकटिक प्रकरण के दशम अंक की कथावस्तु एवं दशम अंक से चयनित श्लोकों का अध्ययन करेंगे।

26.3.1 दशम अंक की कथावस्तु

दशम अंक में दो चाण्डालों द्वारा अनुगत आर्य चारुदत्त प्रवेश करते हैं। वे चारुदत्त को वधस्थान पर ले जाते हैं। चारुदत्त उनसे प्रार्थना करता है कि मुझे अपने पुत्र को देख लेने दो। दोनों चाण्डाल कहते हैं ऐसा कर लीजिए। विदूषक बालक को लेकर प्रवेश करता है। चारुदत्त विदूषक और पुत्र से मिलता है तथा पुत्र को यज्ञोपवीत देता है। तब स्थावरक प्रवेश करता है। वह बताता है कि प्रवहण परिवर्तन के कारण मेरे द्वारा वसन्तसेना पुष्करण्डक उद्यान में ले जाई गई जहाँ मेरे स्वामी शकार ने भुजापाश से उसे बलपूर्वक मार दिया। शकार भी स्थावरक और चेट को प्रासाद में ना पाकर वधस्थान की ओर जाता है। जहाँ चेट, शकार और दोनों चाण्डालों के मध्य वार्तालाप होता है। चेट वहाँ से निकल जाता है।

चाण्डाल चारुदत्त के वध की घोषण करते हैं तभी भिक्षु के साथ वसन्तसेना प्रवेश करती है। भिक्षु वसन्तसेना से पूछता है कि आपको कहाँ ले चलूँ। इस पर वह कहती है आर्य चारुदत्त के घर। राजमार्ग पर कोलाहल सुनकर वसनतसेना भिक्षु से पता लगाने के लिए कहती है। भिक्षु पता करके बताता है कि उपासिके, तुम्हें चारुदत्त ने मार दिया है इसलिए चारुदत को मारने के लिए ले जाया जा रहा है। वसन्तसेना कहती है कि आर्यजनों ऐसा न कीजिए। यह मैं मन्दभगिनी हूँ जिसके कारण आर्य मारे जा रहे हैं। चाण्डाल इस समाचार को राजा से बताने के लिए निकल जाते हैं। शकार भी भयभीत होकर भाग जाता है। चारुदत्त, वसन्तसेना और भिक्षु के मध्य वार्तालाप होता है तभी सूचना मिलती है कि पालक को मारकर आर्यक

राजा बन गया है और मैं शर्विलक चारुदत्त को मुक्त कराने आया हूँ। शर्विलक आकर चारुदत्त से समस्त वृतान्त निवेदित करता है। शकार को पकड़ लिया जाता है। वह चारुदत्त से कहता है, मेरी रक्षा करो। चारुदत्त शर्विलक से कहता है कि शरणागत शकार को मुक्त कर दो। नेपथ्य से धूता के अग्नि में प्रवेश करने की सूचना प्राप्त होती है। चारुदत्त धूता के पास पहुँचता है। धूता चारुदत्त को देखकर प्रसन्न हो जाती है। इसी घटना के साथ उपसंहार नामक दशम अंक की समाप्ति होती है।

26.3.2 दशम अंक से चयनित श्लोकों की व्याख्या– 9,13,14,15,16,23,25,49,56,60,61

इकाई के इस अंश में आप दशम अंक से चयनित श्लोकों का अन्वय, प्रसंग एवं अनुवाद प्रक्रिया का अध्ययन करेंगे।

न च रोदित्यन्तरिक्षं नैवानभ्रे पतति वज्रम्।

महिलासमूहमेघान्निपतति नयनाम्बु धाराभिः।।9।।

अन्वयः – न च अन्तरिक्षम् रोदति, नैव अनभ्रं वज्रं पतति, किन्तु महिलासमूहमेघात् नयनाम्बु धाराभिः निपतति।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में चारुदत्त को शूली पर चढ़ाने के लिये ले जाते हुए चाण्डाल के द्वारा तत्कालीन वातावरण का वर्णन किया गया है।

अर्थ – न तो आकाश रो रहा है और न बिना मेघ के वज्र ही गिर रहा है ये तो नगर की महिलाओं के आँसू रूपी मेघ बरस रहे हैं।

टिप्पणी – अनभ्रम् – नास्ति अभ्रं यत्र तद् अनभ्रम्।

प्रस्तुत श्लोक में रूपक अलंकार है। यहाँ उपगीति छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'आर्या प्रथमार्धसं यस्याः परार्धमीरिता गीतिः।'** यह एक प्रकार का आर्या छन्द ही है। अन्तर यह है कि इसके अन्तिम चरण में 15के स्थान पर 18 मात्रायें होती हैं।

शशिविमलमयूखशुभ्रदन्ति सुरुचिरविद्रुमसन्निभाधरौष्ठि।

त्व वदनभवामृतं निपीय कथमवशो ह्ययशोविषं पिबामि।।13।।

अन्वयः – शशिविमलमयूखशुभ्रवदन्ति, सुरुचिरविद्रुमसन्निभाधरोष्ठि, तव वदनभवामृतम् निपीय, (अधुना) अवशः अयशोविषं कथम् पिबामि?

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में चारुदत्त आर्त हृदय से वसन्तसेना का स्मरण करते हुए कहता है –

अर्थ – हे चन्द्रमा की निर्मल किरणों के समान श्वेत दाँतों वाली, अत्यन्त सुन्दर मूँगे के समान वसन्तसेना, तुम्हारे मुख से उत्पन्न अमृत का पान कर पराधीन हुआ मैं अपयश रूपी विष कैसे पी रहा हूँ?

टिप्पणी – शशिविमलमयूखशुभ्रदन्ति = शशिनः विमलाः मयूखाः तद्वत शुभ्राः दन्ताः, अधरोष्ठम् = अधरश्च ओष्ठश्च (द्वन्द्व समास)।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा, रूपक एवं विषम अलंकार है। यहाँ पुष्पिताग्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा'** अर्थात् जिस छन्द के विषम चरणों में दो नगण, एक रगण तथा एक यगण हो और सम चरणों में नगण, दो जगण तथा रगण हो उसके आगे एक गुरुवर्ण हो, वहाँ पुष्पिताग्रा छन्द होता है।

एष गुणरत्ननिधिः सज्जनदुःखानामुत्तरणसेतुः।

असुवर्णं मण्डनकमपनीयतेऽद्य नगरीतः।। 14।।

अन्वयः – गुणरत्ननिधिः सज्जनदुःखानाम् उत्तरेणसेतुः, असुवर्णं मण्डनकम् एषः अद्यः नगरीतः अपनीयते।

प्रसंग – वधस्थल तक ले जाये जाते हुए शकार के लिये चाण्डाल कहता है

अर्थ – गुणरूपी रत्नों का भण्डार, सज्जनों को दुःखरूपी सागर को पार कराने मे सेतु के सदृश बिना सुवर्ण का आभूषण अब चारुदत्त आज नगर से दूर किया जा रहा है।

टिप्पणी – मण्डनकम् = मडि+ल्युट्+क (स्वार्थे), अपनीयते = अप+नी+यक्+लट् (कर्मवाच्य) प्रस्तुत श्लोक में गुणरत्ननिधिः, सज्जनदुःखानाम्, उत्तरेणसेतुः में रूपक अलंकार है। यहाँ गाथा छन्द है।

सर्वः खलु भवति लोके लोकः सुखसंस्थितानां चिन्तायुक्तः।

विनिपतितानां नराणां प्रियकारी दुर्लभो भवतिः।।15।।

अन्वयः – लोके सर्वः लोकः खलु सुखसंस्थितानाम् चिन्तायुक्तः भवति, विनिपातानां नराणाम् प्रियकारी दुर्लभः भवति।

प्रसंग – पूर्ववत्।

अर्थ – संसार मे सभी लोग सुखी व्यक्तियों के ही शुभचिन्तक होते हैं विपद्ग्रस्तों के शुभचिन्तक दुर्लभ होते हैं।

टिप्पणी – संस्थितः = सम्+स्था+क्त, विनिपतितः = वि+नि+पत्+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुत जन सामान्य से प्रस्तुत चारुदत्त रूप पुरुष विशेष की प्रतीति होने से अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। यहाँ गाथा छन्द है।

अमी हि वस्त्रान्तनिरुद्धवक्त्राः प्रयान्ति मे दूरतरं वयस्या।

परोऽपि बन्धुः समसंस्थितस्य मित्रं न कश्चिद्विषमस्थितस्य।।16।।

अन्वयः – अमी मे वयस्या वस्त्रान्तनिरुद्धवक्त्राः, हि दूरतरं प्रयान्ति, सुखसंस्थितस्य परः अपि बन्धुः (भवति किन्तु) विषम स्थितस्य कश्चित् मित्रम् न भवति।

प्रसंग – प्रस्तुत प्रसंग में चारुदत्त के उक्त कथन का वर्णन है कि विपत्ति आने पर अपने मित्र गण भी साथ नही देते हैं।

अर्थ – ये मित्रगण वस्त्र के आँचल मे मुँह छिपाये हुए बहुत दूर जा रहे हैं सुखी होने पर अनात्मीय गण भी बन्धु बन जाते हैं किन्तु विपत्ति अवस्था में स्थित मनुष्य का कोई मित्र नहीं होता है।

टिप्पणी – वयस्याः = वयसा तुल्याः वयस्याः, वयस्+यत् 'नौवयोधर्म' सूत्र से, निरुद्धः = नि+रुद्ध+क्त।

प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ उपेन्द्रवज्रा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – '**उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ**' अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण तथा दो गुरु वर्ण होते हैं वहाँ उपन्द्रवज्रा छन्द होता है।

इदं तत्स्नेहसर्वस्वं सममाढ्यदरिद्रयोः।

अचन्दनमनौशीरं हृदयस्यानुलेपनम्।।23।।

अन्वयः – इदं तत् स्नेहसर्वस्वम् आढ्यदरिद्रयोः समम् (तथा), अचन्दनम् अनौशीरं हृदयस्य अनुलेपनम् (अस्ति)।

प्रसंग – प्रस्तुत प्रसंग में चारुदत्त अश्रुयुक्त पुत्र को गले लगाकर कहता है –

अर्थ – यह वह स्नेह का सर्वस्व है जो धनी एवं निर्धन दोनों के लिये समान है तथा बिना चन्दन और खस के भी हृदय का सुखकर लेप है।

टिप्पणी – प्रस्तुत श्लोक में रूपक अलंकार और पथ्यावक्त्र छन्द है।

प्राप्तोऽहं व्यसनकृशां दशामनार्यां

यत्रेदं फलमपि जीवितावसानम्।

एषा च व्यथयति घोषणा मनो मे

श्रोतव्यं यदिदमसौ मया हतेति।।25।।

अन्वयः – अहं व्यसनकृशाम् अनार्यां दशां प्राप्तः, यत्र इदम् जीवितावसानं फलम् अपि (अस्ति), एषा घोषणा मे मनः व्यथयति, यत् इदं श्रोतव्यम् असौ मया हता इति।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में चारुदत्त अपने मन की व्यथा को व्यक्त करते हुए कहता है कि यह घोषणा मेरे मन को पीड़ीत कर रही है कि मैंने वसन्तसेना को मारा है।

अर्थ – मैं विपत्ति के कारण हीन एवं गर्हित अवस्था को प्राप्त हो गया हूँ जहाँ यह जीवन का समाप्ति रूप फल भी (मिलना है), यह घोषणा मेरे मन को पीड़ित करती है तो यह सुनना पड़ रहा है कि मैंने उस वसन्तसेना को मारा है।

टिप्पणी – व्यथयति = व्यथ्+णिच्+लट्।

प्रस्तुत श्लोक में प्रहर्षिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – **'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्'** अर्थात् जिस छन्द में मगण, नगण, रगण और अन्त में एक गुरुवर्ण क्रमशः आए वहाँ प्रहर्षिणी छन्द होता है। इसके तीसरे और दसवें वर्ण पर यति होती है।

कुतो बाष्पाम्बुधाराभिः स्नपयन्ती पयोधरौ।

मयि मृत्युवशं प्राप्ते विद्येव समुपागता।।42।।

अन्वयः – मयि मृत्युवशं प्राप्ते बाष्पाम्बुधाराभिः पयोधरौ स्नपयन्ती विद्या इव कुतः समागता।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में वसन्तसेना को देखकर चारुदत्त की हर्षाभिव्यक्ति का वर्णन किया गया है।

अर्थ – मेरे मृत्यु के वश में होने पर अश्रुजल की धाराओं से दोनों कुचों को अभिषिक्त करती हुई सञ्जीवनी विद्या की भाँति कहाँ से आ गयी?

टिप्पणी – स्नापयन्ती = स्ना+णिच्+पुक्+लट्, समागता = सम्+आ+गम्+क्त+टाप्, विद्या '

विद्या = विद्+क्यप्+टाप्।

प्रस्तुत श्लोक में 'विद्या इव' में उपमा अलंकार है। यहाँ पथ्यावक्त्र छन्द है।

न महीतलस्थितिसहानि भवच्चरितानि चारुचरिते यदपि।

उचितं तथापि परलोकसुखं न पतिव्रते तव विहाय पतिम्।।56।।

अन्वयः – हे चारुचरिते, यदपि भवच्चरितानि महीतलस्थितिसहानि न तथापि पतिव्रते, विहाय तव परलोकसुखं न उचितम्।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य मे चारुदत्त के द्वारा धूता को सती होने से रोकने का वर्णन है।

अर्थ – हे विशुद्ध चरित्र वाली यद्यपि तुम्हारा चरित्र इस पृथ्वीतल पर रहने योग्य नहीं है फिर भी हे पतिव्रते! पति को छोड़कर तुम्हें अकेले स्वर्ग का सुख भोगना उचित नहीं।

टिप्पणी – चरित = चर्+क्त, विहाय = वि+हा+क्त्वा।

प्रस्तुत श्लोक में परलोक सुख भोग के अनौचित्य के प्रति पतिव्रते पद का अर्थ कारण होने से काव्यलिंग अलंकार है। यहाँ प्रमिताक्षरा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – '**प्रमिताक्षरा सजससैः कथिता**' अर्थात् जिस छन्द में सगण, जगण और दो सगण क्रमशः हों वहाँ प्रमिताक्षरा छन्द होता है।

लब्धा चारित्रशुद्धिश्चरणनिपतितः शत्रुरप्येष मुक्तः

प्रोत्खातारातिमूलः प्रियसुहृदचलामार्यकः शास्ति राजा।

प्राप्ता भूयः प्रियेयं प्रियसुहृदि भवान्सङ्गतो मे वयस्यो

लभ्यं किं चातिरिक्तं यदपरमधुना प्रार्थयेऽहं भवन्तम्।।59।।

अन्वयः – चारित्रशुद्धिः लब्धा चरणनिपतितः एषः शत्रुः अपि मुक्तः। प्रोत्खातारातिमूलः प्रियसुहृदि, सङ्गतः भवान् मे प्रियवयस्यः। अतिरिक्तम् किं लभ्यं यत् अपरम् अहम् अधुना भवन्तं प्रार्थये।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य मे चारुदत्त की प्रिय प्राप्ति का वर्णन है।

अर्थ – आपने विशुद्ध चरित्र की निर्मलता फिर से प्राप्त कर ली है शरण मे आया हुआ शत्रु शकार फिर से मुक्त हो गया। शत्रुओं को उन्मीलित करके प्रियमित्र आर्यक राजा होकर पृथ्वी पर शासन कर रहे हैं। प्रियतमा वसन्तसेना फिर से मिल गयी। प्रिय मित्र आर्यक के सम्पर्क से तुम भी हमारे मित्र बन गये हो। इनके अतिरिक्त और कौन सी वह वस्तु है जिसे मैं पाने की इच्छा करूँ।

टिप्पणी – प्रोत्खातारातिमूलः = प्रोत्खाताम् अरातीनाम् मूलम् येन तादृशः, चारित्र्यम् = चरित्र+ष्यञ्, संगतः = सम्+गम्+क्त, लभ्यम् = लभ्+यत्।

प्रस्तुत श्लोक में प्रीति लाभ रूप कार्य के प्रति अनेक कारणों का उपन्यास करने से समुच्चय अलंकार है। चतुर्थ चरण के प्रति पूर्व के तीनों चरणों का अर्थ कारण होने से काव्यलिंग अलंकार है। यहाँ स्रग्धरा छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है – '**म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्** ' अर्थात् जिस छन्द में मगण, रगण, भगण, नगण तथा तीन यगण हों और तीन बार प्रति सातवें वर्ण पर यति हो, तो स्रग्धरा छन्द होता है।

कांश्चित्तुच्छयति प्रपूरयति वा कांश्चिन्नयत्युन्नतिं

कांश्चित्पातविधौ करोति च पुनः कांश्चिन्नयत्याकुलान्।

अन्योन्यं प्रतिपक्षसंहतिमिमां लोकस्थितिं बोधय–

न्नेष क्रीडति कूपयन्त्रघटिकान्यायप्रसक्तो विधिः।।60।।

अन्वयः – कूपयन्त्रघटिकान्यायप्रसक्तः एषः विधिः अन्योन्यं प्रतिपक्षसंहतिम् इमां लोकस्थितिं बोधयन् क्रीडति, (अयम्) कांश्चित् तुच्छयति वा कांश्चित् प्रपूरयति पातविधौ, कांश्चित् उन्नतिं नयति कांश्चित् पातविधौ करोति, पुनः कांश्चित् च आकुलान् नयति।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में चारुदत्त के इस कथन दैव मनुष्य को कहाँ से कहाँ ले जाती है का वर्णन किया गया है।

अर्थ – कूपयन्त्र की क्षुद्र घटी के अनुरसण में रत यह विधि, परस्पर विरोधियों की उन्नति अवनति के समष्टि रूप इस संसार की गति का बोध कराते हुए क्रीडा करता है इसी प्रकार किसी मनुष्य को निर्धन करके तुच्छकर देता है, किसी को धन आदि दे कर परिपूर्ण कर देता है, किसी को उन्नति प्रदान कर देता है, किसी को अधःपतित कर देता है, किसी को विविध दुर्घटना से व्याकुल कर देता है।

टिप्पणी – बोधयन् = बुध्+णिच्+शतृ, उन्नतिम् = उत्+नम्+क्तिन्, तुच्छयति = तुच्छ+णिच्। प्रस्तुत श्लोक में निदर्शना एवं दीपक अलंकार है। यहाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

क्षीरिण्यः सन्तु गावो भवतु वसुमती सर्वसंपन्नसस्या

पर्जन्यः कालवर्षी सकलजनमनोनन्दिनो वान्तु वाताः।

मोदन्तां जन्मभाजः सततमभिमता ब्राह्मणाः, सन्तु सन्तः

श्रीमन्तः पान्तु पृथ्वीं प्रशमितरिपवो धर्मनिष्ठाश्च भूपाः।।61।।

अन्वयः – गावः क्षीरिण्यः सन्तु। वसुमती सर्वसम्पन्नसस्या भवतु। पर्जन्यः कालवर्षी। सकलजनमनोनन्दिनः वाताः वान्तु। जन्मभाजः मोदन्ताम्। ब्राह्मणाः सततम् अभिमताः, (तथा) सन्तः, श्रीमन्तः प्रशमितरिपवः च धर्मनिष्ठ भूपाः पृथ्वीं पान्तु।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक भरतवाक्य है एवं सभी के लिये इसमें मंगलकामना की गयी है।

अर्थ – गायें दूधवाली हों, धरती सब प्रकार के धान्य से सम्पन्न हो, मेघ समय पर वर्षा करने वाले हों, सभी के मन को आनन्दित करने वाली हवा बहे, प्राणी सतत प्रसन्न हों, ब्राह्मण सर्वदा सबके प्रिय एवं सदाचारी हों, सम्पत्तिशाली एवं शत्रुओं के नाशक एवं धर्म में आदर रखने वाले नरेश पृथ्वी का पालन करें।

टिप्पणी – क्षीरिण्यः = प्रभूतं क्षीरमस्याः अस्तीति क्षीरिणी ताः क्षीरिण्यः, सम्पन्नसस्या = सम्पन्नानि च सस्यानि यस्यां तादृशी।

प्रस्तुत श्लोक में परिसंख्या अलंकार एवं स्रग्धरा छन्द है।

26.4 सारांश

इस इकाई में आपने नवम एवं दशम अंक की कथावस्तु का अध्ययन किया। आपने जाना कि शकार किस प्रकार वसन्तसेना की हत्या का आरोप चारुदत्त के ऊपर लगाकर न्यायालय पहुँचता है। न्यायालय में वह अपने शठतापूर्ण कार्यों से चारुदत्त के खिलाफ पर्याप्त प्रमाण प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त कर लेता है परिणामस्वरूप चारुदत्त वधस्थान लाया जाता है। चारुदत्त को शूली पर चढाये जाने पर चाण्डल के हाथ से तलवार गिर जाती है जो उसके दीर्घायु होने की सूचना देती है। स्थावरक आकर चारुदत्त की निर्दोषता सिद्ध करने की कोशिश करता है किन्तु शकार उसके इस प्रयत्न को निष्फल कर देता है। अन्त में भिक्षु और वसन्तसेना पहुँचकर चारुदत्त के प्राण की रक्षा करते हैं। उधर धूता पति वियोग में सती होने जाती है। चारुदत्त जाकर उसको ऐसा करने से रोकता है। आर्यक राजा बन जाता है। सभी को अपना-अपना दायित्व मिल जाता है और प्रकरण की सुखान्त समाप्ति होती है। इस इकाई में आपने नवम एवं दशम अंक के चयनित श्लोकों का अन्वय एवं अर्थ करने की प्रक्रिया का भी अध्ययन किया तथा उन श्लोकों से सम्बन्धित विशिष्ट पक्षों के विषय में भी ज्ञान प्राप्त किया।

26.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1969

- शूद्रक का मृच्छकटिकः एक आलोचनात्मक अध्ययन – डॉ. विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 1999
- मृच्छकटिकम्, महाकवि शूद्रक – डॉ. रमाशंकर राय, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, 1997
- संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास – प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, 2018

26.6 अभ्यास प्रश्न

1 नवम अङ्क की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।

2 '**घोणोन्नतं मुखमपाङ्गविशालनेत्रं**' श्लोक का अनुवाद कीजिए।

3 दशम अङ्क की कथावस्तु संक्षेप मे लिखिए।

4 'लब्धा चारित्रशुद्धिश्चरणनिपतितः शत्रुरप्येष मुक्तः' श्लोक की व्याख्या कीजिए